विषय-सूची

—:०:—

परिशिष्ट-भाग

तीसरे संस्करण की भूमिका

'सुहागरात' या 'बहूरानी को सीख' का दूसरा संस्करण, जो बारह हज़ार प्रतियों का छपा था, सन् १९३९ में ही समाप्त हो गया था। उसके बाद मैं नज़रबन्द कर दिया गया और पूज्य पिता जी के स्वर्गारोहण के समय पेरोल पर छूट कर आया तो मेरा अधिक दिनों तक जेल से बाहर रह सकना इतना अनिश्चित था कि मैने 'अभ्युदय', अभ्युदय प्रेस, तथा अपनी समस्त प्रकाशित पुस्तकों की बिक्री इत्यादि का सारा भार सुप्रसिद्ध स्थानीय फर्म 'इंडियन प्रेस प्रयाग' को सौंप दिया था। कागज़ की कमी और छपाई इत्यादि का समुचित प्रबंध न हो सकने के कारण सुहागरात का तीसरा संस्करण मांग और इच्छा रहते हुये भी इससे पहले मैं प्रकाशित नहीं कर सका। इसका मुझे दुःख है। अब मौक़ा मिला है तो 'सुहागरात' के तीनों भागों को मैं फिर से प्रकाशित कर रहा हूँ। पुस्तकें जल्दी में छपी हैं और यत्र-तत्र उनमें भूलें रह जाना संभव है किन्तु हमारा विश्वास है कि पाठक उदारतापूर्वक उन भूलों को दृष्टिगोचर कर देंगे। द्वितीय संस्करण होने के बाद सुहागरात के उर्दू, गुरुमुखी, गुजराती, इत्यादि देशी भाषाओं में अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। पुस्तक की उपयोगिता का यह ज्वलन्त प्रमाण है। पुस्तक की उपयोगिता आज भी वैसी है जैसी आज से पहले थी इसमें मुझे सन्देह नहीं।

'सुहागरात' के द्वितीय संस्करण का मूल्य चार रुपये था। वर्तमान काल को देखते हुये उसके मूल्य में एक रुपये की वृद्धि कुछ भी नहीं है फिर भी इस मूल्य वृद्धि के लिए हम पाठकों से क्षमा प्रार्थी हैं। इन थोड़े से शब्दों के साथ मैं 'सुहागरात' की यह पुस्तक पाठकों के हाथों में सप्रेम समर्पित करता हूँ।

भारती भवन
प्रयाग
२०-१०-४५

पद्मकान्त मालवीय

दूसरे संस्करण की भूमिका

"सुहागरात" का दूसरा संस्करण लेकर उपस्थित होने में हमको बहुत प्रसन्नता है। हिन्दी-जगत में कदाचित ही किसी अन्य पुस्तक का प्रथम संकरण इतनी जल्दी बिका हो। प्रायः २५ या २६ दिन में सुहागरात का प्रथम संस्करण बिक गया था। हम इसे हिन्दी भाषा-भाषियों की अपने ऊपर महती कृपा ही समझते हैं।

पुस्तक विकी ही नहीं, पुस्तक को हिन्दी, अङ्गरेजी और संस्कृत के विद्वानों ने पसन्द किया, प्रसन्नता का विशेष और प्रधान कारण यह है। मातृ-भाषा के प्रेमियों को भी यह सुन कर प्रसन्नता होगी कि य असंभव नहीं कि "सुहागरात" का अन्य भाषाओं में भाषान्तर शीघ्र ही प्रकाशित हो जाय। उर्दू और गुजराती के संस्करण अब तक में प्रकाशित भी हो चुके होते किन्तु हमने ही, सब बातों के तय होजाने पर भी प्रथम संस्करण के भाषान्तर की अनुमति नहीं दी क्योंकि इसमें कुछ बढ़ाना घटाना पहिले ही से अभीष्ट था। पुस्तक बहुत ही जल्दी लिखी और छापी गई थी, ऐसी दशा में त्रुटियां उसमें थीं। भाषान्तर हम त्रुटियों से दूर ही देखना चाहते थे, क्योंकि हमारी कामना यह थी कि पुस्तक अन्य भाषा-भाषियों के सामने ऐसे सुन्दर रूप में उपस्थित की जाय कि उनके हृदय में हिन्दी के लिए मान हो और वह जानें की किस तेज़ी से हिन्दी उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रही है। हमको यह सब फिक्र इस लिए भी थी क्योंकि हिन्दी की आधुनिक पुस्तकों में कदाचित "सुहागरात" ही प्रथम पुस्तक है जिसके भाषान्तर के लिए इतने अन्य भाषा भाषी लालायित हों; मातृभाषा के लिए यह गौरव की बात है और मातृ-भाषा के गौरव के लिए प्रत्येक

हिन्दी भाषाभाषी का अधिक से अधिक प्रयत्नशील होना कर्तव्य ही है।

पुस्तक की विद्वान समालोचकों द्वारा की गई समालोचनाओं के लिए हम विशेष रूप से कृतज्ञ हैं। कविवर, हमारे स्नेही मित्र पं० गयाप्रसाद जी शुक्ल "सनेही" ने, "वर्तमान" के द्वारा हिन्दी जगत में सब से पहिले, स्नेह से सने उदार शब्दों में अपनी सम्मति प्रकट की। तदनन्तर काशी के प्रसिद्ध दैनिक "आज" ने अपनी सारगर्भित आलोचना प्रकाशित की। अङ्गरेजी के प्रसिद्ध दैनिक 'लीडर" में तो "सुहागरात" के सम्बन्ध में अनेक लेख प्रकाशित हुए। "लीडर" ने "सुहागरात" के सम्बन्ध में एक सम्पादकीय नोट भी लिखा। दिल्ली के प्रसिद्ध दैनिक "हिन्दुस्तान टाइम्स" और कलकत्ते के प्रसिद्ध मासिक "माडर्न रिव्यू" और उड़ीसा की "बैतरनी" ने भी पुस्तक की बहुत प्रशंसा की। उर्दू-जगत में दैनिक "मिलाप," "बन्दे मातरम्" साप्ताहिक "कर्मवीर," मासिक "ज़माने" ने भी पुस्तक को बहुत उपयोगी बतलाया। अनन्तर प्रसिद्ध साप्ताहिकों में "प्रताप" "पीपिल", "श्रीकृष्ण संदेश," "मतवाला" और "तरुण राज-स्थान" और मासिक पत्रिकाओं में "माधुरी", "सुधा", "सरस्वती", "विशाल भारत", "ज्योति", "स्त्रीदर्पण" आदि ने भी पुस्तक को शिक्षाप्रद बतलाया। इन सब पत्रों और पत्रिकाओं ने जो दोष बतलाये उनको इस संस्करण में दूर करने की हमने चेष्टा की है। खेद यही है कि "मर्दुए" शब्द का बायकाट हम नहीं कर सके क्योंकि इसके सम्बन्ध में कुछ विद्वान समालोचकों से हम सहमत नहीं। हमें इस बात का भी खेद है कि पुस्तक के नामकरण के सम्बन्ध में भी हम कुछ विद्वान समालोचकों की आज्ञा का पालन नहीं कर सके।

"सुहागरात" नाम रखने का एक कारण है। "मनोरमा के पत्र या पतियों की सीख" नाम की हमारी पुस्तक जो पहिले लिखी गई थी,

पहिले छप कर भी तैयार नहीं हुई थी। यदि यह पुस्तक पहिले प्रकाशित हुई होती और इसकी भूमिका में मित्रों ने हमारे "सुहागरात" सम्बन्धी विचारों को पढ़ लिया होता तो कदाचित "सुहागरात" शब्द से वह इतना असन्तुष्ट न होते और "सुहागरात" शब्द ही में उनको शील की कमी न दिखाई देती। "बहूरानी को सीख" को "सुहागरात" का नाम देने में हमारा उद्देश्य यह था कि "सुहागरात" शब्द कम से कम पवित्र हो जाय, उसकी कालिमा धुल जाय, उसके साथ जो भावनाएं सन्नद्ध हैं वे दूर हो जांय, शब्द का व्यवहार बिना किसी बुरी भावना के होने लगे और धीरे धीरे "सुहागरात" की अपवित्रता दूर हो कर वह शुद्ध, पवित्र और वास्तव में सौभाग्य की रात्रि हो जाय। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए सरल उपाय यही था कि पुस्तक का नाम "सुहागरात" रखा जाय। इस तरह से पुस्तक का नाम लेते हुए पिता पुत्री से, भाई भगनी से, इस शब्द का व्यवहार कर सकता है। इस तरह से पुस्तक की चर्चा के साथ ही साथ, शब्द की पवित्रता की वृद्धि होगी और संभव है इस तरह से हमारे उद्देश्य की सिद्धि हो।

निजू पत्रों में मित्रों ने अधिक स्वतंत्रता के साथ अपना मत पुस्तक के सम्बन्ध में प्रकट किया था, क्योंकि हमारा अपने मित्रों से अनुरोध था कि पुस्तक की विशेषताओं की ओर ध्यान न देकर, उसकी त्रुटियों को हमको बतलाने की वे विशेष कृपा करें, जिससे हम दूसरे सस्करण में पुस्तक को अधिक उपयोगी बना सकें। इनमें अधिकतर मित्र ऐसे थे जो अङ्गरेजी के अच्छे विद्वान हैं और ऊंचे ऊंचे पदों को इस समय सुशोभित कर रहे हैं। इनमें से अनेक यूरोप और अमरीका की भी सैर कर आये हैं और अधिकतर ने इस विषय के ग्रन्थों का अच्छा अध्ययन किया है।

इन मित्रों को पुस्तक के सम्बन्ध में तीन शिकायतें थीं। प्रथम यह है कि पुस्तक (Conservative) विचारों की दृष्टि से पुरान

लीक पीटने वाली , द्वितीय यह कि इसमें सतीत्व सदृश (Superstition) मिथ्या विचार सम्बन्धी चर्चा ज़रूरी नहीं थी जब कि देश में यूं ही सतीत्व सतीत्व की अत्यधिक चर्चा है। तीसरी शिकायत इन मित्रों को यह थी कि पुस्तक में सन्तान-निग्रह के उपाय साफ़ साफ़ नहीं लिखे गए जब कि इनका लिखा जाना नितान्त आवश्यक है। एक ओर मित्रों की शिकायतें इस तरह की थीं दूसरी ओर हमारे कुछ अन्य आदरास्पद मित्र थे, जिनको यह शिकायत थी कि पुस्तक कई एक विषयों में अति की मात्रा के निकट पहुँच गई है; उदाहरणार्थ पर्दे के सम्बन्ध में।

अपने स्नेही और आदरास्पद मित्रों के स्नेहमय उलहनों का जवाब उपर्युक्त दो भिन्न प्रकार के उलहनों में ही मौजूद है। पुस्तक अपने ढंग की पहिली ही थी, वह लिखी गई थी उन गरीब मध्यम श्रेणी की देश की ललनाओं के लिए जो पंडिता नहीं और जिन्होंने कालेज या स्कूलों में शिक्षा नहीं पाई है, जो घरों की चहारदीवारी में कैद रही हैं और रहेंगी, साथ ही पुस्तक अपने ढंग की पहिली और (Elementary) प्राथमिक शिक्षा स्वरूप ही थी। पुस्तक उपयोगी हो, सच्ची शिक्षाओं में किसी तरह की कमी न हो, साथ ही वह ऐसी हो, जिसका प्रवेश प्रत्येक गृह में हो सके, पुस्तक लिखते समय इन बातों पर विशेष रूप से ध्यान रखा गया था। सब के ऊपर बात यह थी कि अपने विचारों में हम किसी तरह की भी काट छांट नहीं करना चाहते थे। पर्दे, खान-पान और "रजस्वला" सम्बन्धी छूतछात के हमारे विचार, हम समझते थे, हमारे कुछ मित्रों को पसन्द न आवेंगे, किन्तु हमको खेद है कि उनकी प्रसन्नता के अर्थ, अपनी समझ में हम जिसे सत्य समझते थे, उसकी हत्या नहीं कर सकते थे। किन्तु इन विचारों के संबन्ध में भी हमको हठ नहीं है, जिस समय हमारे मित्र हमको समझा देंगे कि ये विचार, देश, समाज तथा ललनाओं के लिए हानिकर सिद्ध होंगे, हम प्रसन्नतापूर्वक, आवश्यक काट

छाँट इनमें कर द ंगे। दूसरी पराकाष्ठा के उलहनों के संबन्ध में अपने मित्रों से हमारा निवेदन यही है कि अपने प्रायः बीस वर्ष के इस विषय के अध्ययन में जिस निष्कर्ष पर हम पहुँचे हैं, हमने उनको प्रकट कर दिया है, धर्म और सत्य को साक्षी रख कर। हमारा यह दावा नहीं कि वे ठीक ही हैं, हमारा निवेदन यह है कि हमारी समझ में वे ठीक हैं। पुस्तक (Conservative) पुराने विचारों की लीक पीटने वाली नहीं है। हम यह नहीं कहते कि विचार पुराने नहीं हैं, किन्तु हमारा निवेदन यह है, कि पुराने होते हुए भी वे बिल्कुल ताज़े भी हैं और महा उन्नतिशील पश्चिमीय विज्ञान और मस्तिष्क भी अब इनकी उपयोगिता को स्वीकार करने लगा है। यही नहीं वह भी हज़ारों खाई खड्डों में गिरते पड़ते, इन्हीं निष्कर्षों पर हमारी समझ में अब पहुँच रहा है या शीघ्र ही पहुँचने वाला है। साथ ही किसी बात का प्राचीन होना ही तो इस बात की दलील न होना चाहिए कि वह उचित नहीं है या हानिकर है। अपने मित्रों से सादर निवेदन हमारा यह भी है कि हम 'सतीत्व" को (Superstition) मिथ्या-धर्म नहीं समझते। कौमारित्व और "सतीत्व" दो भिन्न चीजें हैं। स्थूल कौमारित्व में कोई विशेषता न हो, विधवा- विवाह भी हो, और विवाह-विच्छेद भी हो, किन्तु वैवाहिक जीवन की दशा में पति अगर एक नारी व्रती और पत्नी सती न होगी, मनसा, वाचा, कर्मणा, तो वैवाहिक जीवन स्वर्गीय और स्वर्गसम नहीं होगा, !! नहीं होगा !!! और इस दशा में संसार की अन्य समस्याएँ हल होने के बजाय और भी विकट होती जायँगी इस संबन्ध में पशु-संसार का स्वप्न देखना ठीक नहीं। पशु संसार और मानव-संसार एक ही नीति और नियम से परिचालित नहीं हो सकते। मनुष्य, मनुष्य होते हुए पशुओं के समान आचरण नहीं कर सकते और कभी कर सकेंगे भी नहीं।

"सतीत्व" मिथ्याधर्म (Superstition) है और ज़रूर है यूरोप और विशेष कर अमरीका के लिए। वहां की वर्तमान स्थिति को

देखते हुए "सतीत्व" को वहां महत्व प्रदान करना, या किसी तरह से नैतिक-भूल को पाप समझ लेना भयावह होगा, अमरीका में निस्सन्देह ही सतीत्व ही नहीं कौमारित्व का भी ख्याल मिथ्याधर्म (Superstition) या (old prejudice) दकियानूसी ख्याल के समान हो सकता है किन्तु भारत की स्थिति दूसरी है और उसकी आवश्यकताएं दूसरी हैं। रोग के अनुकूल ही इलाज भी होना चाहिए, संसार के समस्त रोगों की एक ही महौषधि नहीं हो सकती।

सन्तान-निग्रह सम्बन्धी, अपने मित्रों के, उलहनों को हम अनेक अंशों में ठीक समझते हैं। हमारा विश्वास तो यह है कि यदि सन्तान-निग्रह संबन्धी उपायों का अच्छा ज्ञान प्रत्येक विवाहिता स्त्री और पुरुष को हो जाय और बच्चों को पैदा करना या न करना उनके ही अधीन कर दिया जाय तो आज दिन की वैवाहिक-जीवन की अनेक कठिनाइयां दूर हो जायेंगी, साथ ही संसार केवल दुःखों का ही स्थल नहीं रह जायगा। हमारा कहना यह भी है कि अगर शासन शक्ति हमारे हाथों में होती और कानून बनाने का अधिकार हमारे हाथों होता तो हम यह नियम बना देते कि जब तक एक बालिका किसी लेडी डाक्टर से यह सार्टीफिकेट प्राप्त न कर ले कि वह उपायों का उपयोग भले प्रकार कर सकती है और युवक किसी डाक्टर से यह सार्टीफिकेट न प्राप्त कर ले कि वह विवाह के लिए पूर्ण रूप से उपयुक्त है, उनका विवाह न होने दिया जाय। यही नहीं हम यह भी करते कि माता पिताओं के लिए भी हम रति विषयक स्वास्थ्य Sexual Hygiene और शिशुपालन की शिक्षा अनिवार्य रूप से आवश्यक कर देते, किन्तु केवल इच्छा मात्र से कुछ हो नहीं सकता।

अपनी समझ में, इशारे स्वरूप में, इसीलिए हमने सन्तान-निग्रह की चर्चा की थी, किन्तु यह सब होते हुए भी हमारा निवेदन यही है कि जो हमने उस समय लिखा था, इस समय भी हमारे विचार वही हैं। हम संयम को अब भी सर्व-श्रेष्ठ समझते हैं। इसके बाद हमारी

समक्ष में इस समय भी सन्तान-निग्रह के उपायों में हमारे प्राचीन आचार्यों ने जो उपाय बतलाए हैं, उनका ही दूसरा नंबर है। कहने की बात नहीं है किन्तु सच्ची बात यह है कि पश्चमीय यांत्रिक उपायों से पति पत्नी के संसर्ग के उद्देश्य की ही कुछ अंशों में हत्या हो जाती है। पति पत्नी के सहयोग, और संसर्ग का अर्थ केवल पुत्रोत्पादन ही नहीं है। इसका एक और बहुत महत्वपूर्ण उद्देश्य है शारीरिक सम्पर्क (Physical contact) यांत्रिक उपायों के उपयोग से इसकी हत्या हो जाती है और वह रही नहीं जाता। हमारा निवेदन यह है कि स्त्री और पुरुष की शारीरिक और मानसिक अभिवृद्धि के लिए (Pysical contact) शारीरिक सम्पर्क ज़रूरी है। हम तो बड़े पंडित नहीं किन्तु प्राणिशास्त्र-विशारदों का कहना है कि पति पत्नी के शारीरिक सम्पर्क से एक के शरीर से दूसरे के शरीर में कुछ विशेष विभूतियों का प्रवेश होता है जो मानवी शारीरिक और मानसिक अभिवृद्धि के लिए नितान्त आश्यक है। यांत्रिक उपायों के उपयोग से यह विभूतियां का प्रवेश कुछ अंशों में असंभव हो जाता है। यह न भी हो तब भी पति पत्नी के संसर्ग के सुख में एक ख़ास विशेषता है और यांत्रिक उपायो के उपयोग से इस विशेषता का अनुभव असंभव है। पश्चिम ने अभी इस विषय के विज्ञान और कला में कदाचित पूर्वीय के समान विशेषता नहीं प्राप्त की है, इसीलिए उसको इन बातों का पता ही नहीं है, नहीं तो शायद उपायों को सोचते समय वह इस बात पर ध्यान रखता कि विशेषताओं का ह्रास न होने पाये। प्राचीन आचार्यों ने अपने उपायों में दोनों ही उद्देश्यों को ध्यान में रखा था और इसीलिए यांत्रिक उपायों पर निभर न रह कर उन लोगों ने बुद्धि की कुशलता को आदर का स्थान दिया था। यह सब न भी हो तो भी केवल पाशविक जोश की शान्ति से तो संयम कहीं अच्छा और फलप्रद है। किन्तु इन बातों का अर्थ यह नहीं है कि हम सन्तान-निग्रह के यांत्रिक उपायों के किसी तरह से भी विरोधी हैं। यह परमावश्यक और परमोपयोगी हैं और जो

प्राचीन आचार्यों के मत से लाभ न उठा सकें उनके लिए यह परमावश्यक है कि वे यांत्रिक उपायों का उपयोग जरूर करें क्योंकि हृष्ट पुष्ट सुन्दर सजीव और दीर्घजीवी बच्चों को जन्म देने के लिए, देश की दरिद्रता को दूर करने के लिए, मृत्युसंख्या को कम करने के लिए, जीवितों को दीर्घजीवी बनाने के लिए और स्त्रियों को पूर्ण विकास प्राप्त करने के अर्थ अवकाश देने के लिए सन्तान-निग्रह के उपायों का प्रयोग नितान्त ज़रूरी है। उपाय कौन सा हो यह लेडी डाक्टर और इस संबन्ध की अनेक पुस्तकों की सहायता से ही जानना चाहिए। इससे अधिक इस समय भी हम कुछ नहीं कह सकते और आशा है हमारे मित्र हमारी असमर्थता के लिए हमेशा क्षमा कर देंगे। हां, सन्तान -निग्रह का शीर्षक दे अगर, कभी कोई पुस्तक लिखने का हमको अवसर मिला तो हम ज़रूर उपायों का जिक्र भी करेंगे, उनको बतलायेंगे भी और उनकी पारस्परिक उपयोगिता पर अपने (comparative usefulness) विचार भी उपस्थित करेंगे।

समालोचनाओं के संबन्ध में एक दो बात हम और निवेदन कर देना चाहते हैं। कुछ विद्वान समालोचक, हिन्दी के प्रेमी, उर्दू या अङ्गरेजी के शब्दो के प्रयोग से घबरा जाते है और उनको इन प्रयोगों में हिन्दी की हत्या ही दिखाई देती है। हमारा निवेदन उनसे यह है कि हिंन्दी का प्रेम उनका सराहनीय और अनुकरणीय है और समस्त हिन्दी लेखकों को हिन्दी की पवित्रता का ध्यान रखना चाहिये किन्तु इसके साथ ही हमको यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि हिन्दी की पवित्रता के अत्यधिक प्रेम के कारण हम हिन्दी की उपयोगिता, सार्थकता और वृद्धि के मार्ग में रोड़े तो नहीं अटका रहे हैं। हमको यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि यदि हम शुद्धि के द्वारा अन्य धर्मावलम्बियों को हिन्दू बना सकते हैं तो अन्य भाषा के शब्दों को जो, चालू सिक्का स्वरूप हों हम हिन्दी का शब्द भी बना सकते हैं और हिन्दी में उनका प्रयोग भी कर सकते हैं। इसके प्रयोग से हिन्दी की

हत्या नहीं वरन वृद्धि होगी। अङ्गरेजी भाषा में लूट, लूटेड, डकैती के शब्द व्यवहृत होते हैं, उर्दू के शायर लिख सकते हैं—

"था दमे नशा जो "ध्यान" उनको खुद आराइ का
हलकये हुस्न बना दायरा अङ्गड़ाई का"

किन्तु हिन्दी में "खुदाकी राह" "चश्म बदस्दूर" "ग़ैर" "बेग़ाने", "प्रेज़न्ट्स" आदि का भी यदि हम प्रयोग नहीं कर सकते तो यह हिन्दी के लिए हानिकारक होगा और हिन्दी की वृद्धि के मार्ग में रोड़े अटकावेगा। विद्वान हिन्दी के प्रेमी, आशा है, हमारे इस विनीत निवेदन पर ध्यान देंगे। समालोचकों की सेवा में हमारा एक निवेदन और भी है और वह यह कि अपने उत्तरदायित्व को वह भूला न करें, साथ ही इस बात को ध्यान में रखा करें कि जो वह कह रहे हैं वह ठीक भी है या नहीं। एक समालोचक ने "सुहागरात" के "सुहागरात" पत्र की चर्चा करते हुए उसके एक शिक्षाप्रद वाक्य को अनुचित और दोषपूर्ण बतलाया था। जिस समय हमने इस पत्र को लिखा था, हमने उसे अपने एक मित्र को जो, उर्दू के एक प्रसिद्ध लेखक और इस विषय के एक अच्छे ज्ञाता हैं, सुनाया था। पत्र सुनने के बाद उन्होंने कहा कि इस पत्र भर में सबसे अच्छा वाक्य हमको यह मालूम हुआ। हमारे विद्वान समालोचक ने इसी वाक्य को बुरा बतलाया था। हमारा कहना इस समय भी यही है कि वह वाक्य उस पत्र की जान है और यदि वह वाक्य या शिक्षा निकाल दी जाय तो पत्र समुचित नहीं अनुचित शिक्षा का देने वाला हो जायगा और उसके विपरीत आचरण करने से पति पत्नी का जीवन कंटकाकीर्ण हो जायगा।

पुस्तक के सम्बन्ध में हमको कुछ और नहीं कहना है। इस संस्करण में हमने जहाँ तहां काटछांट कर दी है, सुहागरात सम्बन्धी उपदेशों को, जो विशेष कर पतियों के लिए ही थे, हमने इसमें से निकाल दिया है, कुछ अन्य आवश्यक बातों को जोड़ कर पुस्तक

कलेवर की भी वृद्धि कर दी है, और इस बात की चेष्टा की है कि "बहूरानी को सीख" अधिक से अधिक देश की बहूरानियों के लिए उपयुक्त ही नहीं उपयोगिनी भी हो जाय। हां, इन सब बातों के कारण पुस्तक में प्रायः नब्बे पृष्ठों की वृद्धि हो गई है जिससे मूल्य ३।।) से ४) कर देना पड़ा। आशा है पाठिकाएँ इसके लिए हमको क्षमा करेंगी।

एक स्नेही मित्र ने इस पर भी आपत्ति की थी कि हमने ऐसी पुस्तक में (Co-education) बालक और बालिकाओं के साथ पढ़ाने सदृश विवादास्पद विषय को क्यों स्थान दिया। हमारा निवेदन यही है कि विषय विवादास्पद है यह हमने लिख दिया था। यह भी लिख दिया था कि यूरोप और अमरीका में भी इस विषय के सम्बन्ध में बहुत मतभेद है। यह सब कह देने के बाद और अपने को पूरा अधिकारी न समझते हुए भी हमने अपना मत प्रकट करने का साहस किया था, क्योंकि हमारा विश्वास है, कि (Co-education) साथ पढ़ाये जाने से स्त्री और पुरुषों का भविष्य सुन्दर हो सकेगा। दूसरे लोग या अधिकतर लोग हमारे विचारों से सहमत नहीं, यह तो इस बात की दलील न होनी चाहिए कि हम अपने विचार को प्रकट ही न करें, विशेष कर जब कि हम दावा नहीं करते कि दुनिया हमारे विचारों को माने और उसके अनुसार आचरण करे।

निवेदक

कृष्णकान्त मालवीय

प्रथम संस्करण की भूमिका

[लेखक—लाला लाजपतराय]

स्त्री संसार भर में सौन्दर्य का प्रतिबिम्ब है और मनुष्य ताकत का। संसार में दो ही चीजें प्राप्त करने और भोगने योग्य हैं, सौन्दर्य और ताकत। विद्या, ज्ञान, तप, भक्ति आदि सब इसी में आ जाते हैं। जो मनुष्य सौन्दर्य का अनुभव करके उससे आनन्द प्राप्त नहीं कर सकता और जिसमें ताकत नहीं है उसका संसार में आना व्यर्थ है। इसीलिए सदैव मनुष्यों के समूहों ने स्त्री को अनमोल पदार्थ समझा है और उसकी रक्षा तथा शृङ्गार के लिये और उससे आनन्द प्राप्त करने के लिए नाना प्रकार के साधन वर्ते हैं। बाज जातियों की मूढ़ सभ्यता में औरतों को अधीन रखने में ही यह आनन्द प्राप्त हो सकता है; अन्य जातियों ने इस तत्व को समझा है कि स्त्री को उसके अधिकार देने से या स्त्री के अधिकार स्वीकार कर लेने से ही अधिक आनन्द प्राप्त होता है और अधिक बल आता है। बल और बुद्धि दोनों और आनन्द भोगने की शक्ति यह बहुत दर्जे तक माता से प्राप्त होती हैं। यह नियम बिल्कुल सच्चा है कि जैसी मातायें होती हैं वैसी ही उनकी सन्तान भी होती है। कहीं कहीं व्यक्तिरूप से जन्म के बाद भी असाधारण साधनों से पैदायश की कमज़ोरियां दूर हो जाती हैं परन्तु यह ज़ाहिर है कि जो मनुष्य पैदायश से बलवान् और बुद्धिमान हो उनको भी अगर ऐसे ही असाधारण साधन प्राप्त हों तो वे अवश्यमेव उन लोगों से ज्यादा बलवान् और सुख भोगने के योग्य होंगे जो जन्म से कमज़ोर पैदा हुये हैं। संसार भर की बुराइयों में कमज़ोरी, शारीरिक हो अथवा मानसिक, सबसे ज्यादा ख़राब है। यह मनुष्य

को कमीना, पाजी, बुज़दिल, लालची, चुगुलख़ोर और बदमाश बना देती है। दुर्बल आदमी कभी संसार में महान् कार्य कर ही नहीं सकता। हिन्दुस्थान में हम सदियों से अपनी बेड़ियां काटने का प्रयत्न करते रहे हैं परन्तु हमको इस कार्य में सफलता प्राप्त नहीं होती क्योंकि माताओं से जो बल हमको मिलना चाहिये वह ऐसा क्षुद्र और लघु है कि वह हमारे कार्य और सफलता के लिए काफी नहीं हो सकता। ऐसी अवस्था में हिन्दू जाति के लिए सबसे प्रथम और सबसे महान् कार्य यह है कि वह अपनी स्त्री जाति में बल और बुद्धि की वृद्धि का प्रबन्ध करे। इस काम के लिए दो मार्ग हैं; एक तो हिन्दुओं की प्राचीन सभ्यता का और दूसरा पश्चिम की नवीन सभ्यता का। बहुत सी बातों में दोनों सभ्यताओं का एक ही आदर्श है परन्तु कई बातों में इनका भिन्न भिन्न भाव है। इस समय हमारे सामने यह प्रश्न है कि हम क्या करें? मेरी राय में गुज़रा हुआ ज़माना कभी वापिस नहीं आता और न आ ही सकता है। हम उसके इतिहास से और अनुभव से लाभ उठा सकते हैं परन्तु पूर्णरूप से पुनः उसको स्थापित करना असम्भव है। कोई वजह मालूम नहीं होती कि इस समय दुनिया में जो सभ्यता प्रचलित है उससे हम फ़ायदा क्यों न उठायें। इसके सम्बन्ध में भी मेरी यह राय है कि दूसरों की नकल करने से कोई जाति अपना उद्धार नहीं कर सकती और पूरी नकल करना भी नामुमकिन है। परिणाम यह होता है कि आधे तीतर और आधे बटेर रह जाते हैं। इसमें भी कुछ हानि नहीं अगर आधे तीतर का अच्छा हिस्सा और आधे बटेर का भी अच्छा हिस्सा हमारे अन्दर आ जाय। परन्तु प्रायः यह देखने में आता है कि नकल करने वालों में ही नक़ल किये गये मनुष्यों या जातियों के अच्छे भाव पैदा नहीं होते; प्रायः बुरे भाव आ जाते हैं। इसलिए जहां हमारा यह कर्तव्य है कि हम पश्चिम की नवीन सभ्यता से फायदा उठाने में संकोच न करें वहां हमारा यह भी कर्तव्य है कि हम नकल करते समय नकल किये जाने

वाले भावों के अच्छे और बुरे होने की अच्छी तरह से जांच कर लें।

पश्चिम में इस समय मनुष्यों और स्त्रियों के परस्पर सम्बन्ध में बड़ा आन्दोलन चल रहा है। मिस मेयो ने अपनी किताब में हमारे ऊपर यह दोष लगाया है कि हम बचपन से ही Sex Stimulus कामुकता के वायुमंडल में रहते हैं। यह दोष बिल्कुल मिथ्या नहीं है परन्तु यूरोप में यह दोष हमसे भी ज़्यादा पाया जाता है। भेद केवल इतना ही है कि वहां की सभ्यता और वहां की राजनीतिक नीति ने ऐसा प्रबन्ध कर दिया है कि इस दोष के कारण उनके बल और बुद्धि में उतनी हानि नहीं होती जितनी हमारे में होती है। Sex Stimulus कामुकता दुनिया में से उस समय तक दूर नहीं हो सकती जब तक पुरुष पुरुष हैं और स्त्रियां स्त्रियां हैं। पश्चिम के लोगों ने इस रहस्य को समझ लिया है कि जब तक पुरुष और स्त्रियों के सम्बन्ध को नियमबद्ध नहीं किया जायगा तब तक आइन्दा की उन्नति की स्थिति (durability) नहीं हो सकती। हमारे प्राचीन बड़ों ने भी इस रहस्य को खूब समझ लिया था। हमने आजकल इसको भुला दिया है। समाज-शोधन के लिए इससे अधिक महत्व का कोई प्रश्न नहीं है। हिन्दू जाति की स्थिति और उन्नति इसी प्रश्न के ठीक हल करने पर निर्भर है। मेरे भाई कृष्ण-कान्त जी ने इस विषय पर बहुत पाठ किया है और विचार भी किया है जिसको उन्होंने इस पुस्तक में लिख दिया है। मुझे इस पुस्तक के पढ़ने के लिए समय नहीं मिला परन्तु जो कुछ उन्होंने मुझे इसकी सूचना बतलाई है उससे मुझे विश्वास है कि हिन्दी पढ़ने वालों के लिए यह पुस्तक अति लाभदायक होगी। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि सब हिन्दू निश्चित हृदय से इसका पाठ करेंगे और इस विषय पर विचार करके समाज-संशोधन के कार्य में तत्पर होंगे। यह काम कठिन है और जल्दी नहीं होगा, परन्तु पढ़े लिखे लोगों को यह समझ लेना चाहिये कि बिना समाज संशोधन के बल और बुद्धि की प्राप्ति नहीं होगी और बल और बुद्धि के बिना

स्वराज्य भी नहीं मिलेगा। इसलिए यह आवश्यक मालूम होता है कि स्त्रियो और पुरुषों के सम्बन्ध के मुताल्लिक पढ़े लिखे लोग विचार करें और इस विषय के सम्बन्ध में जो कुछ उनको मालूम हो उसका अच्छी तरह प्रचार करें।

लाहौर
१८ नवम्बर (१६२७)

—लाजपत राय

मेरा निवेदन

"Love and life are with a similar meaning."

एक ज़माना हुआ मैंने स्त्री-पुरुष सम्बन्धी उच्चश्रेणी के महत्व-पूर्ण ग्रन्थों का विशेषरूप से अध्ययन किया था। मेरी उसी समय से यह कामना थी कि इस सम्बन्ध के ज्ञान की कुछ चर्चा मैं हिन्दी पढ़नेवालों से भी करूं। दिसम्बर १९१२ में "वैवाहिक निबन्धावली" नाम की ग्रन्थमाला का प्रकाशन मैंने इसी उद्देश्य से शुरू किया था। दो साधारण पुष्प इस पुस्तकमाला के प्रकाशित भी हुए किन्तु अनेक कारणों से, कहने को अवकाश न मिलने से किन्तु वास्तव में काहिली से तथा अन्य झंझटों में फंसे रहने के कारण, मैं इस काम को आगे नहीं बढ़ा सका। जुलाई सन् १९१५ ईसवी में "स्त्री दर्पण" में, जब वह प्रयाग से प्रकाशित होता था, "सरला" नाम की कथा इसी उद्देश्य से मैंने फिर आरम्भ की किन्तु पाँच छः मास लिखने के बाद मैं दूसरे कामों में फंस गया और कथा अधूरी ही रह गई। कुछ वर्षों बाद पुस्तक लिख सकने की आशा से निराश हो मैंने "अभ्युदय" में स्त्री-पुरुष सम्बन्धी समस्याओं का प्रकाशन और उन पर विचार करना आरम्भ किया, किन्तु विधि की विडम्बना से इस लेखमाला को भी अधिक दिनों मैं जारी न रख सका और फिर मन की मन ही में रह गई। जहां एक ओर यह सब था वहीं दूसरी ओर ईश्वर की कृपा यह भी थी कि मैं दिन दिन अपने संकल्प में दृढ़ होता जाता था और इस सम्बन्ध की पुस्तकों के लिखने की कामना प्रति दिन हृदय में प्रबलतर होती जा रही थी। सौभाग्य से या अभाग्य से इधर बीमारी के कारण डाक्टरों ने मुझको सब काम धन्धा छोड़ दिन रात पड़े रहने और आराम

करने की आज्ञा दी और इस तरह से मुझको अवकाश ही अवकाश मिल गया। इसी समय में मेरे पुत्र का विवाह-संस्कार भी होना निश्चय हुआ। पुत्र और वधू अपने वैवाहिक-जीवन को अधिक से अधिक सुखी बना सकें और समुचित ज्ञान प्राप्तकर वैवाहिक जीवन की कठिनाइयों का सामना कर सकें इस उद्देश्य से मैंने दो पुस्तकों का तैयार करना, एक पुत्र और दूसरी पुत्र-वधू के लिए, निश्चय किया। खाट पर पड़े पड़े कुछ करना भी नहीं था, साथ ही अपने ही बच्चों के जीवन से इसका घना संबन्ध था, इसलिए कठिनाइयों के होते हुए भी पुस्तकों का लिखना मैंने आरंभ कर दिया। "सुहागरात" "या पतियों को सीख*" नामक पुस्तक मैंने पुत्र की सुविधा के लिए पहिले तैयार की, बाद में शिमले में मैंने पुत्र-वधू के लिए इस पुस्तक को लिख डाला। पुस्तक कैसी है, इस संबन्ध में कुछ भी कहने का मुझको अधिकार नहीं, फिर भी मैं इतना कह देना चाहता हूँ कि वैवाहिक-जीवन को अधिक से अधिक सुखमय बनाने के लिए एक पत्नी को जो कुछ जानना चाहिये, प्रायः वे सभी बातें इस पुस्तक में मौजूद हैं। मैं और मेरा यह विश्वास है कि कोई भी पत्नी और पति पुस्तकों में लिखी बातों पर सदा ध्यान रखने से सुखी हो सकते हैं।

जीवन को सुखमय बनाने के संम्बन्ध में केवल एक बात मैं और कह देना चाहता हूँ और वह यह है कि पति और पत्नी को अधिकतर प्रकृति के निकट होने की चेष्टा करनी चाहिये। उनको अधिकतर प्रकृति की सहायता पर ही निर्भर रहना चाहिए और यह सदा ध्यान में रखना चाहिए कि सीधा-सादा प्राकृतिक किन्तु आध्यात्मिक जीवन, (Plain living और High thinking) सदा हितकर सिद्ध होगा। स्त्रियों को यह भी सदा ध्यान में रखना चाहिये कि उनका गृह सदा स्वर्गसम और पति के लिए दुनिया की झंझटों से बचने के अर्थ एक शरण गृह के समान हो। नह्यतोऽन्यद् गृहस्थानां चित्तग्राहकमस्तीति-

*पुस्तक का मूल्य ५) है; अभ्युदय प्रेस से मिलती है।

गोनर्दीयः ("Nothing else attracts so well the mind of a house-holder (husband) as a beutifully kept house"—says Gonardiacharya) एक पति के हृदय को सब से अधिक आकृष्ट करने की चीज़ सुन्दर गृह और उसका सुन्दर प्रबन्ध ही है।

जीवन को सुखी बनाने के लिए यह भी अच्छा होगा यदि देवियों के गुण, स्त्रियों की समस्त विशेषताएँ स्त्रियों में सुरक्षित रहें और उनका वे भूलकर परित्याग न करें। पुरुष से श्रेष्ठ बनने के स्वप्न देखने की उनको ज़रूरत नहीं, किन्तु उनको इस बात का सदा ख्याल रखना चाहिए कि वे पुरुष की ज़रखरीद, आत्मा और मस्तिष्क विहीन, सेविकाएं नहीं हैं वरन् पुरुष के साथ, उसके समस्त सुख दुःखों में बराबर से भाग लेती हुई, संसार में राज करने के लिए ही पैदा की गई हैं। स्त्रीत्व, पुंसत्व से अश्रेष्ठ नहीं है। एक राजर्षि ने, जो इन्द्र के शाप से स्त्री हो गये थे, बाद में इन्द्र के प्रसन्न होने और बरदान देने के लिये तैयार हो यह पूछने पर कि तुम फिर पुरुष बनना चाहते हो, कहा था, मैं स्त्री ही बना रहना चाहता हूँ, पुरुष नहीं बनना चाहता।

देश की बहूरानियों का एक कर्तव्य और भी है, और वह यह है कि स्त्रियों की जाति तथा आने वाली सन्तानों के सुख और समृद्धि के लिए वे पतिदेवों से इसकी भिक्षा माँगें और इस भिक्षा को प्राप्त करने के लिए वे दृढ़-प्रतिज्ञ हों कि विवाह होने के पहिले और बाद में भी वे मनसा नहीं तो कर्मणा ही सही भार्याव्रती और पवित्र ज़रूर रहेंगे जिससे पति और पत्नी मिलकर अपने शिशुओं के प्रति अपने समुचित कर्तव्य का पालन कर सकें। मेरा कहना तो यह भी है कि अगर पति देव ऐसा वचन न दें या न दे सकें तो देश की बेटियों और ललनाओं को ऐसे पति बनने की इच्छा रखने वालों को अपना पाणिग्रहण कभी नहीं करने देना चाहिये।

काशिराज की कन्या कलावती की कथा अन्यत्र पुस्तक में वर्णित

है। उसके पति पापरत, परदाररत, दुराचारी और पतित-चरित्र के मनुष्य थे। जिस समय सुहागरात में वह उसके पास आये और उसको छूने लगे कलावती ने कहा, मुझ से दूर रहिये और मुझको छूने का साहस न करिये।

"मा मां स्पृश महाराज..................................

धर्माधर्मो विजानासि माकार्षीः साहसं मयि"

जब राजा ने अपने पापों का प्रायश्चित्त किया और जब उन्होंने वचन दिया कि अब वह सदा पापों से दूर रहेंगे तब ही कलावती को वह छू सके। इस कथा से यह भी शिक्षा देश की ललनाओं को मिलती है कि वे अपने पति-देवों का, जिनका चरित्र बिगड़ा हो, जो नशेबाज़ हों, जुआरी हों, या और ही प्रकार के जिनमें दोष हों, उनका वह सुधार कर सकती हैं और उनको देश और समाज के लिए उपयोगी नागरिक बना सकती हैं। अन्त में देश की बहूरानियों से मैं इतना और कहना चाहता हूँ कि वैवाहिक-जीवन को वह सदा नभ में गुञ्जरित होने वाला प्रेम का मधुर आलाप समझने की भूल न करें, साथ ही यह सदा ध्यान में रखें कि पत्नी सफल वही हो सकती है जो पति की हस्ती के प्रत्येक तार को गुञ्जरित और स्वरान्वित कर सके। (All men crave sensation) उनको इतना और भी करना चाहिये कि वे पति को यह न समझने दें कि वे उससे कहीं श्रेष्ठ हैं, देवी हैं और पूजनीय हैं। वे दैवी नहीं मानवी सहचरी ही के समान उसके आदर और प्रेम की पात्री बनें किन्तु इसके साथ ही साथ वह कदापि पति को अपने को कामवासना की तृप्ति का साधन मात्र न समझने दें। यह सदा ध्यान में रहे कि वही पत्नी सफलता लाभ कर सकती है जो पति के शरीर body और आत्मा soul दोनों की ही (mistress) प्रियवल्लभा, कान्ता, दिलदार, प्रेमपात्री मलका तथा अधिष्ठात्री हो। "शान्ति" ने अपने किसी पत्र में इस बात पर जोर दिया है किन्तु मैं फिर भी पत्नियों को इस बात से सावधान कर देना

चाहता हूँ कि माता और सुतवती होने पर सदा ध्यान रखें कि ("They do not allow their husbands to feel that their work is done, that they are superflous now and no more needed") वे अपने पति-देवों को यह अनुभव नहीं करने देतीं कि उन्होने अपना काम कर दिया, वे अब एक फजूल-मद हैं और उनकी अब ज़रूरत नहीं।

यह सब कैसे हो, कैसे किया जाय और इन बातों की आवश्यकता क्यों है, इन सब बातों का ज्ञान इस पुस्तक के पढ़ने से प्राप्त हो सकता है और मैं आशा करता हूँ कि आर्यललनाएँ, भावी पुरुष-समाज की माताएँ, पुस्तक की बातों पर ध्यान दे अपने पति तथा अपने बच्चों के जीवन को अधिक से अधिक उपयोगी और सुखी बनाने का प्रयत्न करेंगी।

पति और पत्नी को जो कुछ करना चाहिये, वह सब मेरी दोनों पुस्तकों में प्रायः मौजूद है किन्तु उनके जीवन को सुखमय बनाने के लिए माता-पिताओं का भी कुछ धर्म और कर्तव्य है। सबसे पहिला. धर्म उनका यह है कि सम्बन्ध वह आँख खोलकर और केवल अपने बच्चों की भलाई की दृष्टि से ही ठीक किया करें। अपने अनुभव और ज्ञान से वह स्वयं इस बात पर विचार कर सकते हैं कि जिनको वह विवाह-बन्धन से जकड़ने जा रहे हैं, वे एक दूसरे के उपयुक्त हैं या नहीं बेवक्त अवस्था के हैं या नहीं और यह कि दोनों मिलजुल कर प्रसन्न और सुखी रह सकेंगे या नहीं। इसके साथ ही साथ अगर वे इतना और जान लिया करें कि वह वर और वधू भी एक दूसरे को पसन्द करते हैं या कम से कम एक दूसरे को नापसन्द नहीं करते तो और भी अच्छा होगा।

वर-वधू बिलकुल एक दूसरे से अपरिचित हों, वर्तमान समय को देखते हुए यह बिलकुल अनुचित है। "वात्स्यायन" के "काम-सूत्र" में "कन्या सन्दर्शन" कन्या को दिखाने का भी विधान है। लिखा हुआ है "वरण काले कन्यां दृष्टानिमित्तं पश्येत्।" साथ ही साथ यह भी कहा गया है

कि "वरणार्थमुपगतांश्च भद्रदर्शनान्प्रदक्षिण वाचश्च, तत्सं बन्धिसङ्ग-तान्पुरुषान्मङ्गलैः प्रति गृह्णीयुः। कन्यां चैषामलंकृता-मन्यापदेशेन दर्शयेयुः"। जब वर-पक्षवाले सम्बन्ध की चर्चा ले अपने गृह पर आवें तो कन्या-पक्षवाले उनकी खातिर करें और कन्या को अलंकारों से विभूषित कर किसी बहाने से उनके सामने कर दें। "कन्दर्पचूड़ामणि" में लिखा हैः—

"अपराह्णे वा नित्यम् सालकारा चरेदसौ क्रीड़ाम्।
यज्ञ विवाहादिषु वा जनसमवाये निरीक्ष्यैषा।"

"वात्स्यायन" का कहना है कि—

"अपराह्णिकं चा नित्यं प्रसाधितायाः सखीभिः सह क्रीड़ा। यज्ञ विवाहादिषु जन संद्रावेषु प्रायत्निकं दर्शनम्। तथोत्सवेषु च पण्य सधर्मत्वात्"नित्य प्रति तीसरे पहर या शाम को विवाह योग्य कुमारी को अलंकारों से विभूषित कर मित्रों के साथ स्वतंत्रतापूर्वक खेलने के लिए जाने दें। विशेष कर यज्ञ विवाहादि उत्सवों में जाने दें जहां दूसरे उसको देख सकें (Daily in the afternoon, the girl of marriageable age should be fairly decked and allowed to play freely with her friends. She should especially be taken to places where people congregate, such as yajna, marriage and also to other festivals so that the people may see her)"

इतना ही नहीं कन्या "संप्रयुक्तकमधिकरण" Corting and wooing a maiden के अध्याय में "वात्स्यायन" ने इस सम्बन्ध की प्रायः वे सब शिक्षायें दी हैं जो आज दिन पश्चिमीय प्रदेशों में देखी जाती हैं। यह सब कहने से मेरा अर्थ इतना ही है कि वर-वधू विवाह के पहिले से एक दूसरे से परिचित हों तो यह हितकर सिद्ध होगा और साथ ही यह आचार्यों के मत के विरुद्ध भी न होगा।

इसके साथ ही साथ माता पिताओं को भी वर और वधू के गुणों और अवगुणों को भी ध्यान में रखना चाहिये। मिट्टी के घड़े

भी ठोक बजाकर हम लेते हैं किन्तु लड़के-लड़कियों के सम्बन्ध में हम किसी तरह की जांच आवश्यक नहीं समझते। कैसा अन्धेर है! माता-पिता और जामातओं को भी "अनुशासन पर्व" के अठारह, उन्नीस और बीसवें अध्याय में वर्णित जामाता होने की इच्छा रखने वाले अष्टावक्र ऋषि और श्वसुर वदान्य ऋषि की कथा को पढ़ लेना चाहिये। वदान्य ऋषि ने अपनी कन्या देने के पहिले कैसी परीक्षा अष्टा-वक्र की ली थी इसे प्रत्येक माता-पिता को जानना चाहिये और पूर्णरूप से सन्तुष्ट होने पर ही अपनी कन्या किसी को देनी चाहिये। "मनु" ने लिखा है कि "चाहे लड़का लड़की मरण पर्यन्त अविवाहित रहें पर उनका गुणहीन, परस्पर विरुद्ध गुण, कर्म, स्वभाव वाले से संबन्ध न करे"।

जामाता के लक्षणों का वर्णन करते हुए महाकवि 'कल्याणमल्ल' ने "अनङ्ग-रङ्ग" में इस प्रकार लिखा है:—

"विद्या शौर्य धनाश्रयोगुणनिधिः ख्यातो युवा सुन्दरः
सच्चारः सकुलोद्भवो मधुरवाग् दातादयासागर:
भोगी भूरि कुटुम्बान स्थिरमतिः पापार्तिहीनो बली
जामाता परिवर्णित: कविवरैरेवमविधिःसत्तम:"

वात्स्यायन ने लिखा है—

तस्मात्कन्यामभिजनोपेताम्, माता पितृमती, त्रिवर्षात्प्रभृति न्यून वयसं, श्लध्याचारे धनवति पक्षवति कुलेसंबन्धिप्रिये संबन्धि भिराकुले प्रसूतां प्रभूत मातृपितृपक्षाम् रूपशील लक्षण संपन्नामन्यूनाधिकाविनष्ट दन्त नखकर्ण केशाक्षिस्तनी मरोमि प्रकृतशरीरां तथा विधि एव श्रुतवान्शीलयेत्"

"मनु ने लिखा है:—

महान्त्यपि समृद्धानिगोऽजाविधनधान्यत:
स्त्री सम्बन्धे दशैतानि कुलानि परिवर्जयेत्
हीनक्रियम् निष्पुरुषं निश्छन्दो रोमशार्शसम्
क्षायामयाव्यपस्मारिश्वेत कुष्ट कुलानि च"

"कितना ही धन, धान्य, गाय, घोड़े, हाथी, आदि से समृद्धि-शाली कुल क्यों न हो तब भी जो कुल सत्क्रिया से हीन हो, सत्पुरुषों से रहित हो, वेदाध्ययन से विमुख हो, जिसके कुटुम्बियों के शरीर पर बड़े बड़े बाल हों, या जिस कुल में क्षयी, दमा,-मिरगी, श्वेतकुष्ट, आदि की बीमारी हो उस कुल की कन्या से विवाह न करें"।

"कन्दर्पचूड़मणि"में वर-वधू के सम्बध में लिखा हुआ है:—

"मानरतामिति कन्यां मात्रापित्र च संयुतो युक्ताम्
वर्षत्रयेण वयसा यदि वा नवमोनकालेन
श्लाघ्यचारे धनवति पक्षिणि सम्बन्धिनामुहःसुखदे।
सम्बन्धिभिः परीते जातामेवंविधे वंशे
पितृपक्षाधिक्यवती सम्पन्नं रुपलक्षणैरुचतैः

....

अक्षीण केश दन्तां कर्णम्अक्षण्यशालिनीं तद्वत्
सहजा रोगशरीरां श्रुतवानेवं गुणां पुरुषः"

"वर सच्चरित्र माता पिता की सन्तान हो और वधू से तीन वर्ष* अवस्था में ज़रूर अधिक हो। कन्या अच्छे मां बाप की बेटी हो, मान-रत हो, ऐसे कुल में उत्पन्न हुई हो जिसका शील और आचार प्रशस्त हो, जिसके धनवान कुटुम्बी सुख देने वाले हों, जो कुटुम्ब सम्बन्धियों से युक्त हो, जिस कुटुम्ब के प्राणी रूप और गुणों से युक्त हों, कन्या किसी असाध्य रोग से ग्रसित न हो.....................

---

*वधू की अवस्था वर से अधिक कम होना वर के लिए बहुत ही हितकर है यह ध्यान में रखना चाहिए किन्तु बूढ़ों और कुमारियों का साथ ही बेजोड़ विवाह न हो।

"सततं सेव्यमानाऽपि बालावर्धयेत बलम्
क्षयं नयति योग्यास्त्री, प्रौढ़ा तु कुरुते जराम"

जामाता पढ़ा लिखा और ऐसा होना चाहिये जो किसी भी रोजगार में लगा हो। गृहस्थाश्रम में प्रवेश होने के लिए वात्स्यायन की शर्त यह है"※ गृहीतविद्यः प्रतिग्रह जयक्रय निर्वेशाधिगतैरन्वया-गतैरूभयैर्वा गार्हस्थमधिगम्य नागर वृत्तं वर्तेत"।

यहाँ पर मैं एक बात और कह देना चाहता हूँ। अफ़गानों में विवाह युवा और युवती का भी १६ से २१ वर्ष की अवस्था में होता है। इस अवस्था से पहिले किसी कन्या या युवक का विवाह होता ही नहीं। यही कारण है कि अफ़ग़ानी इतने तगड़े और ज़बर्दस्त होते हैं। बिलूचिस्तान तथा आस पास के स्थानों में, सुनते हैं, विवाह उस कुमारी और कुमार का होता है जो दोनों मिलकर एक ऊँट का पूरा बोझ, ऊँट पर लाद दें। इस परीक्षा में जो कुमार और कुमारी सफल होते हैं उनका ही विवाह होता है। अफ़ग़ानी स्त्री की सब से मधुर विशेषता यह कही जाती है कि वह अपने पति से कभी झंझट, गृहस्थी, या फिक्र पैदा करने वाली कोई बात नहीं कहती जब तक कि वह उसके पेट को गरम गरम भोजन से भरपूर भर नहीं देती। अफग़ानी स्त्री की विशेषता यह भी है कि यद्यपि पति के सामने वह सदा नम्र रहती है और उसकी दृष्टि सदा भूमि पर ही रहती है किन्तु कोई भी पति उसे (Bully) धमका नहीं सकता, उसे डरा कर उसपर क्रोध प्रकट कर, केवल धमकी के सहारे उससे काम नही ले सकता।

दूसरी बात जो माता पिताओं को ध्यान में रखनी चाहिये यह है कि

※ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्या ग्रहण करके, दान, विजय, वाणिज्य तथा मजदूरी से धन प्राप्त करने के बाद विवाह करे। "वात्स्यायन ने एक जगह पर यह भी लिखा है कि गुणों से युक्त होने पर भी जो धन हीन हो; या माता पिता के अधीन हो उसे स्वयम् बिवाह नही करना चाहिये।

उनके लड़कों तथा लड़कियों को भी (Biology) प्राणि-शास्त्र-विद्या (Physiology) प्राणिधर्मगुणविद्या, और (Psychology) आत्मतत्वविद्या या अध्यात्मविद्या की आरम्भिक शिक्षा कुछ जरूर हो। हमारे स्कूलों और पाठशालाओं में प्रत्येक बालक और बालिका को इन विषयों की कुछ शिक्षा ज़रूर दी जानी चाहिये। मस्तिष्क और शरीर के सम्बन्ध में इससे उनको साधारण रीति से कुछ ज्ञान हो जायगा और यह ज्ञान जीवन को सुखमय बनाने में बहुत कुछ सहायक होगा। प्रत्येक माता पिता को यह भी जानना चाहिये कि मानव-समाज के कष्टों का एक प्रधान कारण हमारा (life-force) जीवन-शक्ति-सम्बन्धी अज्ञान और उसके उचित उपयोग और प्रयोग से अनभिज्ञ होना है।

तीसरी बात जो मैं लड़के और लड़कियों के माता-पिताओं से निवेदन करना चाहता हूँ यह है कि स्वयम् बालिकाओं, समाज और देश के हित की दृष्टि से ही नहीं वरन् मानव-संसार के हित के लिए यह आवश्यक है कि बालकों की ही भांति बलिकाओं को भी शिक्षा दी जाय। मैं यह नहीं चाहता कि दोनों के पाठ्य-विषय और पाठ्य-क्रम मेरे एक हों*, मेरे कहने का अर्थ इतना ही है कि अच्छी से अच्छी जो शिक्षा आवश्यक है वह बालिकाओं को भी उसी तरह से दी जाय जैसे कि वह बालकों को दी जाती है। मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि मैं कुमारियों को सुशिक्षिता (well read) देखना चाहता हूं (not only cultured and cultivated) शिक्षा की वाह्य तड़क-भड़क और आडंबर से केवलमात्र विभूषित नहीं। इसके साथ ही साथ मैं यह भी

---

*"यूरोप में स्त्री तथा पुरुषों की शिक्षा-प्रणाली में भेद न होने से आंगल तथा सैक्सन जाति की स्त्रियाँ दिन दिन माता बनने के अयोग्य बन रही हैं। कुछ लोगों का कहना यह भी है कि पुरुषों के समान शिक्षा के कारण स्त्रियाँ बांझ होती जा रही हैं।

चाहता हूँ कि बालक और बालिकाएं एक साथ पढ़ें।(co-education) एक साथ पढ़ाये जाने के सम्बन्ध में मत-भेद बहुत है, यूरोपीय विद्वानों में भी इस सम्बन्ध में बहुत मत-भेद है और पुस्तक की प्रस्तावना ऐसी वस्तु नहीं जिसमें इस गहन विषय के सम्बन्ध में सम्यकरूप से विचार किया जा सके, किन्तु मेरा कहना यह है कि वर्तमान स्थिति में, आरम्भ में, जो इससे हानियाँ हो सकती हैं उनको मैं दृष्टि की ओट नहीं करता किन्तु मेरा यह विश्वास है कि हानियों की विभीषिका जितनी और जिस प्रकार की हम चित्रित करते हैं वह दस-बीस-पचास या सौ वर्ष के बाद बहुत अंशों में हमारी कल्पना की ही वस्तु सिद्ध होगी, यदि यह न भी हो तो भी समाज और देश की हितचिन्ता के समय हम व्यक्तियों के हानिलाभ से प्रेरित नहीं हो सकते और न इसे हमारे रास्ते में रुकावट पैदा करने देना चाहिये।

मैं कह नहीं सकता, संभव है, मेरा मत ठीक हो, संभव है ग़लत हो किन्तु मेरा विश्वास है कि अन्ततोगत्वा समस्त मानव-समाज का हित पुरुष और स्त्री के समुचित सम्बन्ध पर ही स्तम्भित है। अगर मेरा यह मत ठीक है तो स्त्री-पुरुषों के सम्बन्ध को उचित रूप देने का एकमात्र उपाय co-education बालक और बालिकाओं का एक साथ पढ़ाया जाना है। इस तरह से एक दूसरे को अच्छी तरह जानने और समझने में बालक और बालिकाएँ समर्थ होंगी, बालिकाएं इस तरह से बहुत कुछ बालकों की विशेषताओं को जान सकेंगी और सम्भव है उनका वे अपने चरित्र में अच्छा सम्मिश्रण भी कर लें, साथ ही बालक इससे बालिकाओं के प्रति आदर, शिष्टता, भलमनसाहत और उदारता का व्यवहार सीख जायँगे और साथ ही साथ वह सदा उनकी रक्षा करने के लिए तैयार रहा करेंगे। सबसे बड़ा लाभ इससे जो होगा वह यह होगा कि बालिकाओं का दृष्टिकोण खूब विस्तृत हो जायगा और इससे यही नहीं कि वे अपनी रक्षा करने में समर्थ होंगी वरन् हर तरह से पुष्ट हो वह मानव-समाज की रक्षा उसी तरह से कर

सकेंगी जिस तरह से सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा, काली और आदि-शक्ति ने कभी की थी या कर सकती हैं।

मैं मानता हूँ कि युक्तप्रांत में, जो पर्दे का गढ़ है, एकदम से लड़कों और लड़कियों का एक साथ पढ़ाया जाना बहुत अंश में आरम्भिक दशा में बहुत भयावह हो सकता है किन्तु मेरा निवेदन इस सम्बन्ध में यह है कि कम से कम दस वर्ष की अवस्था तक लड़के और लड़कियाँ प्राथमिक शिक्षा एक साथ पढ़ कर प्राप्त करें; इस अवस्था तक प्रायः सभी आवश्यक विषयों का उन लोगों को साधारण ज्ञान दिया जाय, और पढ़ाने वाली सब स्त्रियाँ हों। मैट्रिक पास करने के लिये लड़के अपने स्कूलों में जायँ और इस समय में लड़कों और लड़कियों का पाठ्य-क्रम और पाठ्य-विषय भी उनकी आवश्यकताओं के अनुसार भिन्न हो। बालिकाओं के लिए मेरी समझ में, ६४ में से अधिकतर कलाओं का ज्ञान बहुत आवश्यक है। "वात्स्यायन" का कहना है कि स्त्रियों को "गीत, नृत्य, वाद्य, लेख, चित्र-कर्म (आलेख्यम) मणि भूमि-रचना, कृषि-विद्या, तरकारी और पुष्प के बीजों से वृक्षों को पैदा कर सकना, पाक-विद्या, रत्न-परीक्षा, सभा की रचना, उसमें उठना, बैठना, पैरना, स्त्री-श्रृङ्गार, सुगन्धि रचना, मूर्ति-रचना, सभा-चातुरी, नाटकशास्त्र का ज्ञान, रामायण और महाभारत आदि महाकाव्यों को स्वर से पढ़ सकना, और समझ सकना, समस्यापूर्ति, सुई का काम (needle work) वस्तु-विद्या, गृह-रचना (Engineering, especially that part of the science which treats of the way of constructing dwelling houses, the sites on which they are to be built, the materials to be used and such other matter as sanitation, connected with the subject) इञ्जीनियरी, विशेष कर गृह निर्माण, मकान बनाने के लिए जगह को पसन्द कर सकना, स्वास्थ्य-शास्त्र आदि, धातु-विद्या-वृक्ष आयुर्वेद अक्षरमिश्टिका कथनम् (short hand) देश-भाषा-विज्ञान, विविध देशों की भाषाओं का ज्ञान (Knowledge of

the languages of different countries), धारण-मात्रिका (Science of memory training, so that one may be able to make such feats as satavadhana शतावधान (attending to 100 things at one and the same time) पुष्प सकटिका, पुष्प शय्या, फूलों के हाथी, घोड़े, पालकी आदि बनाना, यंत्र, कल, पुरजे, मेशीन, इञ्जन, पम्प, बन्दूक आदि का निर्माण* Construction of machines for locomotion, pumping machines, &c and of Guns and other weapons for war purposes काव्यक्रिया, वैनायिकीनाम विद्यानाम ज्ञानम् (Knowledge of such arts and sciences by which good manners and obedience are lealearns सामाजिक व्यवहार ज्ञान, व्यायामीकीनाम ज्ञानम् (Knowledge of such science as are connected with physical exercise and development of body) व्यायाम शास्त्र, बालक्रीडनकानि अर्थात् बच्चों को खेलाने की कला, आकर्ष-क्रीडा, अपने को सुन्दर बनाने का शास्त्र और वैज्ञानिक क्रीडा आदि।

मैंने उपर्युक्त बातों को गिना दिया इसलिए कि देशवासी यह समझ लें कि कम से कम प्राचीनकाल में भारतीय स्त्रियां किन बातों में निपुण होती थीं और किन बातों का ज्ञान आचार्यों के मत में उनके लिए जरूरी था और यह कि वे मूर्खा नहीं होती थीं।

सत्रह अठारह में इन्टरमीडियेट की परीक्षा देने के बाद, क्योंकि ग्यारह से अठारह तक की अवस्था में ही कुमार और कुमारियों का सम्मिलन भयावह हो सकता है, अठारह वर्ष की अवस्था से विशेष विषयों में विशेष ज्ञान प्राप्त करने के लिए माता पिताओं की अनुमति प्राप्त कर लड़कियां कालेजों में बी० ए० और एम० ए० में फिर लड़कों के साथ पढ़ सकती हैं, और यदि उनके

*यह न समझा जाय कि यह सब मेरी मनगढ़न्त है, "कामसूत्र"; के "पेरिस" के संस्करण में फ्रान्सीसी टीकाकार ने इन्हीं शब्दों में टीका की है।

माता पिता इसे न पसन्द करें तो कालेजों में वह कुछ दिनों और अलग पढ़ सकती हैं। कुछ वैज्ञानिकों और प्राणिशास्त्र-विशारद का मत है कि बालिकाएं, बालकों के वातावरण में ही कुछ अच्छी अभिवृद्धि प्राप्त करती हैं किन्तु मैं इससे सहमत नहीं। मेरा निवेदन इसलिए यही है कि आरम्भ में जिसे अधिक से अधिक प्रतिबन्ध और नियम जरूरी जान पड़ें बना लिए जायँ किन्तु मानव संसार के सुन्दर भविष्य के निर्माण के लिये co-eduaation लड़कों और लड़कियों का एक साथ पढ़ाया जाना हम लोगों का अन्तिम उद्देश्य और आदर्श ज़रूर होना चाहिए।

माता पिताओं से हमारा अन्तिम निवेदन यह है कि जिस तरह से आजकल हम लोगों में हेर फेर कर उन्हीं थोड़े से कुटुम्बों में विवाह हो जाया करता है यह देश, समाज और जाति सबके लिये हानिकर है। अब तो गोत्र भी नहीं बचाया जा रहा है। पति-पत्नी का रक्त जितना भिन्न और दूर का हो समाज के लिये वह उतना ही हितकर होगा।

"मनु" ने लिखा है :—जो कन्या माता के कुल की छः पीढ़ियों में न हो, साथ ही पिता के गोत्र की न हो उसी कन्या से विवाह होना उचित है। साथ ही "दुहिता दुर्हिता दुरेहिता भवतीति" "कन्या का नाम ही "दुहिता", दूरे हिता है"।

अन्त में इस पुस्तक के सम्बन्ध में भी मैं कुछ कह देना चाहता हूँ। पुस्तक का विषय ऐसा है जिसके सम्बन्ध में चर्चा करने में यूँ भी लोगों का स्वाभाविक संकोच होता है। यूरोप और अमरीका में हेवलक इलिस, बरनार्ड शा, इबसन, एलन के तथा अन्य कितने ही प्रसिद्धि-प्राप्त लेखकों और लेखिकाओं का कारण स्त्री-पुरुष सम्बन्धी विषयों की चर्चा समाज में बहिष्कृत नहीं रह गई है और न "चुप चुप" और "ना बाबा" के जाल से वह आच्छादित ही है किन्तु भारत में हमारी अधोगति के कारण अब दशा दूसरी है। मैंने इसलिये इस पुस्तक के पत्रों की लेखिका को एक स्त्री ही रखा है। एक स्त्री दूसरी स्त्री से इस

सम्बन्ध में बातें करती हुई एक पुरुष की अपेक्षा अधिक निःसंकोच हो सकती है, दूसरे वह ऐसी अनेक बातों के सम्बन्ध में उससे चर्चा कर सकती है, जिसके सम्बन्ध में पुरुष तनिक भी चर्चा नहीं कर सकता।

मैंने प्रस्तुत पुस्तक में इस बात की भी यथाशक्ति चेष्टा की है कि जहाँ तक संभव हो संकोच की सीमा की हत्या न की जाय। जिन बातों की चर्चा नितान्तरूप से आवश्यक थी और जिनके सम्बन्ध में मौन धारण करना उचित न होता, या जिनके सम्बन्ध में मौन धारण करने से पुस्तक के उद्देश्य की ही हत्या हो जाती उन्हीं बातों की चर्चा मैं ने की है। साथ ही कोशिश यह की है कि अधिक से अधिक शिष्ट शब्दों में बातें कही जांय। मैंने इसमें सफलता कहाँ तक लाभ की है यह फैसला विज्ञ पाठक और पाठिकाओं के अधीन है।

कुछ मित्रों को सम्भव है इस पुस्तक के सम्बन्ध में यह आपत्ति हो कि इसमें "सुहागरात" की चर्चा है। "सुहागरात" सम्बन्धी चर्चा आवश्यक ही न थी इस बात में तो अपने मित्रों से मैं सहमत नहीं हो सकता किन्तु इतना मैं जरूर मानता हूं कि इसकी चर्चा अगर मेरी दूसरी पुस्तक में होती, जिसे अपने पुत्र की सुविधा के लिये मैंने लिखी है और जो नवयुवक पतियों के लिये लिखी गई है, तो अच्छा होता। सुहागरात में अधिक उत्तरदायित्व पतियों पर होता है इसलिये पतियों को शिक्षा देनेवाली पुस्तक में ही सुहागरात की चर्चा अधिक उपयुक्त होती किन्तु मेरे मार्ग में एक कठिनाई थी। "मनोरमा के पत्र या पतियों को सीख *नामक पुस्तक में भी—जिसे मैंने अपने पुत्र की सुविधा के लिये लिखा है—इसी पुस्तक के समान पत्रों का ही संग्रह है। उन पत्रों की लेखिका भी एक स्त्री ही है। उसमें पत्रों को स्त्री ने पुरुषों के नाम लिखा है। स्त्री होते हुए वह पुरुषों से सुहागरात, गर्भाधान या इसी तरह की अन्य बातों की चर्चा कर नहीं सकती थी, इसी कारण से "सुहागरात" सम्बन्धी बातों का समावेश मैं उस पुस्तक में कर

---

*पुस्तक का मूल्य ५) है।

नहीं सकता था। इस पुस्तक में लिखने वाली स्त्री है, पत्र एक स्त्री को ही लिखे गये हैं, इसलिये "सुहागरात" की चर्चा का इसी में समावेश कर देना मैंने उचित समझा। कुछ मित्रों को सम्भव है यह शिकायत हो कि "सुहागरात" सम्बन्धी पत्र में कुछ बातें अति की मात्रा के निकट पहुँच गई हैं, मेरा निवेदन यही है कि मैं इसमें उनसे सहमत नहीं फिर भी इसीलिये जिन बातों के सम्बन्ध में अधिक संकोच था साथ ही जिनका सम्बन्ध केवल पतियों से ही था, उनको मैंने संस्कृत या अङ्गरेज़ी में ही रहने दिया है और मैंने उनका अर्थ देना आवश्यक नहीं समझा। सच बात तो यह है कि इस विषय की चर्चा बिना कुछ संकोच को दूर किये हो ही नहीं सकती।

पुस्तक के सम्बन्ध में इतना और कह देना चाहता हूँ कि "शान्ति के" लिखने का क्रम अपना है, भाषा भी अपनी है, किन्तु जो बातें उससे कही हैं और कहीं कहीं पर शब्द, वाक्य और पद भी जो उसने व्यवहार किए हैं वे वेही हैं जिनको भारतीय या पश्चिमीय विद्वान् और लेखकगण अपनी पुस्तकों में लिख चुके हैं और जिनके सम्बन्ध में या तो मतभेद है ही नहीं और यदि है भी तो नाम मात्र का। यह सत्य है कि, शान्ति,

"लाई है बाग़ से औरों के लगा कर डाली।"

किन्तु हार गूंथने का क्रम, उसकी बनावट, उसकी सजावट; उसके प्रत्येक पुष्प का शृङ्गार और क्रम सब कुछ उसी का है, प्रत्येक पुष्प पर उसी की अपनी छाप है और प्रत्येक पुष्प उसी के हृदय का प्रतिबिम्ब है। मेरे समान साधारण पुरुषों-द्वारा संसार में सहसा, अपने निजी पुष्प पैदा नहीं किये जा सकते, जो फूल हम पैदा करना चाहें वह किसी न किसी के बाग़ में होगा ही, विशेष कर, वर्तमान युग में जब कि छापेखानों और पुस्तकों के काल में विचार, पुष्पों के बीजों के पार्सलों के समान दुनिया के एक कोने से दूसरे कोने तक रोज़ ही पहुँचा करते हैं। एक बात और कह दूं "पुस्तक" प्रायः २७ दिनों में

ही, जैसा की पत्रों की तिथियों से प्रगट है, लिखी गई और छपी भी प्रायः यह बहुत ही जल्दी में, इस कारण इसमें अनेक त्रुटियों का होना सम्भव है, एक दो स्थानों पर अकारण संस्कृत तथा अङ्गरेजी के शब्द, वाक्य या उद्धरण रह गये हैं और उनका हिन्दी अनुवाद नहीं है, दूसरे संस्करण में यह सब त्रुटियाँ, आशा है, दूर हो जायंगी।

अन्त में मुझको इतना ही कहना है कि इस पुस्तक के मुद्रण कराने का भार हमारे स्नेही-मित्र श्री कुँवर शिवनाथ सिंह जी ने अपनी सहज उदारता और प्रेम से अपने ही ऊपर ले लिया था और उनकी कृपा से ही इस पुस्तक को मैं संसार के सामने उपस्थित कर सका हूं, इसलिये यदि इस पुस्तक के पठन से देश की बहू-बेटियों को कुछ लाभ पहुँचे तो इसके लिये धन्यवाद का श्रेय मेरे उपर्युक्त मित्र को ही प्राप्त होना चाहिये।

शान्ति कुटी
शिमला
१५-६-२७

कृष्णकान्त मालवीय

प्रेमोपहार

श्रीमती

समर्पण

"There can be no purity no real uplifting of the sex insinct from the crude unimpassioned impulses of the ape and tiger, without the wide and sympthetic vision that knowledge brings."

बहूरानी,

तुम एक ग़रीब के घर की गृहलक्ष्मी हो, तुमको किसी प्रकार का भी कष्ट न हो, तुम्हारा जीवन सदा सुखमय हो, संसार की झंझटों का प्रचंडावात तुमको विचलित न कर सके, संसार के वैभव को अपने में सन्निहित कर एक शिला की भाँति तुम अपने स्थान पर सदा खड़ी रहो और संसार की अँधियारी से अँधियारी रात्रि को भी तुम अपने गुणों की तारकाराशि से उजियारी बना सको, यह मेरे हृदय की सब से मधुर कामना है। मैं कितना ग़रीब हूँ यह तुम्हारा संबन्ध बँधते ही मैंने तुमको बतला दिया था। अपनी इच्छानुसार न मैं तुमको जेवर और कपड़े ही दे सका और न तुम्हारे सुख से रहने का प्रबन्ध ही कर सका। तुम्हारे जीवन को सुखी बनाने के लिए बहुत कुछ सोचा करता हूँ किन्तु बहुत सी बातों के लिए अपने को असमर्थ पाता हूँ; ऐसी दशा में मैंने यह निश्चय किया कि अपने जीवन को अधिक से अधिक सुखमय बनाने का भार मैं तुम्हारे ही सुकुमार काँधोंपर छोड़ दूं वैवाहिक-जीवन को सुखमय बनाने की कुंजी इस पुस्तक के रूप में मैं इसीलिए तुमको भेट कर रहा हूँ। मैं जीवित रहूं या न रहूं, यह पुस्तक रहेगी, तुम इसको अपनी सहचरी बनाकर सदा अपने साथ रख सकती हो, तुम इससे सदा सलाह ले सकती हो और

इसकी शिक्षाओं के अनुसार आचरण कर अपने को सुखी बना सकती हो।

सुख दुःख का केन्द्र प्रत्येक जीव स्वयम् होता है, अपने को सुखी बनाना या दुखी बनाना भी अनेक अंशों में उसी के अधीन होता है। अपने को वह सुखी रख सके इसीलिए ईश्वर तथा सृष्टि के प्रबन्ध से उसे मस्तिष्क, आत्मा और शरीर मिल जाते हैं। ईश्वर की यह देन तुम्हारे पास भी है। सहायिका और मार्ग-प्रदर्शिका का काम करने के लिए "सुख की कुंजी" स्वरूप यह पुस्तक भी तुमको देता हूँ और आशा करता हूँ कि तुम अपने जीवन को अधिक से अधिक सुखी बनाने में समर्थ होगी।

अब यह "सुख की कुंजी" तुम्हारे हाथों में है, मेरी ईश्वर से प्रार्थना यही है कि वह तुमको विद्या, चरित्र, साहस और आत्मबल दे, जिससे इनकी सहायता और इस सुख की कुंजी के प्रयोग से तुम अपने जीवन के सुखोद्यान में सहज ही प्रवेश कर सदा उसमें निवास कर सको। ईश्वर सदा तुमपर अपनी रक्षा का हाथ रखे। वह तुम पर कृपा करे और सदा सत्कार्यों के लिए तुमको प्रोत्साहित करे। मैं केवल एक बात तुमसे कहता हूं और वह यही है कि नित्य व्यायाम करना। आज कल पचास वर्ष और इससे भी अधिक अवस्था की मेमें ठीक उसी फुर्ती, चुस्ती और तबियतदारी से खेल कूद, नाच, शिकार, दौड़-धूप में भाग लेती हैं जैसे कि २० या २५ वर्ष की कुमारियाँ। एक प्रसिद्ध फ्रान्सीसी महिला चौंसठ वर्ष की अवस्था में मरी किन्तु उसके प्रेमी ने, जिसकी आयु चालीस वर्ष की थी; यह कह कर आत्महत्या कर ली कि मैं इसके बिना जीवन नहीं धारण कर सकता। चौंसठ वर्ष की अवस्था में इस स्त्री में इतना सौन्दर्य, आकर्षण और प्रेमोन्मत्त करने की शक्ति थी। सौन्दर्य और युवावस्था को सदा कायम रखना भी एक कला है और इस कला का रहस्य, मस्तिष्क

और शरीर को सदा युवा रखना है । यह ज्ञान, व्यायाम, संयम, सच्चरित्रता और साथ ही साथ सुन्दर स्वाभव से सहज संभव हो सकता है । सुंदर मिष्ट स्वभाव रखना और सदा प्रसन्न चित्त रहना किसी भी मानव-शरीर के रूप को आकर्षक और सुन्दर बनाये रहने में बड़ा काम देता है । फ्रान्स में एक कहावत है "*Chaque femme a loge qu'elle parait* जिसका अङ्गरेजी अनुवाद है "Every woman is the age she appears to be" प्रत्येक स्त्री की अवस्था वही होती है जो उसके रूप से प्रकट होती है । इसका मर्म यही है कि कोई स्त्री उसकी अवस्था कुछ ही क्यों न हो जाय, अगर उसमें बुद्धि हो, तो सदा युवा बनी रह सकती है । तुम इसलिए इन बातों की ओर सदा ध्यान रखना और स्वस्थ शरीर स्वस्थ मस्तिष्क और सुन्दर स्वभाव को कभी अपने से दूर न करना, साथ ही क्रोध, चिन्ता, दु:ख, डाह, ईर्ष्या की प्रवृत्ति को अपने पास भी न फटकने देना ।

मेरी अन्तिम सीख तुम को इतनी ही है कि शरीर ही की भाँति मस्तिष्क की पुष्टि के लिए विद्यालोलुप बनना, संसार के ज्ञान को साधारण रूप से अपने अधीन रखने के लिए अधिकतर अपने जीवन का समय पठन-पाठन में बिताना, जीवन की प्रत्येक घड़ी में श्रेष्ठतर-जीव बनने की चेष्टा करना, भूलकर भी आलसियों की भाँति पड़े पड़े या सखी-सहेलियों के बीच, गप शप में, या दूसरे नर-नारियों की चर्चा में जीवन की बहुमूल्य घड़ियों को नष्ट मत करना और इस अनन्त सत्य को सदा ध्यान में रखना कि "(Loose morals are direct results of loose conversation.)" किसी के नैतिक पतन का प्रधान कारण, उसका गन्दी नि:सार बातचीत में संलग्न रहा करना हुआ करता है ।

यह सदा ध्यान में रखना कि विचार और ख्याल सब कुछ है और कर्म केवल प्रतिफल मात्र है । गन्दे विचार गन्दे कर्म को

जानेंगे ही इसमें सन्देह नहीं।

मैं बार बार तुमसे श्रेष्ठ-जीव बनने और अधिक के अधिक सुशिक्षिता होने के लिए क्यों कहता हूँ। इसका रहस्य भी तुमको बतला देना चहता हूँ कारण यह है कि इससे तुमको आत्मज्ञान (Consciousness) होगा और जहाँ किसी स्त्री को आत्म-ज्ञान हो गया, और वह अपने उद्देश्य और जीवन के रहस्य को समझने लगी वह फिर अपने पति की सखी सखी और सहचरी हो जाती है, वह दासी और खेल की एक चीज नहीं रह जाती और इस तरह से अपने पति पर ही नहीं वरन् संसार पर अपना सिक्का जमा कर वह अपने जीवन के उद्देश्य को सिद्ध करने में समर्थ होती है।

अन्त में तुमको शकुन्तला के इन शब्दों की याद दिलाकर

*"सा भार्या या गृहे दक्षा, सा भाया या प्रजावती।
सा भार्य्या या पति प्राणा, सा भार्य्या या पतिव्रता॥
अर्धम् भार्या मनुष्यस्य, भार्या श्रेष्ठतमः सखा।
भार्या मूलम् त्रिवर्गस्य (धर्म, अर्थ, काम) भार्या
मूलं तरिष्यतः।

मैं ईश्वर से यही प्रार्थना करता हूं कि तुम पर वह ऐसी कृपा करे कि तुम "भार्या मूलम् त्रिवर्गस्य" इस सत्य को अपने जीवन से चरितार्थ कर सत्य सिद्ध कर दो।

तुम्हारा
बाबूजी

---

*पत्नी वही है जो गृह-कार्य में दक्ष है, पत्नी वही है, जो सुतवती है, पत्नी वही है जो पति की प्राण है, पत्नी वही है जो पतिव्रता है, पत्नी पुरुष की अर्द्धाङ्गिनी है, पत्नी से बढ़ कर दूसरा मित्र नहीं, पत्नी तीन फलों (धर्म, अर्थ, और काम) को देने वाली है और पत्नी संसार-सागर पार करने में सब से बड़ी सहायिका है।

विवाह सम्बन्धी बातें

शान्तिकुटी

शिमला

८-८-२७

"जोगी जुगत जानी नहीं,

कपड़े रंगे तो क्या हुआ" ?

प्यारी शीला बहिन,

विवाह तुम्हारा हो गया। उम्र तुम्हारी इस समय तेरह-चौदह होगी। सुनती हूं, ससुराल में रहने भी लगी हो। खेद है, तुम्हारे विवाह के समय उपस्थित न हो सकी। बाबू जी ने लिखा था, चाची जी ने भी बहुत तरह से कहलाया था, किन्तु यहाँ इनकी तबीयत अच्छी न थी। जाने के लिए तो इन्होंने कह दिया था; लेकिन यहाँ कोई था नहीं, मेरे जाने से इनको तक़लीफ़ होती, इसी लिए नहीं आई। आशा है, गैरहाज़िरी के लिए तुम मुझे माफ़ कर दोगी।

हम तुम बचपन से साथ रहीं, साथ खेलीं, साथ पढ़ीं और उठी बैठीं। तुम्हारे विवाह के समय तुम्हारे पास होने में मुझे बड़ी खुशी होती। एक बार फिर विवाह के दृश्य मेरी नज़रों के सामने नाच जाते, तुम्हारी खुशी में मैं भी शरीक होती, विवाह के कामों में चाची जी के हाथ बँटाती, बाबू जी को तुम्हारे लिए जोड़े बनवाने में सलाह देती दूल्हा भाई से भी हँसती बोलती उनसे कहती देखो, मेरी फूल सी सखी कुम्हलाने न पावे, इसे

धूप, जाड़े और गर्मी से बचाना, कभी भूल कर इसे टेढ़ी नज़र से न देखना, किन्तु सब मन की मन ही में रह गई।

विवाह एक विचित्र प्रथा है। इसके होते ही अपने पराये और पराये अपने हो जाते हैं। दूसरों की मुहब्बत अपनों से अधिक हो जाती है और विवाह अगर सुखकर सिद्ध हुआ है तो दूसरों के लिए कभी-कभी अपने और अपने सुख ताक़ पर रख दिये जाते हैं। "ब्याही बेटी पड़ौसन दाख़िल" की कहावत झूठ नहीं है।

तुम्हारे जीजा जी की तबीयत ख़राब थी। दस-बारह दिनों से उनको ज्वर आ रहा था, ऐसी हालत में उनको छोड़ कर भला कैसे आती? खास कर, जब वह मेरे लिए सदा सब कुछ करते रहते हैं, तनिक सी छींक भी आई तो बेचैन हो जाते हैं, और डाक्टरों, वैद्यों और हकीमों के दरवाज़े दौड़ने लगते हैं। एक मुश्किल यह भी थी कि पानी भी मेरे ही हाथों का उनको अच्छा लगता है, पान की गिलौरियाँ भी मेरे ही हाथों की उनकी मीठी लगती हैं, खाना महराजिन ही पकाती हैं किन्तु अगर खाना मैं न परसवाऊँ और सामने बैठ कर न खिलाऊँ तो खाना भी वह नहीं खा सकते।

तुम्हारी समझ में ये बातें न आई होंगी, तुम कहती होगी बातें बना रही है, किन्तु, बीबी रानी, दो ही चार दिनों में—अगर दूल्हा भाई समझदार हैं, जैसा सुनती हूं—यही सब नहीं, हज़ार गुना, इससे ज़्यादे तुम्हारी समझ में आने लगेगा और तब मेरी अनुपस्थिति के लिए तुम मुझको सहज में ही माफ़ कर सकोगी।

तुम सोचती होगी दुनिया भर की बातें मैंने बक डालीं किन्तु तुमको तुम्हारे विवाह पर बधाई नहीं दी। ठीक है, सोचती होगी, ऐसा अच्छा दूल्हा मिला, ऐसा अच्छा घर मिला, इतने ज़ेवर और कपड़े मिले कि हर वक्त गुड़िया ही बनी रहती हो तुम्हारी ज़रा सी ख्वाहिश ससुराल वालों के लिए क़ानून हो रही है, सब

लोग बहूरानी का ही मुंह ताकते रहते हैं, जिसको देखो, बहूरानी की खुशी के लिए सब कुछ कर रहा है किन्तु, बीबी रानी, मेरा सिद्धान्त यह है कि किसी भी व्यक्ति को सुखी मत समझो जब तक तुम उसका भविष्य और अन्त न देख लो। दूसरे, विवाह फूलों की सेज के साथ ही कांटो का छपरखट भी हो सकता है।

सबसे पहिले विवाह की आधुनिक प्रथा मानव-समाज के लिए आदर्श-प्रथा नहीं है। एक व्यक्ति का अपनी स्वतंत्रता से हाथ धोकर दूसरे का आश्रित हो जाना, जब कि पति के अधिकार या स्वत्व ही स्वत्व होते हैं और पत्नी के कर्तव्य ही कर्तव्य, मानव-समाज या व्यक्तियों के विकास के लिए श्रेयस्कर नहीं। दूसरे, विवाह सुखमय और सफल हो, यह बहुत कुछ पति और पत्नी पर निर्भर होता है। मार्ग में कठिनाइयाँ इतनी हैं कि उनकी गणना करना भी कठिन है। बीहड़ पहाड़ की चढ़ाई है, जरा सी आँख चूकी या पैर ने ठोकर खाया कि नीचे पाताल या खड्ड में दिखाई देते हैं। और इसके ऊपर विवाह हो जाता है हम लोगों का किस अवस्था में? भला तुम्हारी उम्र तो तेरह-चौदह की है। मैं तो बारह की ही थी। ईश्वर को हजार धन्यवाद है, तुम्हारे जीजा जी मुझको बहुत अच्छे मिले, मैं पग पग पर भूलें करती थी, कुछ जानती ही न थी किन्तु उनकी पेशानी पर बल मैंने कभी नहीं देखा। त्यौरियाँ चढ़ी हुई कैसी होती हैं मैं जानती ही नहीं; अच्छा बना तो, बुरा बना तो सदा उनको हँसते ही पाया, बच्चों को भी बताने में कभी-कभी लोगों को गुस्सा आ जाता है लेकिन इनको गुस्सा आया यह मैंने कभी नहीं देखा। जो बात की, सदा हँसकर, हजार बार अगर मुझको समझाना पड़ा तो हजार बार हँस कर, खेला कर, बच्चों की भाँति ही समझाया। एक बार में न समझी, दस बार में समझी लेकिन उनका तर्ज सदा यही रहा।

बीबी रानी! हँसती होगी, कहती होगी कैसी पगली लड़की थी। आखिर कौन सी बातें थीं जो समझ में ही नहीं आती थीं। कहती होगी अच्छे, नाज़बरदार, चेरे, जीजा जी मिल थे, मैं नाज़बारदारी का लुत्फ़ उठाती थी, उनसे गुलामी कराती थी किन्तु नहीं, बीबी रानी, ज्यों-ज्यों बड़ी होगी, जैसे-जैसे कामरी भीगेगी वैसे-वैसे जानोगी।

तुम्हीं सोचो, मैं या तुम्हीं क्या जानती हो ? अपने जीजा जी की बात जाने दो। बताओ हमारे दूल्हा भाई को ही तुम क्या जानती हो ? उनको क्या पसन्द है, उनका मिज़ाज कैसा है, किन बातों से वह ख़ुश होते हैं, उनको नापसन्द क्या है, क्या बतला सकती हो ?

संसार एक समुद्र है। संसार-यात्रा सुखमय हो, सत्यनारायण के व्रत के समान थोड़े से थोड़े परिश्रम और कष्ट में अधिक से अधिक सुख मिले इसके लिए मानव-समाज के मस्तिष्क ने विवाह सी प्रथा को जन्म दिया। मैं कह चुकी हूं, मैं इसको सर्वश्रेष्ठ प्रबन्ध नहीं समझती। मेरी समझ के सर्वश्रेष्ठ व्यवस्था वह होगी जिसमें पति पत्नी का या पत्नी पति की आश्रित न हो। जिसमें पत्नी आर्थिक रूप से बिलकुल स्वतन्त्र हो और जिसमें पति पत्नी विवाह की प्रथा और पाधा और पुरोहितों से ही बाँधे न जाकर एक दूसरे के प्रति अगाध स्नेह की रज्जुओं से बाँधे जाँय, जिसमें पुरुष पति नहीं, प्रभु या अधिकारी नहीं, सखा और श्रेष्ठतम सहचर हो और पत्नी पति की ज़रखरीद सम्पति न होकर पूर्ण स्वतन्त्र सखी और सहचरी हो। किन्तु अभी इस युग के आने में युगों की देर है। इस समय में तो अधिक से अधिक हम इस आदर्श के निकट जितना पहुँच सकें वही अच्छा है।

और जो चाहे हो, यह सत्य है कि संसार-यात्रा के लिए मानव-मस्तिष्क ने विवाह की प्रथा रूपी नौका का निर्माण किया

है। पति और पत्नी यात्री हैं और नैया के नाविक भी। तुमने देखा होगा कि टेनिस के दिग्गज खेलने वाले भी जब टूर्नामेन्टों में खेलते हैं तो डबल में वही दो खेलते हैं जो सदा या कुछ दिनों एक साथ खेल चुके होते हैं। अगर किसी मैच में दो नये आदमी एक साथ खेलने के लिए रख दिये जाते हैं तो या वे एक दूसरे के खेलने के क्रम से परिचित होते हैं या एक दूसरे को खेलते हुए देख चुके होते हैं, या बातों बातों में एक दूसरे की विशेषताओं और त्रुटियों को जान लेते हैं, या मैच खेलने के पहिले एक दो गेम साथ रह कर खेल लेते हैं। दिग्गज खिलाड़ियों के लिए भी यह आवश्यक होता है, इसके विपरीत, खेल के लिए नहीं, संसार यात्रा के लिए, जिसकी सफलता पर जीवन का सुख दु:ख निर्भर है; विवाह रूपी प्रथा द्वारा दो अपरिचित बच्चे एक साथ छोड़ दिये जाते हैं और आशा यह की जाती है कि दोनों सुखी और सफल जीव हों।

सच पूछा जाय तो यह वैसा ही है जैसे किसी के माता-पिता अपने बालक या बालिका को एक सितार दे दें, बिना उसके सम्बन्ध में उसे किसी प्रकार की कुछ भी शिक्षा दिए हुए, और आशा यह करें कि वह बालक या बालिका सितार से राग और रागिनियों को पैदा करने लगे। सच पूछा जाय तो हम लोगों की वैवाहिक अवस्था के लिए "राग ताल का हाल न जाने, दोनों हाथ मजीरा" की कहावत ही ठीक है।

तुम्हीं बतलाओ, हम कर ही क्या सकती हैं? माना कि सितार में ही राग रागिनियाँ सब मौजूद हैं किन्तु हम को तो स रे ग म का भी ज्ञान नहीं, स्वर किसको कहते हैं यह भी नहीं जानतीं, सात स्वरों का नाम भी कभी हमको नहीं बताया गया, उनको या तारों को मिलाना भी हमको कभी सिखाया नहीं गया, फिर जब जड़ सितार से बिना अच्छी तरह से शिक्षा पाये हम

साम्य,* स्वरैक्य या तादृश्य नहीं पैदा कर सकतीं तो फिर एक पति रूपी सितार से-जो जड़ नहीं जीव है और जिसकी तबीयत की रविशें सितार के स्वरों के विभिन्न† भेदों से कहीं ज्यादा हैं किन्तु जिसको विवाह की प्रथा भेट स्वरूप हमको दे देती है और जिसको पहिले हमने कभी नहीं जाना—हम कैसे स्वरैक्य या साम्य पैदा कर सकती हैं ? तमाशा यह है कि विवाह का उद्देश्य और अर्थ ही दो जीवों में अधिक से अधिक समता, तादृश्य और स्वरैक्य पैदा करना और दो हस्तियों के तारों को मिलना है।

अब तुम समझ गई होगी कि तुम्हारे विवाह पर मैंने तुमको बधाई क्यों नहीं दी। सच मानों, बाबा तुलसीदास ने ठीक ही कहा था "तुलसी गाय बजाय के देत काठ में पाँव।"‡

शीला ! अभी तक तुम गुड़ियाँ खेलती थीं। मैं जानती हूं, दो चार किताबें भी तुमने पढ़ ली हैं किन्तु यह सब कुछ नहीं है। सच पूछा जाय तो जीवन का अ आ इ ई अब तुम शुरू करने वाली हो। अब जैसा पढ़ोगी और सीखोगी वही तुम्हारे आगे काम आयेगा, इसीलिए तुमको बधाई न देकर मैं सचेत कर कह देना चाहती हूँ कि विवाह सुख नहीं कर्तव्यों का स्थल है, सुख और चैन के दिन गुड़ियों के खेलने के दिन थे, अब तो तुम्हारी पग-पग पर परीक्षा होगी और सुखी तुम जभी हो सकोगी जब सुख का मूल्य तुम दे सको, जब सुख को ख़रीदने की तुम में बुद्धि और शक्ति हो, जब सुख वास्तविक सुख को तुम पहिचान सको और उसकी कद्र कर सको। अब तुम्हारा सुख तुम पर ही निर्भर नहीं

---

*Harmony.

†Variations.

‡एक पुरानी कहावत यह भी है "मौत अच्छी पर मौर नहीं अच्छी।"

है, अब तुम अकेले सुखी हो ही नहीं सकतीं, अब तुम सुख, पूरा सुख, सच्चा सुख तभी अनुभव कर सकोगीं जब दूल्हा भाई, तुम्हारी सासू जी, तुम्हारे नये बाबू जी आदि सब सुखीं हों। अपने ही सुख का नहीं इन सब के सुखों का भी भार अब तुम पर ही है।

अब कहो, कैसी कठिन तपस्या है, कैसा कठिन व्रत है, फिर तुम ही वतलाओ इस कठिन तपस्या को आरंभ करने पर मैं तुमको बधाई कैसे देती ? विशेष कर जब मैं जानती हूँ कि सौ में पचास इस तपस्या में बुरी तरह से असफल होकर बड़े कष्ट से जिन्दगी के दिन पूरे करते है, जब बचे हुए पचास में से चालीस अज्ञान से या ज्ञान से रो पीट कर किसी तरह खुश हो लेते हैं और जब सौ में केवल पाँच या इससे भी कम वास्तव में सुखी जीवन व्यतीत करते हैं।

मैं इसी लिए तुमको सचेत किये देती हूं। विवाह को गहनो मिठाइयों और मोहनभोग का देने वाला समझने की भूल, भूल कर मत करना, हज़ार काँटों के बीच जैसे गुलाब होता है ठीक उसी तरह से विवाह में सुख होता है और विवाह से सुखी बड़भागी ही होते हैं।

तुम मेरी बाल्यावस्था की सखी हो, तुमको मैं प्यार भी बहुत करती हूँ, मेरे कोई छोटी बहिन न थी, मैंने तुमको सदा अपनी ही बहिन समझा, आज इसी लिए मैं ने तुमको यह सब लिखा। तुम अभी निरी बालिका हो, मैं इसी लिए चाहती हूँ कि अभी अपनी शक्तिभर मैं तुमको तुम्हारे इस नये जीवन में सफलता प्राप्त करने में सहायता दूँ। कहीं तुम मेरे पास होतीं, तो हर घड़ी तुम से बातें कर मैं तुमको बहुत कुछ बतला देती, दूल्हा भाई की प्रकृति का परिचय प्राप्त कर तुम्हारे लिए तुम्हारा मार्ग कुछ सरल कर देती किन्तु दूल्हा भाई क्यों आने लगे, और फिर तुम्हारी

सासूजी अभी ही अपने गले की हार, चन्द्र मुखी बहू को अपने से क्यों जुदा करने लगीं ? खैर, तुमको मैं पत्र बराबर लिखा करूँगी, अपने अनुभव से बहुत कुछ तुमको बताने की चेष्टा भी करूँगी; किन्तु देखो, एक शर्त है मिश्री की डली बन दूल्हा भाई के प्रेम में दिनरात इस प्रकार घुलने न लगना कि मेरी सुध ही न रहे; साथ ही सब बातें मुझको सच्ची-सच्ची बराबर लिखती रहना नहीं तो तुम्हीं बतलाओ जिस डाक्टर से तुम अपना पूरा-पूरा सच्चा हाल न कहोगी वह तुम्हारा इलाज क्यों कर, कर सकेगा ? अच्छा तो बस, अब बिदा होती हूँ। तुम्हारे जीजा जी के कचेहरी से आने का समय हो गया है, जल पान सब तैयार रहना चाहिए, मकान नौकर चाकर इस तरह साफ़ सुथरे रहने चाहियें कि कहीं गंदगी का नाम न हो, साथ ही मुझको कपड़े बदल बाजा ले कर भी बैठ जाना चाहिए, जिसमें बँगले की दीवारें भी गाती और हँसती दिखाई दें और दिन भर की झंझटों और परिश्रम को मेरे पास आते ही वह भूल जाँय। एक बात कहे देती हूं, देखो दूल्हा भाई के सर बहुत मत चढ़ना, ज़बान की कतरनी को काबू में रखना और फ़िकरेबाज़ी उतनी ही करना जितनी वह सह सकें।

तुम्हारी—
शांति

सुहागरात

शान्तिकुटी
शिमला
१३-८-२७

"मोहनं नारभेत्तावद्यावन्नोत्कंठिता प्रिया !
अन्यथा तत्सुखोच्छित्तिर शीतेऽर्करादिव ॥"

(नागर सर्वस्वम्)

शीला बहिन,

तुम्हारा पत्र मिला। पढ़ कर बड़ी खुशी हुई। आज चाची जी, कल ताई जी, परसों बुआ जी, मौसी जी, नित ही तुमको दावतें दे रही हैं और कपड़े और गहने तुमको खूब मिल रहे हैं, यह प्रसन्नता की बात है ही। ईश्वर करता विवाह, इन्हीं सब बातों का नाम होता, उससे सुख सदा ऐसा ही मिला करता और विवाह इन्हीं सुखों का समूह होता। लेकिन मैं तुमको पहिले ही सचेत कर चुकी हूँ, सावधान रहना, यह सब दो-चार ही दिन का तमाशा है। विवाह ऐसे सुखों का देने वाला तभी सिद्ध हो सकता है जब तुम और हमारे दूल्हा भाई एक दूसरे के लिए ही जीवन धारण करना सीख लो। जब एक की इच्छा दूसरे के लिए कानून हो और जब दूसरे को प्रसन्न, सन्तुष्ट और सुखी रखना ही तुम दोनों के जीवन का ध्येय हो जाय। तुमने दूल्हा भाई की बड़ी प्रशंसा की है। तनिक शर्म भी नहीं आई, तुम तो अभी से ही उड़ने लगीं। अभी से जब इतना इतराने लगीं, अभी ही जब यह हालत है तब तो यही कहना पड़ेगा "अली कली ही में बिंधी आगे कौन हवाल।" यह सब इसी लिए कि वे अपने हैं

या वास्तव में ही वह बहुत अच्छे हैं। तुम्हारे जीजा जी भी दूल्हा भाई की बड़ी तारीफें करते हैं। बहिन ! मर्द भला कब दूसरे मर्द की तारीफ़ नहीं करते। यह तो कुछ हम स्त्रियाँ ही ऐसी हैं कि हमारे मुँह से कभी दूसरी स्त्री की प्रशंसा नहीं निकलती, और अगर कभी किसी की प्रशंसा कानों में पड़ भी जाती है तो हम चट चार ऐब गिनाने को तैयार हो जाती हैं।

हाँ, तो कल रात में तुम्हारे जीजा जी दूल्हा भाई की प्रशंसा कर रहे थे। कह रहे थे, बड़ा होनहार खूबरू जवान है; मगर, बीबीरानी, मैं तो उनको जभी अच्छा समझूँगी जब कुछ दिनों बाद भी तुम उनको अच्छा कहो और इसी तरह से उनकी तारीफों के पुल बाँधो। आम तो बहिन खाने पर ही अच्छे बुरे मालूम होते हैं। जब तुम्हारे गले वे उतर जाँय, दाँतों में रेशे तकलीफ न दें, गूदा भी मज़ेदार हो और गुठली नाम की ही निकले तब मैं भी अच्छा कह दूँगी, नहीं तो, शुरू में तो बहिन सब मर्द बड़े अच्छे होते हैं, अपना असली रूप ये ज़रा देर में प्रकट करते हैं और पर झाड़ कर अलग तो यह कुछ दिनों बाद होते हैं।

तुम्हारी भेजी हुई तस्वीर से दूल्हा भाई का रंग रूप, चेहरा-मोहरा तो अच्छा दिखाई देता है, दुबले ज़रूर हैं, सो तुम ही कहाँ की मोटी हो ? तुम्हारी हड्डियों पर भी तो मांस का नाम नहीं है। वह भी दुबले हैं, यह अच्छा ही हुआ, नहीं तो, तुम्हारी ससुराल वालियाँ यही कहतीं कि घर में खाने को नहीं जुरता था। लड़की के बदन पर मांस ही नहीं है। अपने बेटे की हालत देख कम से कम हम लोगों को तो वह लोग कुछ न कहेंगी, नहीं तो आये दिन यही ताना रहता कि लड़की को खिलाने तक को घर में नहीं था।

तुमने लिखा है कि दूल्हा भाई बाजा बहुत अच्छा बजाते हैं, तुमको भी गीत कुछ याद कराने लगे हैं, ताश-बाश भी घंटे आध घंटे तुम्हारे साथ बैठ कर खेलते हैं और पढ़ने लिखने से जो समय बचता है वह सब तुम्हारी खातिर में ही सर्फ होता है। मालूम तो होते हैं होनहार किन्तु मुझको इन बातों से कोई बहुत सन्तोष नहीं। इन बातों से ही मेरी परीक्षा का काम नहीं चल सकता। मैं तो कोई विशेष ही बात जानना चाहती हूँ, फिर तो मैं एक किनकी से ही बटलोही के समस्त चावलों का हाल जान लूँगी।

तुम्हारे पत्र से मालूम होता है अभी तक तुम विवाह की पहिली सीढ़ी से भी अनजान हो, और अभी दावतों और गहनो कपड़ो का ही लुत्फ़ उठा रही हो। चार पेज का खर्रा लिख गईं मगर तत्व की बातों के सम्बन्ध में कैसी चुप्पी साधी है? दूल्हा भाई तो अभी पढ़ते ही हैं, जानते ही क्या होंगे किन्तु मैं तुमको यह बतला देना चाहती हूँ कि विवाह की पहिली सीढ़ी सुहागरात की बातों का समस्त जीवन पर प्रभाव रहता है। कभी-कभी सुहागरात की भूलों के कारण जीवन भर पति-पत्नी सुखी नहीं हो सकते। बात कहने सुनने में महा साधारण सी है, कोई इस बात को महत्व भी प्रदान नहीं किया करता किन्तु मेरी सुन लो और गाठ बाँध लो कि सुहागरात से और समस्त वैवाहिक जीवन से घना सम्बन्ध है। वैवाहिक-जीवन रूपी मन्दिर की सुहागरात प्रवेशिका या यूँ समझ लो कि वैवाहिक जीवन रूपी मोहरात्रि की सुहाग-रात्रि सन्ध्या है और इसी के सुन्दर और सुहावनी होने पर समस्त जीवन का सुखदुख निर्भर है।

बड़े अन्धेर की बात है कि ऐसी महत्वपूर्ण बात के सम्बन्ध में, जिससे भविष्य जीवन से इतना घना सम्बन्ध है, हम लोगों

को कुछ भी नहीं सिखाया जाता। हमको पढ़ना लिखना सिखाया जाता है, खाना बनाना सिखाया जाता है, सीना पिरोना और कसीदे काढ़ना भी हम सीखती हैं, हम में जो अधिक किस्मत वाली हैं वे गाना बजाना, टेनिस खेलना आदि भी सीखती हैं, तात्पर्य यह है कि गृहस्थी के प्रबन्ध की बातें हम जान लें, विवाह के बाजार में हमारा मूल्य अधिक हो जाय और हम अच्छे घरवाला, सुघर पति पा सकें इसके लिए सब शिक्षाएँ हम लोगों को दी जाती हैं किन्तु हमको वही नहीं सिखाया जाता जिसकी इन सब बातों से अधिक हमको आवश्यकता है, जिसका सच पूछा जाय तो असल नाम ही विवाह है और जिससे ही हम वैवाहिक जीवन को सुखकर बना सकती हैं। विवाह क्या है, हम नहीं जानतीं, पति को हम अपना कैसे बना लें, वह हमसे क्यों कर खुश रहे, वह हमारा कैसे हो जाय यह सब हमको कुछ भी नहीं सिखाया जाता।

आज कल के लड़कों को भी अच्छी से अच्छी शिक्षा इसलिए दी जाती है कि वे संसार में अधिक से अधिक धन कमायें, और इज्जत पैदा कर अच्छी बीबी घर लाकर गृहस्थ हो जाँय। एक नवयुवक को एक अच्छे नागरिक बनने की शिक्षा दी जाती है, देश के प्रति उसे उसका कर्तव्य सिखाया जाता है, स्वराज्य की लड़ाई लड़ने के उपयुक्त वह बनाया जाता है, देश की भलाई और शान बढ़ाने के लिए उससे आशा की जाती है कि अच्छे से अच्छे, परिश्रमी, दिमाग वाले, सुशील, तगड़े, देश के त्राता बनने योग्य बच्चों को वह जन्म दे किन्तु भूल कर उसे यह नहीं सिखाया जाता कि उन बच्चों की माता, अपनी बीबी, के साथ वह कैसे व्यवहार करे, उसके साथ सुखी जीवन कैसे व्यतीत करे और किस तरह से हृष्ट-पुष्ट हँसते हुए बच्चों का वह जनक बने।

ऐसी महत्वपूर्ण बातों का ज्ञान "राम आसरे, खुदा की राह" पर छोड़ दिया जाता है और इसका नतीजा कैसा भयावह होता है यह इसी बात से प्रकट है कि अधिकतर विवाहिता जोड़े सुखी नहीं होते।

बालिकगण तो भला इष्ट मित्रों, तथा पुस्तकों से कुछ जान भी लेते हैं, वह ज्ञान कितना ही अधूरा क्यों न हो, किन्तु हम बीबी रानियाँ तो कुछ जानती ही नहीं, किसी से कुछ पूछ भी नहीं सकतीं और सब कुछ "चुपचुप" और "ना बाबा" के जाल से छिपा रहता है।

पहिले तो सुहागरात का हमको पता ही नहीं होता, अम्मा जी, बहू जी, भाभी जी या सासू जी एक पंडित से सुहागरात की मुहूर्त चुपके से बिचरवा लेती हैं और किसी बहाने बलि के बकरे के समान हम पति-देव के कमरे में भेज दी जाती हैं। उनको भी कुछ पता नहीं होता, अगर कहीं दस साढ़े दस में पढ़ लिख कर या दोस्तों में गप कर वह घर आने वाले हुए तो उनके आने तक बीबी रानी भीगी बिल्ली सी एक कोने में पड़ीं सो जाती हैं; अगर जागती भी रहती हैं तो परीशान, भय से, भीरुता से पसीने में तर, उनको यही नहीं मालूम रहता कि उनसे आशा क्या की जाती है और उनको क्या करना या कहना चाहिये। स्वभवात: और सहज ज्ञान से वह इतना तो जान लेती हैं कि पति से मुलाकात होगी किन्तु यह क्या है, इसका उद्देश्य और इसकी आवश्यकता क्या है यह सब कुछ बेचारी नहीं जानतीं।

पतिदेव ख़ुद कुछ सुन चुके होते हैं और वह आदि पुरुष, बर्बर पुरुष* की प्रकृति का परिचय दे इस तरह बीबी से व्यवहार करते हैं मानो वह एक हृदय हीन गुड़िया है या मानों वह भी

*Cave man.

उनके समान कुछ जानती है। वह यह भूल ही जाते हैं कि वह बेचारी शरीर के समान ही हृदय से भी कुमारी है। आश्चर्य तो यह है कि वह यह भी आशा करते हैं कि उनकी पाशविकता में बीबी भी खुशी से उनकी सहचरी हो जाय या उनकी हैवानियत के सामने सर झुका दे।

पतिदेव की भूलों की गणना इसी रात्रि से शुरू होती है, इसी रात्रि में पत्नी के हृदय-पटल पर पति का एक चित्र खिच जाता है जो जीवन पर्यन्त बना रहता है। पत्नी के भी कंटकाकीर्ण कर्तव्य-पथ का श्रीगणेश इसी रात्रि से होता है और इसी एक रात्रि के आचरण के साथ उसका सारा भविष्य बँधा रहता है।

सुहागरात से, जैसा कि उसका नाम पुकार-पुकार कर कहता है, अचल सोहाग से घना संबन्ध है। इस रात्रि को पति का उत्तरदायित्व अत्यधिक होता है। पत्नी बेचारी तो कुछ जानती ही नहीं, साथ ही वह कर ही क्या सकती है, किन्तु अगर पतिदेव बुद्धिमान हों तो फ्रान्सीसी माता के उपदेशानुसार* उनको भेड़िये और मेमने की कथा को चरितार्थ नहीं करना चाहिये।

पति-संसर्ग से अधिक सुखदायी वस्तु संसार में बहुत कम हैं। इसमें जो सुख मिलता है, दो आत्माएँ जिस तरह इसमें तल्लीन और एक हो जाती हैं, उसका वर्णन शब्दों द्वारा हो ही नहीं सकता। जो वस्तु इतनी उत्तम हो, तुम समझ सकती हो उसके सुख को बहुत समझ बूझ कर सावधानी और विवेक ही के साथ प्राप्त करना चाहिये। पाश्चात्य देशों में जहाँ पति, पत्नी से बिवाह के पहले से बराबर मिलता रहता है, जहाँ वह धीरे-धीरे कई वर्षों में अपनी

*"Don't worry my boy, your mistress is yours and can not escape you. But don't crush down on her like the wolf on the lamb, lest you gobble her up and go hungry"

प्रियतमा के प्रेम को प्राप्त कर चुका होता है, जहाँ पतिपत्नी एक दूसरे में तल्लीन और तद्वत् होने के लिए बिवाह और इस रात्रि की उत्सुकता से बाट जोहते रहते हैं वहाँ प्रथम रात्रि में ही पति पत्नी का संसर्ग उचित कहा जा सकता है। पत्नी भी हृदय से यही चाहती रहती है, पति की भी इच्छा यही रहती है इसमें सन्देह ही क्या किन्तु हम लोगों में पति रूपी एक अपरिचित व्यक्ति का ऐसा व्यवहार सर्वथा अनुचित और बेजा है।

यह ठीक है कि आदिकाल से पशुओं और असभ्य पुरुषों में यही होता आया है। होता भी क्यों न? हम बीबी रानियाँ वास्तव में हैं ही क्या? हमारी हस्ती क्या? पैर की धूल हैं, पापोश हैं, पति रोटी कपड़ा देता है, रहने को घर देता है, दासियों को चूँचराँ करने का हक़ कहाँ? विशेष कर जब कि वह पतिदेव की ज़र-खरीद सम्पत्ति, दासी या गुलाम होती हैं। पति मालिक है, कर्ता है, उसकी मर्ज़ी है, वह जो चाहे करे, पत्नी की मजाल कहाँ कि उफ़ भी कर सके और फिर पत्नी घर इसी लिए तो लाई ही जाती है, विवाह का इससे परे अर्थ ही क्या है? किन्तु, बीबी रानी! मैं आशा करती हूं कि दूल्हा भाई आदि पुरुष की बर्बरता का परिचय नहीं देंगे। विवाह का अर्थ वह धर्मानुकूल वेश्या-भोग और सस्ता से सस्ता व्यभिचार न समझेंगे, वह पढ़े लिखे हैं और इसलिए अधिक चतुराई इंसानियत और बुद्धि से काम लेंगे।

हमारे देश में जो लोग पत्नी को सखी, सहचरी, बनाना चाहते हों, जो चाहते हों कि उनके समस्त सुखों दुखों में वह समझदारी और सहानुभूति के साथ भाग ले उनके लिए तरीका वह है जो मैंने ऊपर बताया हैं, किन्तु जो पशु हैं, जिनकी नज़रों में पत्नी दासी है, गुलाम है, वह उनके लिए हैं और वे स्वयम् उसके लिए नहीं, वे पाशविकता और बर्बरता से काम लेते हैं और सदा ले सकते हैं। उनको न कोई मना करता है और न मैं

ही कुछ कहती हूँ। हाँ, समझदार मनुष्य को यह जरूर समझना चाहिये कि उसकी स्त्री का शरीर उसके प्रेम की मूर्ति और उसके बच्चों की माता की सुन्दर आकांक्षाओं का मन्दिर है, और इस लिए प्रगाढ़ भक्ति से प्रेरित एक भक्त ही की भाँति आदर, प्रेम और स्नेह के साथ ही पति को सदा पत्नी को प्रसन्न और उसकी अनुमति प्राप्त करके ही उसके शरीर को छूना चाहिये। शास्त्र की आज्ञा भी यही है। विवाह होते ही प्रथम रात्रि ही में पति का समागम सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है।

बीबी रानी! क्या कहूँ, आर्य सनातन सभ्यता कितनी उच्च श्रेणी की है। स्त्रियों का इतना आदर किसी सभ्यता में है ही नहीं, साथ ही आज कल यूरोपीय विद्वान जो बहुत खोज और विचार के बाद इस सम्बन्ध की बातें कह रहे हैं, वह सहज ही में हम को हमारे शास्त्रों में मिल जाती हैं। स्त्री का सर्वश्रेष्ठ स्वरूप, आदर्श और स्त्रीत्व के सर्वश्रेष्ठ चित्र जितने आज तक पश्चिमीय संसार ने खींचे है, महर्षि वेदव्यास ने उन सब का चित्र पहिले ही से खींच रखा है। सच बात तो यह है कि मेरी समझ में स्त्री-चरित्र को समझने और चित्रण करने वालों में वेदव्यास आज भी सर्व-श्रेष्ठ हैं, किन्तु यह तो विषयान्तर है। अच्छा, अब पति पत्नी के समागम के सम्बन्ध में शास्त्रों की आज्ञा को मैं तुमको सुना देना चाहती हूँ। आश्वलायन गृह-सूत्र में लिखा हुआ है:—

"गृह प्रवेश होमान्तरं ब्रह्मचर्य्यं विधत्ते! क्षार लवणाशिनौ ब्रह्मचारिणौ अलं कुर्वाणौ अधः शायिनो स्याताम्! अत ऊर्ध्वं

"गृह-प्रवेश के बाद होम करे और ब्रह्मचर्य धारण करे। नीचे ज़मीन पर सोये, नमक, खटाई, गर्ममसाला आदि न खाय। इस ब्रह्मचर्य की मर्यादा, तीन, तथा बारह रात्रि और एक वर्ष की है। इसके बाद पति पत्नी का सहवास और संसर्ग हो।

त्रिरात्रं द्वादश रात्रं संवत्सरं वा अत्र ब्रह्मचर्य्यं मर्यादयः उक्तत्वात्; ततः परम संभोगम् अनुजानाति।"

गोभिल गृह्य सूत्र में लिखा हुआ है:—

"तौ उभौ तत प्रभृति त्रिरात्रं अक्षार लवणाशिनौ ब्रह्मचारिणौ भूमौ सहशायीताम्!"

"वात्स्यायन" की आज्ञा है कि पति पहिले पत्नी का विश्वास-पात्र बने, उसके हृदय के प्रेम को प्राप्त करे और तब ही उसे छूये। "कन्याविस्रम्भण* के नाम से "कामसूत्र" में उन्होंने एक अध्याय ही इस सम्बन्ध में लिख दिया है। विवाह के बाद पति के कर्तव्यों का वर्णन करते हुए 'वात्स्यायन' ने लिखा है :—

संगतयोस्त्रिरात्रमधः शैय्या ब्रह्मचर्य क्षार लवणवर्जमाहारस्तथा सप्ताहं सतूर्य मङ्गल स्नानं प्रसाधनं सहभोजनं च प्रेक्षा संबन्धिनां च पूजनम्"।†

इन बातों के साथ ही साथ कितनी ही अन्य शिक्षायें हैं। तात्पर्य इन समस्त आज्ञाओं का यही है कि बधू के गृह प्रवेश के बाद वर और बधू ब्रह्मचर्य्य धारण करें। साथ ही ज़मीन पर सोयें, तीन रात्रि, बारह रात्रि, और एक वर्ष की इस ब्रह्मचर्य्य की मर्यादा है, इसके अनन्तर पति और पत्नी का सहवास हो। इसका अर्थ और कुछ हो या नहीं किन्तु इतना जरूर है कि दोनों एक दूसरे से सहवास होने के पहिले परिचित हो जाँय और एक दूसरे को कुछ तो समझ और जान ही लें। दूल्हा भाई को यह सब जानना और समझना चाहिये। अन्य

*Wining the cofidence of a girl.

†जमीन पर सोयें, ब्रह्मचर्य से रहें, नमक, खटाई, मिर्चा आदि न खाय। पति और पत्नी मंगल स्नान करें, सुन्दर वस्त्र और आभूषणों को धारण करें, साथ संगीत सुनें, खेल तमाशे देखे, संबन्धियों का उचित आदर करें और उनको भेट दें।

बातों के सिवा उपर्युक्त वाक्यों से यह भी सिद्ध है कि रजस्वला होने के बाद ही कन्या का विवाह होता था, कम से कम विवाह के बाद कन्या इतनी बड़ी होती थी कि पति का संसर्ग हो सके। इससे यह भी सिद्ध है कि आठ* नौ दस या ग्यारह वर्ष की कन्याओं का विवाह प्राचीन मर्यादा के विरुद्ध है।

तुम तो उनकी ही हो और वह तुम्हारे साथ जैसा चाहें व्यवहार कर सकते हैं, बुरा से बुरा सुलूक भी करें तो इस एकतर्फ़ी दुनियां में एकतर्फा डिग्री उन्हीं को मिलेगी। पुरुषों का संसार उनको निर्दोष और तुमको ही दोषी ठहरायेगा किन्तु उनको समझना चाहिये कि "चीन्ह न पहिचान खाला जी सलाम" की कहावत को वह चरितार्थ न करें। उनको समझना चाहिये कि तुम भी मानव हो, जीवधारी हो, शरीर तुम्हारा है, और उस पर तुम्हारा भी, कुछ ही सही, अधिकार तो है ही, माना कि तुम उनके हाथ बिक ही चुकी हो। ऐसी दशा में पराई चीज़ को बिला उसकी मर्ज़ी, ज़बर्दस्ती, छीन लेना और वह भी कैसी चीज, तुम्हारी अस्मत, तुम्हारी इज्ज़त, तुम्हारा सतीत्व, तुम्हारा सर्वस्व, पुरुषोचित नहीं, साथ ही सभ्यता के विरुद्ध और बेजा है।

उनको इतना तो मालूम ही होना चाहिये कि किसी भी स्त्री के लिए, विशेष कर जिसकी अवस्था बीस से कम है, पति का प्रथम समागम सुखकर नहीं कष्टकर होता है दुनिया के साधारण पुरुषों को एतबार भी न आयेगा किन्तु कुमारी के लिए कभी कभी यह इतना कष्टकर होता है कि वह पति से घृणा करने लगती है, उसे वह भय से देखने लगती है, यहां तक कि कभी-कभी उसे वह प्रेम की दृष्टि से देख ही नहीं सकती।

---

* "तिरिया तेरह मरद अठारह" की देश में पुरानी कहावत भी है।

पति देवों को इतना तो जरूर ही ध्यान में रखना चाहिये कि अपनी भूल, अपनी बर्बरता से वह पत्नी के हृदय को सदा के लिए अपने से दूर न कर दें, साथ ही यह ध्यान में रखें कि प्रथम समागम कुमारी कन्या के लिए कष्टकर होता है और इसलिए पशुता की बजाय स्नेह और बुद्धिमत्ता से काम लेना अच्छा होता है। उनको सदा इसका ख्याल रखना चाहिये कि गरीब पत्नी को कम से कम कष्ट हो। एक स्त्री-पुरुष-ज्ञान सम्बन्धी विशेषज्ञ का कहना है कि शुरू में विशेष कर आरंभिक महीनों में अगर थोड़ी सी ज्ञान-बुद्धि के साथ कोमलता, नम्रता और धीरता का अवलम्बन किया जाय तो वैवाहिक जीवन के समस्त अंगों पर इसका परिणाम बहुत ही सुखद होगा और पत्नी और पति दोनों ही स्वस्थ रह कर शरीर तथा मस्तिष्क के सम्मिलित सुखों का पूरा पूरा उपभोग करेंगे।

बीबी रानी! मेरा तो कहना है कि चार दिन, दस दिन, बीस दिन भी कामना की पूर्ति में लग जाँय तो कोई हानि नहीं क्योंकि इसका प्रत्येक स्त्री की स्थिति और उसकी बनावट से घना संबन्ध होता है।

एक चतुर फ्रान्सीसी विद्वान् का कहना है कि पुरुष को भूल कर भी अपनी पत्नी से रति के सुखों की आशा नहीं करनी चाहिये जब तक कि उसने उसे उसके देने के लिए उत्सुक और उद्यत नहीं बना लिया है। चतुर पति को यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि विवाह के बाद ही वह "स्त्री पर अपना प्रभुत्व, बेजा और भोंड़े तरीके से न प्रकट करे नहीं तो उसकी स्त्री उसे कमजोर कायर, और बर्बर समझेगी और स्त्री के हृदय पर का यह प्रभाव दोनों के भविष्य जीवन के सुखमय होने में बाधक होगा।"

चतुर पति को यह भी ख्याल रखना चाहिये कि पत्नी इतना जरूर समझती रहती है कि वह अपना सर्वस्व दे रही है, इसका उसके

दिल में बड़ा ख्याल भी रहता है और इसलिए बुद्धिमत्ता इस बात की अपेक्षा करती है कि पति पत्नी के हृदय में यह विश्वास पहिले करा दे कि वह, उस पर अहसान कर रही है, जो उससे प्रेम करता है, जो उसकी इज्ज़त को अपनी इज्ज़त समझता है और जो अपने जीवन की भांति उसकी फ़िक्र रखेगा और उसकी रक्षा करेगा। चतुर पति को यह भी चाहिये कि मनसा, वाचा, कर्मणा वह अपनी पत्नी को यह विश्वास दिलाये, कि संसार में वही उसके सर्व-श्रेष्ठ प्रेम की वस्तु है, वही उसके जीवन की, सब से अधिक मूल्य, महत्व और स्नेह की वस्तु है, उसकी सेवा करना, उसको सुखी बनाना, उसके जीवन का ध्येय है, और उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ वह कभी कुछ नहीं करेगा। तत्व सारी बातों का यही है कि पति को पत्नी से दाम्पत्य सुख प्राप्त करने के पहिले, पत्नी के हृदय के प्रेम को प्राप्त करना चाहिये।

दूल्हा भाई कितने बुद्धिमान हैं इसका पता मैं इन्हीं बातों से लगा लूँगी। अगर वह समझदार हैं तो उनको चाहिये कि पहिले वह तुमसे भले प्रकार परिचित हों, तुमको समझें, जानें, बूझें, तुमको अपने प्रेम-पाश में बाँधे, तुम्हारे हृदय-मन्दिर के इष्टदेव बनें, तुमको अपने प्रेम में मत्त कर तुम्हारी कामनाओं की जागृत करें, तुमको बेताब करें और कुछ दिनों उसी तरह से तुम्हारे प्रेम को प्राप्त करने की कोशिश करें जिस प्रकार से पश्चिमीय देशों में, विवाह होने से पहिले, पति पत्नी होने के पहिले; नायक और नायिका एक दूसरे के प्रेम को पाने का प्रयत्न करते हैं। एक दूसरे से भले प्रकार परिचित होने और एक दूसरे के प्रेम में पगने के बाद ही दाम्पत्य सुख स्वर्गीय सुख के बराबर हो सकता है। उनको सोचना चाहिये कि अपनी प्रसन्नता से उनके प्रेम में मत्त हो, बिलकुल बेताब होकर उन पर प्रसन्न हो, अगर अपने प्रेम की भेंट स्वरूप तुम अपना सर्वस्व उनके चरणों में वार दोगी तो अधिक सुख उनको

मिलेगा या छीना झपटी और जबर्दस्ती में जब कि तुम उनको नाम मात्र को जानती हो और तुम्हारा हृदय उनसे कोसों दूर है।

फिर तुम्हारे सामने आमों की ही मिसाल पेश करती हूं। फसल की चीज है और फिर यह फलों का राजा भी है। सोचो तो, कोई मेरे हाथ से आम छीन कर दांतों से कुतर कर खा जाय, इस तरह से मानो आँधी आ रही हो, तो उसे आम खाने का सुख मिलेगा या उसे स्वाद मिलेगा अगर हम दोनों इतमीनान से बैठे हों, मैं, आम को धो बना छिलका छील, बर्फ में रख कर, एक एक कतला उसके मुँह में देती रहूँ, मैं भी साथ साथ खाती रहूँ हँसती, बातें करती, रिझाती हुई उसे भी खिलाती रहूं, और वह भी एक एक कतले को मजा लेकर खाये। बहिन! जल्दी का काम, जबर्दस्ती का काम, शैतान का होता है, दाम्पत्य सुख में, जो स्वार्गीय सुख अनुभव करना चाहता हो उसे हैवानियत, जबर्दस्ती और जल्दी को तो देश-निकाला दे देना चाहिये। रसे रसे, स्वाद ले लेकर, हँसते-रिझाते और प्रेम से बातें करते हुए ही सब प्राप्त करना चाहिये। दूल्हा भाई को समझना चाहिये कि विवाह से दुलहन के शरीर पर जरूर कब्जा मिल जाता है किन्तु सच्ची दुलहन, दुलहन का हृदय उसको प्रेम में मत्त करने और उसके हृदय पर विजय प्राप्त करने से ही मिल सकता है। सुखी वैवाहिक जीवन का रहस्य इतना ही है और यही है।

जो कुछ मैंने ऊपर कहा है उसके समर्थन में कुछ भी कहने की जरूरत नहीं है, फिर भी सुहागरात की एक पत्नी की कथा इसलिए तुमको सुना देना चाहती हूं जिसमें तुम जानो कि हमारे धर्मग्रन्थों में कैसे कैसे रत्न छिपे पड़े हैं और कैसी कैसी महत्वपूर्ण शिक्षाएँ हम लोगों के लिए उनमें मौजूद हैं। स्कन्दपुराण की कथा है—एक राजा ने काशिराज की कन्या कलावती से विवाह किया था। विवाह के बाद वरवधू अपने घर गये और पति देव ने प्रथम

रात्रि ही को कलवती देवी से सहवास चाहा। कलावती ने उस समय बड़े मार्के की बातें कही थी और तुम देखो कि जो कुछ मैं आम की मीसाल में कह चुकी हूँ उससे वह कितनी मिलती जुलती है। पूरी कथा का भाग मैं आगे कभी तुमको सुना दूँगी इस समय केवल कलावती का जवाब सुनाती हूँ। कलावती ने पतिदेव से सुहागरात में जब वे बलात्कार करना चाहते थे कहा था :—

*"हूँ व्रत में स्थित, नृपति ! आप मत छूवें मुझको।
जानि सुधर्माधर्म, न सहसा खीचें मुझको॥
दम्पति का सुस्नेह-योग ही, प्रीति बढ़ाता।
सज्जन कहते, सरुचि सुसंगम मोद बढ़ाता॥
मुदित जभी मैं, तभी सुखद संगम भी होगा।
क्या सुख ? क्या सुस्नेह ? भोग यदि बल से होगा॥"
धृतव्रत, रोगी, रजस्वला अरु प्रीति-विहीना।
नर हित दुःखद नारि सबल अपहृत अरु दीना॥

*मा माम् स्पृश महाराज, कारणज्ञा व्रतेस्थिताम्।
धर्माधर्मो विजानासि, मा कार्षीः साहसम् मयि॥
"क्वचित प्रियेण भुक्तम् यद्रोचते मनीषिणाम्।
दाम्पत्योः प्रीति योगेन संगमः प्रीति वर्धनः॥
प्रियो यदा मे जायेत् तदा सङ्गस्तुते मयि।
का प्रीतिः किम् सुखम् पुंसाम्बलाद्भोगेन योषितम्॥
अप्रीताम् रोगिणीम् नारीमन्तर्वत्नीधृतव्रताम्।
रजस्वलामकामां चा न कामेत बलात्पुमान्॥
प्रीणनम् पालनम् पोषम् रक्षम् मार्दवम् दयाम्।
कृत्वा बधूमुपगमेद्युवतीम् प्रेमवान्पतिः॥
युवती कुसमे चैत्र विधेयम् सुखमिच्छिता।"

सदय हृदय से पाल पोषकर, प्रीति लगा कर।
उचित युवति में रमै, मंजु मृदु मोद जगाकर॥
*कुसुमित रमणी साथ रमण होता सुखकारी।
....

सुहागरात तुम्हारी हो गई तब तो कुछ कहना ही नहीं किन्तु यदि समय हो तो दूल्हाभाई से तस्वीर के इस रुख पर भी नजर डालने के लिए प्रार्थना करना। अभी तुम लोगों की उम्र ही क्या है और हो भी तो क्या ? अभी सच पूछा जाय तो तुम लोगों की भलाई इसी में है कि तुम लोग खेलो कूदो, पढ़ो लिखो, उठो बैठो, और हरवक्त दूसरे को प्रसन्न करते रहने की कोशिश करो। शरीर तो उनका ही है, कहीं चला तो जाता ही नहीं। अभी, बीबी रानी, तुम्हारी सेवा शुश्रूषा करें, देवी को प्रसन्न करें, तनिक तपस्या ब्रह्मचारी होकर करें, फिर बरदान भी ले लेंगे, नहीं तो मान न मान मैं तेरा मेहमान, यह कहाँ का न्याय है ?

यह भी बतला देना चाहती हूँ कि इस बात में "देर आयद दुरुस्त आयद" की बात बिलकुल सत्य है। जल्दी से कोई लाभ नहीं, पाशविकता तो बात ही दूसरी है। जितना बिलम्ब इधर वह सहन करेंगे, आगे चलकर उतना ही सुख भी वही भोगेंगे। यह ऐसा सुख है कि इसकी जितनी बाट जोही जाय उतना ही

---

*कुसुमित के अर्थ दो होने चाहिये। १. जिसे रजोधर्म होना शुरू न हुआ हो उसके साथ सहवास निषिद्ध हैं। २. साथ ही यह भी कि स्त्री कुसुम के समान होती है और उसके साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिये। जिस तरह से बल प्रयोग, और समुचित मान और आदर न करने से फूल नष्ट हो जाते हैं, सुगन्धहीन हो जाते हैं उसी तरह से स्त्री भी यदि उसके साथ जंगलीपन का व्यवहार किया जाता है तो स्त्रीत्वहीन हो जाती है। "कुसुम सधर्माणो हि योषितः सुकुमारोपक्रमाः" इति कामसूत्रे।

अच्छा और मजेदार होता है। यूँ भी आये दिन का* पति-संसर्ग अच्छा नहीं, जितनी ही तपस्या और जितने अधिक दिनों के बाद इसका रसास्वादन किया जायगा यह उतना ही अमृतमय होगा।

इसको दालभात का कवर समझना ठीक नहीं। निरन्तर के रसास्वादन से इन्द्रियों के रसास्वादन की शक्ति जाती रहती है, फिर कोई लुत्फ ही बाकी नहीं रहता, साथ ही यह, शरीर, समाज और देश सब के लिए घातक है। मगर, बीबी रानी, तुम किसी बात के लिए ज़िद न करना। उनको बहलाने की कोशिश करना, बहुत ज़रूरी हो तो हमारा यह पत्र ही उनके सामने रख देना, कहना एक मेरी सहेली की सीख यह है किन्तु न माने, बाबा तो उनकी चीज, तुम हाय हाय न करना। ये पुरुषगण समझते हैं कि हम सब मिट्टी से बनी हैं किन्तु ये सोने के हैं और यह कि संसार के समस्त प्राणी आपसे पैदा हुए किन्तु इनको ब्रह्मा ने अपने हाथ ही से सिरजा है और संसार इनकी सेवा के ही लिए उत्पन्न किया गया है। तनिक में ही इनकी नाक भौं चढ़ जाती है और इनका मुँह फूल जाता है।

संसार की समस्त सेवा मर्दों की करो, अपने को मिटा दो किन्तु ये कृतज्ञ नहीं होंगे, कभी धन्यवाद भी मुँह से नहीं देंगे किन्तु एक बात कभी भूल जाओ, एक छोटा सा काम बिगड़ जाये तो उसका ताना यह उठते बैठते जीवन भर देंगे।

---

*"यः संसेव्यते कामी कामिनी सततं प्रियाम्
तस्य संजायते यक्ष्मा धृतराष्ट्र पितुर्यथा।"

जो कामी नित्य ही कामवासना की तृप्ति में लीन होता है उसे धतराष्ट्र के पिता के सामान यक्ष्मा रोग हो जाता है।

हम स्त्रियों का तो कोई मूल्य ही नहीं है। साधारण पुरुषों का तो कहना ही क्या ? आदर्श-पुरुष राम ने एक धोबी के नशे या क्रोध में कुछ बक देने से, सीता सी सती को, अग्नि-परीक्षा ले लेने के बाद भी घर से निकाल दिया। धर्म के विधाता, धर्मराज युधिष्ठिर, द्रौपदी को, ज़रा सोचो तो, जुए में हार गये, फिर बहिन हमारी तुम्हारी गिनती काहे में है। पतिदेव ख़ुश रहें, हम लोगों के जीवन का उद्देश्य तो इतना ही है। अभी तो यही है किन्तु यह सदा यूँ ही रहेगा नहीं। अब हमारी बहिनें भी पढ़ लिख कर पंडिता बन रही हैं, खुद वकालत, डाक्टरी या नौकरी कर पैसा पैदा कर रही हैं। विवाह को भी यह ठुकराने लगी हैं। आवश्यक यही है कि हम लोग अधिकाधिक पढ़ें, अपना आदर कराना, अपनी बात मनवाना सीखें, फिर तो बहिन समय बदलेगा और हम लोग भी इन पुरुषों से नकदरौं कराकर ही इनको अपने पैर की धूल भी छूने देंगी।

पत्र काफी लम्बा हो गया, कहीं दूल्हा भाई पढ़ते समय मौजूद हुए तो कहेंगे किताब की किताब ही लिख डाली है, ख़ात्मा ही नज़र नहीं आता, मगर जब सुहागरात की चर्चा की है तो एक दो बातें इस संबन्ध की और कह कर ही इस पत्र को समाप्त करूंगी।

सुहागरात के लिए जगह घर वालों को बुद्धिमानी से चुननी चाहिये। जगह का असर भी अक्सर नाज़ुक मिज़ाज कुमारियों पर होता देखा गया है। जो हो, कमरा साफ़ सुथरा, हवादार होना चाहिये, साथ ही अन्य घर वालों से इतना दूर होना चाहिये कि पूर्ण रूप की आज़ादी नव-विवाहितों को हो, हिजाब का कोई वाईस न हो, और लज्जा और भय का कोई कारण न हो।

यह भी ज़रूरी है कि पति और पत्नी के लिए सदा अलग अलग बिस्तर हों। कई एक विद्वानों की राय में तो दो बिस्तर

ही नहीं दो कमरों का होना ज़रूरी है। उनका कहना है कि निरन्तर के सहवास और हर वक्त एक दूसरे के पास रहने से पति का कामज्वर कम हो जाता है, पत्नी को देखते ही वह कामान्ध नहीं हो जाता। ये कहते हैं कि अगर पत्नी नित्य रात में दूसरे कमरे में सोती है तो पति के कमरे में उसके पैर रखते ही पति कामज्वर का शिकार हो जाता है, किन्तु मेरा कहना यह है कि पति पत्नी एकमात्र काम की शान्ति के लिए ही विवाह नहीं करते। विवाह का उद्देश्य, सच्चा उद्देश्य दूसरा ही है और उसकी सिद्धि जभी हो सकती है जब पति पत्नी अधिक से अधिक एक दूसरे के साथ रहें, एक दूसरे की तबीयत की रविशों, ख़ुशी* और न ख़ुशी की चीज़ों और एक दूसरे के मिज़ाज से वाक़िफ़ हो जाँय। मैं इसीलिए दो कमरों के निवास के विरुद्ध हूँ। मेरा कहना तो यह भी है कि दो कमरों※ का निवास भावुकता और प्रेम के प्रभाव के वेग की हत्या कर देता है।† हाँ, एक दूसरे से कभी कभी कुछ दिनों बिलकुल दूर रह लेना हितकर ज़रूर है। दो बिस्तर, कम से कम, शुरू में, और प्रायः जीवन भर बहुत ज़रूरी है। प्रथमतः यह नवविवाहिता पत्नी के वैवाहिक जीवन के मार्ग को सरल कर देता है, वैवाहिक जीवन की दशाओं में इस तरह से उसका प्रवेश धीरे धीरे होता है, साथ ही नव-विवाहित के लिए भी अच्छा है क्योंकि वह पत्नी के निरन्तर शारीरिक सम्पर्क से बच जाता है जो विवाह के

---

*Likes and dislikes.

※ग़रीब भारतवासी सबके लिए अलग अलग कमरों का प्रबन्ध भी नहीं कर सकते।

†बहूरानियों के कभी कभी मायके दस पन्द्रह दिनों रह आने का क्रम ही इसीलिए रखा गया था।

आरंभिक जीवन और युवावस्था में काम को सहज ही में जागृत करने वाला और हानिकर होता है।

यह सब बातें देखने सुनने में बहुत ही साधारण प्रतीत होती हैं किन्तु बीबी रानी ये ही सारा फ़र्क़ एक सुखमय और दुःख-दायी वैवाहिक जीवन में पैदा करती हैं।

अच्छा, अब जाओ, बहुत पढ़ चुकीं, कहती होगी, बड़ी दाई अम्मा बनकर मुझको और मेरे समझदार दूल्हे को समझाने चली हैं, मानो ये ही सब जानती हैं वे कुछ जानते ही नहीं। ख़ैर जाओ, दूल्हा भाई को आते ही जिन चीज़ों की ज़रूरत पड़ती हो उनको ठीक से सजा कर उनके उचित स्थानों पर रख दो, जिसमें आने पर उनको किसी चीज़ को ढूँढ़ना न पड़े, किसी के लिए इन्तज़ार न करना पड़े और मन ही मन यह समझ कर प्रसन्न हों कि तुम उनकी कितनी फ़िक्र रखती हो और उनसे कितना प्रेम करती हो।

तुम्हारी
शांति

पुरुष और स्त्री

शान्ति कुटी

शिमला

१५—८—२७

"जोग जुगुति सिखिए सबै मनौ महा मुनि मैन।
चाहत पिय अद्वैतता कानन सेवत नैन" ॥

बीबी रानी,

तुम्हारा पत्र मिला, पढ़ कर हँसी और खुशी के आंसू भी बहाये। तुम सदा इसी प्रकार प्रसन्न रहो, फलो फूलो और दूल्हा भाई इसी तरह से हर समय तुम्हारी खुशी के लिए तन मन धन तुम पर वारते रहें इससे बढ़कर ख़ुशी मेरे, तुम्हारी बहुआ, और तुम्हारे बाबू जो के लिए और क्या हो सकती है; किन्तु, शीला बहिन, मज़ा तो तब है जब इसी प्रकार से हँसो, ख़ुशी और खेल कूद में सारी जिन्दगी कट जाय। यह तनिक भी कठिन नहीं और सर्वथा तुम पर और दूल्हा भाई पर निर्भर है। अगर दूल्हा भाई तुमको उसी तरह से जान और समझ लें जैसे वह अपने किसी प्रिय प्रसिद्धिप्राप्त लेखक या "कवि" को जानते और समझते हैं, अगर तुम ही उनकी कोकिला, बुलबुल या प्रिय "कविनी" हो जाओ और साथ ही साथ तुम भी उनसे अच्छी तरह वाकिफ़ हो जाओ, यह समझने लगो, कि वह किस वक्त क्या चाहते हैं, क्या सोच रहें हैं, उनका मस्तिष्क कहां दौड़ रहा है और उनके प्रत्येक कर्मों में सहानुभूति पूर्ण योग देने लगो तो तुम्हारा वैवाहिक जीवन सचमुचही फूलों की सेज हो जायगा।

वैवाहिक-जीवन वास्तव में कष्टकर और दुःख-मय हो जाता है क्योंकि पति पत्नी को समझ नहीं पाता या समझने की कोशिश नहीं करता, साथ ही पत्नी की भूल से पति एक अज्ञात वस्तु* सा बना रह जाता है सब से बड़ी कठिनाई यह होती है कि ग़रीब पत्नी पुरुष-प्रकृति से बिलकुल अज्ञात होती है साथ ही स्त्री इतनी लज्जाशीला और पेचीदा प्रकृति की होती है कि पुरुष उसे समझ नहीं पाता, किन्तु इनमें से एक भी कठिनाई, ऐसी नहीं जो परस्पर के प्रेममय सहयोग, एक दूसरे को भले प्रकार समझ लेने और परस्पर विश्वास और समझौते से दूर न की जा सकें।

स्वभावतः पुरुष अधिकांश बुरे नहीं होते वे सीधे और स्वार्थी होते हैं साथ ही दिग्गज समाज-वादियों के मतानुसार सौ में अट्ठानवें स्त्रियां अच्छी स्त्रियां होती हैं क्योंकि स्त्रियां सीख और स्वभाव दोनों ही से अच्छी होती हैं।

पुरुष स्वभावतः मज़बूत, निर्णायक, प्रामाणिक, स्वमताभिमानी, दृढ़, प्रचंड, उग्र, दाता, उदार, कठिन परिश्रम करने वाला, बेलगाम, निग्रह-हीन और लड़ने वाला होता है, इसके विपरीत स्त्री सुकुमारी, फूक फूक कर क़दम रखने वाली, आगा-पीछा सोचने वाली, अबला, ग़म खानेवाली, क़िफायतसार, समझबूझ कर खर्च करने वाली, दबने वाली, गम्भीर, बाचाल, लकीर की फ़कीर, प्राचीन प्रथा के अनुसार शासन और प्रबन्ध-प्रिय, सूक्ष्मेन्द्रिय, कोमल हृदया, करुणार्द्र, तनिक में अनुभव करने वाली अधिक सहज बुद्धि वाली और अधिक व्यावहारिक होती है। एक लेखक के मतानुसार स्त्री प्रकृति की महारानी है पुरुष प्रकृति का दीवान, प्रधान सचिव और साम्राज्य का विस्तार और संगठन करने वाला।

---

*Unknown quantity.

कदाचित उपर्युक्त लेखक ही ने या किसी दूसरे ने यह भी लिखा है कि एक अच्छी स्त्री एक देवी है जो प्रसन्न होने पर अपनी भेंट स्वरुप मनुष्य को संसार की सब प्रकार की समस्त वस्तुएँ दें सकती है, किन्तु पुरुष के लिए आवश्यक यह है कि वह उसे प्रसन्न रखे, उसका आदर भी बहुत करे और सच्चे हृदय से राम की भांति अपनी सीता से कह सके "न देवि तव दुःखेन स्वर्गमप्यभिरोचये "देवि ! तुमको दुखी कर मैं स्वर्ग की कामना भी नहीं करता"। एक दूसरे प्रसिद्ध लेखक के कथनानुसार स्त्री केवल पुष्पों को देखती ही नहीं, वह उनको समझती और बूझती है, वह केवल संगीत को सुनती नहीं, वह हृदय में उसको अनुभव करती है और उसकी हृदय-तन्त्री उसी संगीत के साथ गुंजरित होने लगती है, इसके साथ ही वह केवल कविता पढ़ती नहीं वरन् वह स्वयम् कविनी और कविता होती है।

"वह तितली के पर के समान सूक्ष्मेन्द्रिय, तनिक में अनुभव करने वाली और कोमल हृदया है, वह ऐसी कोमलाङ्गी है कि नरगिस की पत्तियों के समान तनिक हवा से भी हिल जाया करती है और पुरुप की वासना के प्रदीप के सामने वह पतंग की भांति ही नाजुक, निर्बल, सुकुमार, क्षीणबल, नातवां और अशक्त होती है।

प्राचीनकाल में अनेक जातियों का विश्वास था कि स्त्री के आत्मा नहीं होती, वह केवल एक गुड़िया है और सृष्टि में उसका अस्तित्व केवल पुरुष की सेवा और उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए है। पुरुष आदि काल से जंगली था और उसने स्त्री की कद्र नहीं की। स्त्री सदा उसकी मौजों की शिकार रही। पुरुष को प्रसन्न रखने के लिए जैसा जैसा पुरुष ने चाहा वैसा उसने किया और वैसी ही वह बन गई। वह कमजोर हो गई, सुकमार हो गई, छुई मुई, लज्जावन्ती, भीरु, और फूंक फूंक कर कदम

रखने वाली, नीति-निपुण और घुमा फिरा कर अपना अर्थ सिद्ध करने वाली हो गई और इन्हीं कारणों से वह बराबर की सहचरी से दासी हो गई किन्तु यह सब होते हुए भी स्त्री, प्रकृति के अधिक निकट है, उसमें निश्चय अधिक है,* नीति-निपुणता अधिक है, वह व्यावहारिक अधिक है और जो वह चाहती है उसे वह मनुष्य से करा ही छोड़ती है।

"†भोजनं द्विगुणं स्त्रीणां बुद्धिः कृत्ये चतुर्गुणा ।
निश्चयः षड्गुणः पुंभ्यः कामाश्चाष्टगुणः स्मृतः ॥"

मैं तो नहीं जानती कि हम लोग पुरुषों से दूना भोजन करती हैं, यद्यपि माता बनने की शक्ति रखने के कारण हम लोगों को शरीरों के पोषण के लिए अधिक भोजन की आवश्यकता ज़रूर है। सच बात यह है कि पुरुष जो भोजन करता है उसका अधिकतर अंग उसके मस्तिक की पुष्टि में लगता है, स्त्री के भोजन का अधिकतर अंश उसके शरीर की पुष्टि के लिए आवश्यक होता है क्योंकि उसे माता बनना रहता है किन्तु जो हो यह तो निर्विवाद सिद्ध है कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में सहज बुद्धि, निश्चय तथा व्यावहारिकता कहीं अधिक होती है।

सच मानो, शीला ! हम स्त्रियाँ पुरुष मानें या हठधर्मी से न मानें, पुरुषों की अपेक्षा श्रेष्ठतर जीव हैं। यदि ऐसा न होता तो सृष्टि का सब से महत्वपूर्ण कार्य मातृत्व हम लोगों को न सौंपा गया होता। मैं तो कहती हूं कि आज भी यदि पुरुषगण हम लोगों में विश्वास करने लगें, और प्रेम सहित सहयोग करते हुए संसार

---

*Tact.

†आहारो द्विगुणः स्त्रीणां बुद्धिस्तासां चतुर्गणः
षड्गुणो व्यवसायश्च कामाश्चाष्ट गुणः स्मृतः ।
यह पाठ भी है।

का भार हम लोगों पर कुछ दिनों ही के लिए, छोड़ दें तो आज की अपेक्षा संसार को हम स्त्रियां अधिक सुख, शान्ति और समृद्ध का स्थान बना देंगी।

"यह एक निर्विवाद सत्य है कि दुधमुंहा नन्हा बच्चा संसार में सबसे अधिक सरल, सीधा, बेलौस, सच्चा प्राकृतिक जीव है और एक स्त्री से अधिक कोई भी बच्चे को समझ नहीं सकता। कुछ लोगों की राय में यही इस बात का पूरा सुबूत है कि स्त्री भी सरल है, सीधी है और प्रकृति के बहुत निकट है। यह सब होते हुए भी यह हम लोगों का आभाग्य ही है कि संसार में अपने को सृष्टि का राजा और सर्वश्रेष्ठ जीव समझने वाला पुरुष संसार के अहम से अहम मसलों को समझ लेता है, कठिन से कठिन समस्याओं को हल कर लेता है और अगर वह कुछ और या किसी को नहीं समझ पाता तो केवल स्त्री ही को।"

एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक का कहना है "प्रत्येक जीव जन्मकाल से ही उन कीटाणुओं को अपने शरीर में लेकर पैदा होता है जो अन्त में उसकी मृत्यु के कारण बनते हैं और नर और नारियों को इनका तब तक कुछ भी ज्ञान नहीं होता जब तक इतनी देर नहीं हो जाती कि फिर उन कीटाणुओं के ज्ञान से वह कोई लाभ नहीं उठा सकते। अगर कहीं इन कीटाणुओं का ज्ञान आरंभ हो जाय तो नर नारी अपने को अजर अमर बना लें और बेखटके अमर जीवन को सुख से वहन करने का या कम से कम, अधिक दिनों जीवित रहने का प्रयत्न जरूर करें। ठीक इसी प्रकार से स्त्री अपने शरीर और हृदय में उन विशेषताओं या खूबियों को लेकर जन्म लेती है जो सहज में ही जीवन को नष्ट कर सकती हैं अगर उसी के उपयुक्त, उसके मन का, जन्म भर का साथी उसे नहीं मिल जाता क्योंकि अपनी आत्मा, प्रकृति, और कामनाओं को पति की खुशी के अर्थ दमन करने के लिए बड़ी

घड़ी नीति-निपुणता से काम लेने में स्त्री निकम्मी हो जाती है, दासीवत् "जी हुजूरी" और आज्ञापालन से उसकी आत्मा का प्रकाश जाता रहता है और वह अधमरी और आभाहीन हो जाती है, साथ ही प्रेम जिसका अर्थ केवल हर वक्त जूतियाँ उठाना और वर्तन चौका करना है स्त्री को एक महा अँधेरे प्रकाश-हीन क़ैदखाने के महादुखी कैदी के समान बना देता है।"

"स्त्री, स्त्री की हैसीयत से, बड़े महत्व की जीव है और पुरुष के लिए यह बहुत ही हितकर है कि वह स्त्री को समझे और जाने; न कि स्त्री अपने उच्च आसन से नीचे उतर कर आये, या एक मंच पर खड़ी हो कर खुद ही अपनी व्याख्या करे और अपने को पुरुप को समझाने की चेष्टा करे। इस लिए जो पुरुष सुख चाहता है उसे चाहिये कि वह स्त्री को एक कठिन धार्मिक-ग्रन्थ के समान आदर सहित, ध्यान पूर्वक अध्ययन करे और समझे"।

दुनिया में पुरुष यह बहुत कम करते हैं, और इसी लिए अधिकतर पति वैवाहिक जीवन से वही सुख नहीं प्राप्त करते जो उनको मिल सकता है या मिलना चाहिये। हमारी बीबी रानियाँ भी मूर्खतावश साथ ही विवेक-युक्त रीति और सहानुभूति पूर्वक पति द्वारा समझाई, बुझाई, चलाई और प्राथमिक शिक्षाओं के न दी जाने के कारण, लकीर की फकीर बनी रह जाती हैं, पुरानी लीक पीटती हुई कूप मंडूक बन जाती हैं और खाने पीने, गृहस्थी के काम करने, पति की दासी होने और उसकी निकृष्ट-सेवा करने को ही वे जीवन का ध्येय समझ लेती हैं। स्वभावतः पुरुष अपने हृदय में सद्भावों की जागृति के लिए, अपनी तबीयत के उभार के लिए, हृदय में नूतन शक्ति के संचार के लिए, अपने मन की बातों को कहने के लिए, मित्रता और बराबर का व्यवहार बरतने के लिए अपने पुरुष मित्रों या समझदार,

सहानुभूति पूर्ण दूसरी स्त्रियों के पास जाता है और इस तरह से वैवाहिक जीवन के सुखों और बीबी रानी के सुख स्वप्नों के अन्त का श्रीगणेश आरंभ हो जाता है। बीबी रानी, खाने पीने और बच्चों की माँ बनने को ही पुरुष-जीवन में रह जाती हैं और पुरुष भी उनको साधारण रूप से एक आवश्यक अनिष्ट* समझकर वहन करने लगता है। एक ओर यह होता है दूसरी ओर बीबी रानी, पति के असली जीवन के स्रोत से, हज़ारों कोस दूर हो जाती हैं।

शीला बहिन ! विवाह विज्ञान भी है और कला भी; और पत्नी सुखी वही हो सकती है जो इसके तत्व को समझ लेती है और वैवाहिक विज्ञान और कला दोनों में ही दक्ष होती है।

पुरुष-हृदय बड़ा ही अस्थिर और चंचल है। वह एक विस्फोटक पदार्थ के समान है। पुरुष का मस्तिष्क भी प्रत्येक क्षण हिरन की गति से भागता रहता है और इसलिए पुरुष को सदा काबू में रखना सहज नहीं होता। सच तो यह है कि वे स्त्रियाँ जो वैवाहिक विज्ञान और कला में भी निपुण न हों सफल हो ही नहीं सकतीं।

अब आज की कथा यहीं पर समाप्त करती हूँ, तुम्हारे जीजा जी आ पधारे हैं और वैवाहिक-कला का प्रथम सूत्र यही है कि दिन भर के उनके दुःख दर्द और झंझटों को मैं उनसे पूछूँ और बूझूँ, सहानुभूति-पूर्ण हृदय से उनकी बातों को सुनूँ, उनकी ख़ुशियों में ख़ुशी हूँ, उनकी कठिनाइयों को हल करने में भी कुछ दिमाग़ लगाऊँ और भाग लूँ और हँसते हँसाते, खिलाते पिलाते उनके दिन भर के परिश्रम को हर लूँ। अच्छा अब नमस्कार।

*Necessary evil

तुम्हारी
शान्ति

पतिदेव पर अधिकार

शान्ति कुटी

शिमला

१८-८-२८

गुन एक अपूरब तोमें लख्यों, सुतो सीखिबो की अभिलाष करौं।
"कमलापति" तोसी हितू है तुही लखि के सब भाँति अनन्द भरौं॥
यहिहेत कहौं यह बात, ब्रलाय ल्यों, दूजो उपाय न चित्त धरौं।
चित और को हाथ में लीबो बताय दै, पाहुनी! पायन तेरे परौं"॥

नटखट शीला!

अभी से ही इतना उतावलापन, अभी से ही दूल्हा भाई पर कब्ज़ा जमाने के लिए इतनी बेताबी, ख़ुदा ख़ैर करे, लिखती हो बस मंतर तुमको अभी ही बतला दूँ, तनिक भी देर न करूँ, पहिली डाक से पत्र चला ही जाय। क्यों शीला? क्यों? अभी से ही इतनी उत्सुकता क्यों? अभी तो ससुराल में कदम ही रखा है। अभी तो दूल्हा भाई बिना तंत्र मंत्र के ही तुम्हारी दिन भर में सौ बार बलैया लेते होंगे, तुम्हारे कदमों को हज़ार बार चूमते होंगे और तुम्हारा मिज़ाज सात आस्मानों से भी ऊँचे ही रहता होगा। फिर इतनी बेताबी क्यों?

अच्छा, यह तो बतलाओ, बतला दूँ तो क्या भेट चढ़ाओगी? है दूल्हा भाई की कुछ कमाई पास? पास होती तो इस बेताबी और बेसब्री पर तुम को तमाचे लगाती, अपनी इन उँगुलियों से ही तुम्हारे "मोयन भरे कचौरी से गालों" को लाल कर देती, ऐसी धौलें जमाती कि दूल्हा भाई के आने तक निशान

बने रहते, उनसे तुम्हारी लीला छिपी न रह सकती और तुम्हारे तंतर मंतर से उनको सचेत करने के नाम पर उनसे भी कुछ ले ही मरती।

अभी घर में कदम रक्खे देर नहीं हुई मगर बीबी रानी घर की रानी बन जाना चाहती हैं, चाहती हैं, दूल्हा भाई दिन रात सेवक की भांति हाथ जोड़े खड़े रहें, हर वक्त सामने ही रहें, न कहीं जाँय न आवें, कोई काम काज न करें, दोस्तों से भी मिलना जुलना छोड़ दें और एक पुजारी की भांति देवी जी के शृङ्गार करने, भोग लगाने, शयन कराने, नहलाने धुलाने आदि की ही फिक्र में लीन ही नहीं बेचैन रहें। तुम्हारे पेट में इतनी बड़ी दाढ़ी है इसका वह स्वप्न भी नहीं देखते होंगे।

मगर नहीं, शीला, तुम्हारी बेताबी, तुम्हारी उत्सुकता और कामना प्रशंसनीय ही नहीं, अनुकरणीय भी है। स्त्री को, अगर वह सच्ची पत्नी और पति की सखी सहचरी बनना चाहती है, विवाह की घड़ी से जीवन की अन्तिम श्वांस तक इसकी फिक्र रखनी चाहिये कि पति पर उसका अधिकार रहे, वह पत्नी के प्रेम का शिकार रहे और पत्नी को संसार में वह अपना सब से बड़ा सहायक, हितचिन्तक, साथी, अच्छे भावों की जागृत करने वाली, सब से अच्छी सलाह देने वाली और सुख दुःख को बराबर से बटाने वाली समझे।

बहुत सी अपढ़ मूर्ख स्त्रियां इसके लिए मंदिरों और मठों में दौड़ती हैं, साधुओं के चरन चूमती हैं, टोना, मंतर जंतर और बसीकरन की फिक्र में पागल होती हैं और इसके कारण पैसे से तो हाथ धोती ही हैं, कभी कभी अपने सतीत्व से भी हाथ धो बैठती हैं तथा और भी बड़े बड़े दुःख भोगती हैं। नीच श्रेणी की और विद्या-विहीना, स्त्रियों के साथ बैठने उठने का फल यही होता है। टोंना टपार, मंतर जंतर तो इस संसार में कुछ चलता बलता

नहीं, हाँ, यह भले ही होता है कि पतिदेव को एक न एक दिन यह मालूम हो जाता है, पत्नी उनकी नज़रों से गिर जाती है और वह सदा के लिए उससे हज़ारों कोस दूर हो जाते हैं।

ॐ"नस्यान्मूलकृदेषाभूया देवं महान विश्वासः।
गोनर्दीयाचार्यः कथयत्येवं विचार्यै वै॥"

(कन्दर्प चूड़ामणि)

समझदार स्त्री को जानना चाहिये कि पति पर कब्जा जमाने की कीमियाँ वह खुद है। सारी शक्तियाँ उसके हृदय और मस्तिष्क में मौजूद होती हैं और उनको अपने साथ लेकर ही वह माता के पेट से जन्म लेती है। विधि का प्रबन्ध कच्चा नहीं हुआ करता, वह इसके लिए जन्म से ही आयोजन कर देता है। पति पर अधिकार जमाने के लिए स्त्री को किसी मंदिर की नहीं, वरन् सब से अधिक अपने शरीर रूपी मंदिर की सेवा करनी चाहिये उसे साफ सुथरा, चमकता हुआ, स्वस्थ और आकर्षक बनाये रहना चाहिये। अधिकार-प्राप्ति के लिए किसी साधू के चरनों को चूमने की ज़रूरत नहीं होती, ज़रूरत होती है केवल अपने हृदय की साधुता की पूजा करने की और उसे पवित्र बनाये रहने की, साथ ही इसके लिए टोना टपार, मंतर बसीकरना की

ॐ"पति के मन्त्र जन्त्र द्वारा वशीकरण की फिक्र न करे, ऐसा करने से पति का उसमें से विश्वास उठ जाता है, यह गोनर्दीयाचार्य विचार कर कह रहे हैं।"

†"वशीकरन" के नाम से बहुत से पुरुष और स्त्रियां धूर्तों द्वारा ठगी जाती हैं। वास्तव में वसीकरन का जादू वादू कुछ नहीं है। कामसूत्र, रतिरहस्य, अनङ्ग रङ्ग में अनेक वशीकरण की विधियां लिखी हुई हैं, एक व्यक्ति के नहीं संसार के समस्त जीवों को भी

सहायता की नहीं वरन् अपने हृदय और मस्तिष्क के चमत्कार के जादू की सहायता की केवल मात्र जरूरत होती है।

शीला ! अगर पति देव पर कब्जा जमाये रहने का कोई एक मंत्र होता तो तुमको छोड़ उसे भला मैं और किसे बताने जाती ? लेकिन बहिन, इसके लिए कोई मन्त्र या जंत्र है ही नहीं। बड़े लोगों ने कह रखा है "सफलता के लिए कोई राजपथ नहीं है"; ठीक इसी तरह से प्रेम में विजय प्राप्त करने के लिए या मानवी सुख की प्राप्ति के लिए भी कोई एक निर्दिष्ट मार्ग या राजपथ नहीं है। जैसा कि मैं तुमको पहिले लिख चुकी हूं। विवाह में सफलता प्राप्त करना एक अच्छी कला है और कला, तुम जानती हो, कोई एक वस्तु न होकर बुद्धि की कुशलता के चमत्कार का नाम है। यूँ तो नितप्रति जो मैं तुमको लिखती रहती हूं और जो आगे लिखती रहूंगी अगर उस पर ध्यान रखो तो वैवाहिक-कला की अनेक बातें तुमको मालूम हो जायँगी, मेरे पत्रों में यह सब तुमको भरी पड़ी मिलेंगी किन्तु फिर भी तुम्हारी ख़ुशी के लिए यह बतलाने की चेष्टा करूँगी कि पति सदा कब्जे में कैसे रखा जा सकता है ?

मैं कोई पंडिता नहीं। तुम जानती हो कि हम लोगों को जैसी चाहिये वैसी शिक्षा भी नही दी गई, माता पिता साधारण स्थिति के लोग हैं, हां, भगवान की दया है, तुम्हारे जीजा जी

मोह लेने की बातें लिखी हुई हैं किन्तु हमको इनमें तनिक भी विश्वास नहीं। "नागर सर्वस्व" में कान्त वशीकरण पति को वश में करने की भी क्रिया दी हुई है, केवल एक अञ्जन आंख में लगा लेने से पति वश में हो सकता है यह कहा गया है किन्तु हम इन सब बातों की व्यर्थ की बातों में ही संज्ञा करते हैं।

कु० का० मा०

मुझको बड़े अच्छे मिले, विवाह होने के बाद से आज तक कोई दिन नहीं गया जिस दिन कुछ न कुछ उन्होंने मुझको न पढ़ाया हो। उनकी ही कृपा से कुछ कुछ अङ्गरेज़ी भी "यस", "नो", सीख गई हूं और उसी के सहारे जीवन सम्बन्धी अनेक बातों का ज्ञान कुछ कुछ प्राप्त कर लिया है। तुम्हारे जीजा जी कहते हैं कि इस विषय की अङ्गरेज़ी में सहस्त्रों पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, हिन्दी में हम लोगों के अभाग्य से एक भी अच्छी पुस्तक इस सम्बन्ध की प्रकाशित नहीं हुई है, फिर भी मेरी राय में इस कला में कोई ऐसी बात नहीं जो साधारण बुद्धि और तनिक विवेक से कोई भी स्त्री स्वयम् ही सहज में न मालूम कर ले। सच तो यह है कि कोई कितना ही पढ़ा लिखा क्यों न हो, संसार के समस्त शास्त्रों का वह कैसा ही प्रकाण्ड पंडित क्यों न हो, प्रेम का ज्ञान कुछ प्रेम होने पर आप से आप ही आता है। "ढाई अक्षर प्रेम का पढ़ै सो पंडित होय"। स्त्री भी और पुरुष भी प्रेम के राजपथ, गलियों और पगडंडियों को तभी जानता है जब वह प्रेम के स्वयम् वशीभूत होता है और दूसरे के प्रेम में पागल होता है। इसके अलावा इसमें कुछ सीखने की बात है भी नहीं, सहृदयता, साधारण बुद्धि और तनिक विवेक से सब कुछ आ जाता है*, जरूरी केवल यह है कि हृदय हो और उसमें प्रेम की ज्योति हो। एक नवजात शिशु को जब माता अपने प्रेम की रस्सी से बाँध लेती है तो मनुष्य तो बोलता हुआ समझदार, वयस-प्राप्त सामाजिक जीव है, उसे वश में करना कठिन क्या, किन्तु शर्त यही है कि स्त्री को उस पुरुष से वैसा ही सच्चा प्रेम हो जैसा माता को अपने बच्चे से होता है और

---

*लखी प्रौढ़ताई परवीन, नैन सैन से पिय बस लीन।
कहै "पखानों" रस अनुकूल, चतुराई सब विद्या मूल" ॥

पुरुष का स्त्री में वैसा ही विश्वास हो जैसा शिशु का अपनी माता में होता है।

आज अब अधिक नहीं लिखूंगी, शरीर कुछ अलसा रहा है, काम भी सब अभी तक पड़ा हुआ है, महराजिन को बियारी का सामान भी सब निकलवाना है, (क्योंकि सामान सदा मैं अपने सामाने ही निकलवाती हूं साथ ही इसका भी ख्याल रखती हूं कि आवश्यकता से अधिक*वह नहीं ले रही है)। तबीयत भी आज कुछ लग नहीं रही है, मालूम नहीं, इतनी देर हो गई, अभी तक तुम्हारे जीजा जी क्यों नहीं आये ?

तुम्हारी
शांति

———

*"बीबी नेकवक्त, दमड़ी की दाल तीन वक्त" पुरानी कहावत है। अच्छी पत्नी की विशेषता यह है कि गृहस्थी का सुन्दर प्रबन्ध रखे और इस पर सदा निगाह रखे कि व्यर्थ में पैसा खर्च नहीं हो रहा है और घर की वस्तुएं नष्ट नहीं हो रही। अङ्गरेजी की एक कहावत है "Keep a thing seven years and then you will know its use" एक वस्तु को सात वर्ष तक जुगह कर रखो तो उसका सुन्दर उपयोग तुम्हारे सामने आ जायगा। हर चीज़ को इसलिए सम्हाल, और संच कर रखे रहना आगे काम देता है।

पुरुष है क्या ?

शान्ति कुटी
शिमला
२०-८-२७

बीबी रानी,

तुम्हारे जीजा जी कचेहरी गये, मोटर की आवाज़ अभी कानों में गूँज रही है, मैं भी खा पीकर छुट्टी हूं और अपना वादा पूरा करने के लिए तुमको पत्र लिखने बैठी हूं। खाना खाने के बाद मैं लेटती नहीं, घंटे आध घंटे सीने पिरोने, कसीदे काढ़ने या तुम्हारे जीजा जी तथा अपने लिए जम्पर, कार्डिगन, वेस्टकोट रेशमी तथा ऊनी बनाने में लगी रहती हूं क्योंकि खाना खाने के बाद ही मस्तिष्क पर ज़ोर देना, पढ़ना, लिखना हानिकर होता है। घंटे आध घंटे बाद जैसी जिस दिन ज़रूरत हुई पढ़ने बैठ जाती हूँ। मैं ख़ाली बैठना, आलस में पड़ी रहना कभी भी नहीं पसन्द करती। बेकारी बीमारी, बेकार बैठना बीमारी को न्यौता देना है, साथ ही मेरा यह भी विश्वास है कि पुरुष के लिए आलसी होना चाहे हानिकर कम भी हो किन्तु स्त्री के लिए आलस्य ज़हर और सर्वनाश ही है। किसी दिन यदि पढ़ने लिखने में मन नहीं लगता, साथ ही सीना पिरोना भी नहीं रुचता तो बैठे से बेगार भली, दाल चावल बीन, तरकारी बना, महराजिन के ही कामों में हाथ बटा लेती हूँ, या बाजा ले बैठ जाती हूं। ख़ैर, यह तो नित्य ही के झगड़े हैं और तुम्हरे लिए भी यही होंगे, ऐसी दशा में इनका ज़िक्र ही क्या ?

अब तुम्हारे मतलब की कहती हूं। तुम जानना चाहती हो कि पति पर कब्ज़ा सदा कैसे रखा जाय, हिरन की गति से हरदम भागते हुए मानव मस्तिष्क पर काबू कैसे किया जाय ? जैसा मैं पिछले पत्र में लिख चुकी हूं बात देखने में बड़ी कठिन दिखाई देती है किन्तु है वास्तव में बहुत ही सरल और साधारण बुद्धि के भरोसे ही स्त्री सहज ही में अपने उद्देश्य में सिद्धि-लाभ कर सकती है, शर्त यही है कि वह प्रेम से प्रेरित हो और उसके पतिदेव पशु नहीं मनुष्य और मानव हों।

अच्छा, बतलाओ तो, पुरुष है क्या ? बहुत सूक्ष्म रूप से विचार करने की ज़रूरत नहीं, मोटे तरीके से पुरुष दो वस्तुओं का बना हुआ है या यह कि वह दो वस्तुओं में बांटा जा सकता है। दो वस्तुओं में एक है शरीर दूसरा है मस्तिष्क। ऐसी दशा में अगर कोई स्त्री पुरुष पर काबू पाना चाहती है तो उसे उसके शरीर और मस्तिष्क पर अधिकार पाने की कोशिश करनी चाहिये। शरीर वासनाओं, इन्द्रियोपासनाओं और पाशविकता का केन्द्र है। यह जड़ है, मस्तिष्क, जीव और चेतन है। तुमको इससे यह प्रक़ट हो गया होगा कि पुरुष पर अधिकार प्राप्त करने के लिए उसके (शरीर) जड़ और उसके जीव (मस्तिष्क) दोनों को ही अपना करना चाहिये। शरीर पर अधिकार सहज में ही उसकी इन्द्रियगतवासनाओं को जागृत और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने से हो सकता है। मस्तिष्क पर कब्ज़ा जमाने के लिए तुमको उसके मस्तिष्क तथा हृदय को काबू में करना चाहिये। देखो बात कितनी सरल है। मैं तो कहती हूं कि एक स्त्री, जो देखने में साधारण रीति से सुन्दर हो साथ ही जिसमें शारीरिक और चरित्र-संबन्धी सौन्दर्य हो, संसार में जो चाहे कर सकती है और अपने पति का तो कहना ही क्या संसार के समस्त पुरुषों को अपने सिंहासन के नीचे हरदम हाथ जोड़े कैदी के समान

खड़ा किये रह सकती है। किन्तु, बीबी रानी, कहने में जैसी बात सरल दिखाई देती है करने में भी यह उतनी ही सरल नहीं है। व्यावहारिक रूप में इसको कर दिखाने में स्त्री को एड़ी चोटी का पसीना एक कर देना पड़ता है और इसी ध्येय की सिद्धि में अपना जीवन उत्सर्ग कर देना पड़ता है। किन्तु इस निरन्तर की कोशिश और परिश्रम से फल जो अन्त में मिलता है उसको देखते हुए मैं तो यही कहती हूं कि इस कोशिश में अगर एक नहीं दो जीवन भी उत्सर्ग कर देना पड़े तो कोई चीज नहीं। मैंने शुरू में ही कहा था कि इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए एक ही शर्त है और वह यह कि पत्नी प्रेम करती हो और प्रसन्नता पूर्वक प्रेम में सफलता प्राप्त करने के लिए सुख से कष्ट सहन करने को उद्यत हो। सच पूछा जाय तो कष्ट के शब्द का व्यवहार मैंने ठीक नहीं किया, कष्ट का शब्द उपयुक्त भी नहीं है, अधिक ठीक यह कहना होगा कि प्रेम में सफलता प्राप्त करने की फ़िक्र करने का वह कष्ट उठाने को तैयार हो।

तुम कहोगी, बीबी जी, अगर जादू और मंतर सारा इतना ही है तो फिर मनुष्य के शरीर और मस्तिष्क पर, उसके जड़ और जीव पर, उसके शारीरिक और आध्यात्मिक जीवन पर अधिकार कैसे प्राप्त किया जा सकता है ? जल्दी से, एक शब्द में ही बतला दो, मैं इसी घड़ी से कोशिश में लग जाऊँगी। मेरा जवाब यही है, बीबी रानी, सब्र करो, धीरज धरो, यह जादू ऐसा नहीं जिसे एक बार सफलता पूर्वक कर लेने पर जन्म भर को छुट्टी मिल जाय। यह जादू तो जीवन भर का व्रत है और जीवन भर, नित प्रति और हर घड़ी इसे जगाते रहने से ही काम चल सकता है।

मैं तुमसे कह चुकी हूं कि मानव-हृदय बड़ा ही चंचल, और

परिवर्तनशील है। मानव-मास्तिष्क हिरन की गति से सदा भागता रहता है, साथ ही मानव-हृदय स्वतंत्रता का लोलुप है, बन्धन से बहुत भागता है और इन बातों का फल यह होता है कि बीबी रानी तनिक सी अचेत हुईं, तनिक ग़ाफ़िल हुईं, उनकी मुट्ठी ज़रा ढीली हुई और दृष्टि इधर उधर हुई कि तोता रूपी पति हाथ से उड़ जाता है और फिर या तो दिखाई ही नही देता या दिखाई भी देता है तो किसी मैदान या जंगल में किसी पेड़ पर बैठा हुआ। कितनी ही सेवा शुश्रूषा तुमने क्यों न कर रखी हो, तुम उसे नित माखन मिश्री और मेवों की खीर ही क्यां न खिलाती रही हो मर्द तोते की ही भांति तोतेचश्मी करता है और तोते के समान ही सहसा फिर वापस हाथ में नहीं आता। सच तो यह है कि मर्दों के संवन्ध में यही कहावत ठीक है "बात करें मैना की सी, आखें बदलें तोते की सी"। एक अङ्गरेजी लेखक का कहना है "पुरुष एक सर्प के समान है, उसके छूने से ही ज़हर चढ़ता है और उसे पकड़ कर हाथ में कोई रख नहीं सकता"।*

जीवन में प्रत्येक मिनट इसलिए इस बात की फ़िक्र रखनी पड़ती है कि तोते का पिंजरा कहीं से ढ़ीला तो नहीं है, कहीं से खुला हुआ तो नहीं है। इतना परिश्रम करने और इतनी फ़िक्र रखने पर, बीबी रानी, स्वर्गीय सुख (१) नसीब होता है, घर, गृहस्थी और

---

*भारत में इसके विपरीत एक कहावत है:—

"सकुची पूछे वसत विष, मस्तक बसे भुजंग
केहरि के नख में बसे, तिरिया आठो अङ्ग"

(१) रूप गर्विता और प्रेमगर्विता का दावा तो यह होना चाहिये:

"आखिन मैं पुतरी ह्वै रहै, हियरा मै हरा ह्वै सबै रस लूटैं
अंगर संग बसैं अँग राग ह्वै, जीव तै जीवनमूरि न टूटैं
"देव" जू प्यारे के न्यारे सबै गुन, मो मन मानिकतैं नहि छूटैं
और तियान तें तौ बतियाँ करैं मो छलियाँ तैं छिनौ जब छूटैं"

संसार स्वर्ग का एक टुकड़ा बन जाता है और स्त्री का इहलोक और परलोक बन जाता है।

मैं समझती हूं तुम्हारे एक दिन के लिए इतना सबक काफी है। पति का शरीर और मस्तिष्क अपना कैसे किया जाय, इसके लिए कौन कौन सी क्रियायें ज़रूरी हैं इस सम्बन्ध में अगले पत्र में लिखूँगी। देखो एक एक शब्द ख़ूब रट लेना, मानी, हिज्जे वगैरह ख़ूब याद कर लेना और जहां जो समझ में न आये मुझसे एक बार नहीं सौ बार पूछ लेना।

तुम्हारी
शान्ति

अधिकार का रहस्य*

शान्ति कुटी

शिमला

२१-८-२७

शीला,

आज से यह निश्चय कर लिया है कि रोज़ एक पत्र तुमको लिखा करूँगी। बातें करते जहाँ पर हम लोग पहुँच गई हैं सारी कथा का सब से अधिक महत्वपूर्ण, दिलचस्प और मनोरंजक अङ्ग यही है; साथ ही तुमको समझाने और बताने की कोशिश में मेरी भलाई ही हो रही है। मैं यह देखती जा रही हूं कि मैं अपने जीवन में कोई ग़लती तो नहीं करे रही हूं और जो कुछ मुझे जैसे करना चाहिये वैसे ही कर रही हूं या नहीं।

आज, बीबी रानी, तुमको यह बतलाना है कि पतिदेव के शरीर, मन और मस्तिष्क पर अधिकार कैसे जमाया जाय। अगर अपनी ही साधारण बुद्धि से सलाह लो तो वही तुमको बतला देगी

---

*"Dost, thou then wish to know the secret that evergreen and undestroyed the bridal wreath will keep ? It is pure tenderness of heart, the unwithered bloom of charm that is paired with sweet chastity, that like the ever smiling sun, brings laughter and joy to every heart. It is that soft look of gentleness and dignity that watches over itself."

—SCHILLER

कि शरीर या जड़, शरीर या जड़ ही के द्वारा आकृष्ट किया जा सकता है। शरीर के साथ ही अपने मस्तिष्क की भी इसमें सहायता ली जाय तो निस्सन्देह सोने में सुगन्ध का काम हो जायगा। इसके साथ ही आत्मा तथा मस्तिष्क पर कब्जा, जीव तथा चेतन पर अधिकार, अपने मस्तिष्क और जीव की ही सहायता से प्राप्त हो सकता है, यद्यपि अपने शरीर की सहायता मिलती रहने से काम सरल हो जाता है।

शरीर या जड़, जड़ ही है, उस पर अधिकार प्राप्त करना सरल है। अपने शरीर को सुन्दर बनाये रहने और तनिक मस्तिष्क की सहायता लेती हुई पति की वासनाओं को जागृत और उसकी कामनाओं की पूर्ति करती रहने से यह सहज में हो सकता है किन्तु मस्तिष्क एक सूक्ष्म गति वाली, पेचीदी चीज़ है, साथ ही मस्तिष्क पर असर पैदा करना-जब तक अपना मस्तिष्क भी खासा अभिवृद्धि प्राप्त किया हुआ न हो-यही नहीं कि सरल नहीं है वरन् कठिन है। जड़ जड़ ही है वह क़ब्ज़े में आ जाता है किन्तु मस्तिष्क तथा हृदय जीव है यह सहसा बिना अधिक परिश्रम, कष्ट और कुछ दिनों अपने को मिटाये हाथ नहीं आता। पर यह बहुत कठिन हो सो भी बात नहीं है। स्त्री में सहज बुद्धि इतनी जबर्दस्त होती है कि साधारण रूप से पुरुष जिन नतीजों पर पढ़ने और अनुभव के वाद पहुँचता है, स्त्रियां उन पर यूँ ही पहुँच जाया करती हैं।* स्त्री इसलिए पति के समान ही पढ़ी लिखी और पण्डिता न हो तब भी तनिक सहानुभूति, सहज बुद्धि और नीति-निपुणता से पति के मस्तिष्क पर वह अपना अधिकार जमा ले सकती है।

सच पूछो तो पुरुष है ही क्या ? वह तो स्त्री का बच्चा ही है और कितना ही बड़ा वह क्यों न हो जाय वह पुरुष-शिशु या

---

*"जे पांड़े के पत्रा में, ते पंडिताइन के अचरा में"

वृद्धि-प्राप्त-शिशु, ही रहेगा और स्त्री अपने माता के हृदय से सदा उसे अपने में लीन रख सकती है। प्रकृति ने इसके लिए आरम्भ से ही आयोजन भी कर दिया है।

प्रकृति के प्रबन्ध, अपनी सहज बुद्धि, माता के हृदय और नीति-निपुणता के कारण "स्त्री सदा अपने पति, वृद्ध-प्राप्त-पुरुष-शिशु, से बड़ी रहती है, साथ ही साथ वह अपने छोटे बच्चे शिशु-पुरुष के बराबर की अवस्था वाली भी होती है। इसका सरल शब्दों में अर्थ यही है कि पुरुष को सब दशाओं, स्थितियों और चित्तवृत्तियों में स्त्री सँभाल सकती है और क़ाबू में रख सकती है।"

बीबी रानी, मैंने तो चतुर पढ़ी-लिखी सामाजिक स्त्रियों को बड़े बड़े पढ़े-लिखों को उल्लू बनाये रहते देखा है। भला यह तो कहो पढ़ी-लिखी होती हैं किन्तु वेश्याएँ तो इतनी पढ़ी-लिखी भी नहीं होतीं। सच मानो, बहिन, यह सब कुछ भी कठिन नहीं, इसके लिए केवल सहज-बुद्धि, इच्छा, हृदय और लगन होनी चाहिये।

एक गुर इसका और भी बतला देती हूं और सच जानो पति पर सदा अपना अधिकार बनाये रहने का सारा रहस्य इतना ही है। शरीर और मस्तिष्क पर अधिकार जमाने की चेष्टा करते हुए चतुर पत्नी का कर्तव्य यह है कि संसार की अधिकतर बातों में या अनेक बातों में वह पति को अपने ऊपर निर्भर रहने वाला बना ले, उसकी हर एक बात में समझदारी से भाग लेते हुए उसके जीवन के श्रोत में अपने जीवन के श्रोत को इस तरह से सम्मिलित कर दे कि बिना पत्नी के अपने को वह किम्कर्तव्यविमूढ़, लंगड़ा या लूला समझने लगे और पत्नी के विना पृथक जीवन उसे एक बहुत कष्टकर और कठिन समस्या दिखाई देने लगे। मगर यह सब प्रयत्न इतनी खूबी से होना चाहिये कि पतिदेव स्वप्न में भी यह न समझें कि कोई प्रयत्न किया जा रहा है, वह वही समझते

रहें कि प्रेम के वश यह हमारी सब फ़िक्र रखती है और इन सब बातों में इसे भी दिलचस्पी है। शब्दों में यह सब एक पहाड़ सा ही दिखाई देता है किन्तु वास्तव में यह कठिन है नहीं।

जड़ पर, शरीर पर, कब्ज़ा करना, मैं कह चुकी हूं, आसान है इसलिए पहिले मैं तुमको इसी की क्रिया और इसी का मंत्र बताऊँगी। इसको जब समझ लोगी तब मस्तिष्क, हृदय और आत्मा पर विजय प्राप्त करने के कठिन काम की तुमको सीख दूँगी। थोड़ी थोड़ी बात बताने में सब बातें तुम्हारी समझ में आ जायँगी, साथ ही इसमें मुझको भी आसानी होगी।

हाँ, एक बात पर तुम ज़रूर ध्यान रखना। अभी उम्र भी तुम्हारी बहुत कम है, साथ ही इस समय तुमको यह सहज भी होगा और तुमको समय भी बहुत है। जितना पढ़ सको, पढ़ो, सदा याद रखो, "बिन विद्या नर नार, जैसे गधा कुम्हार"। जो पुस्तक सामने दिखाई दे, जिस विषय की हो, यह देख कर कि वह ज़टल रद्दी और वक्त को खराब करने वाली ही नहीं है साथ ही ऐसी नहीं जिसके ज्ञान की जीवन भर में तुमको आवश्यकता ही न हो, पढ़ डालो। पुरुष के मस्तिष्क पर अधिकार प्राप्त करने के लिए साधारण रूप से भी ज्ञान अनेक विषयों का बहुत ज़रूरी है; विशेष कर उन कवियों, लेखकों और ग्रन्थों का जो दूल्हा भाई को प्यारे हों, ज़रूर पढ़ डालो।

तुम कहती होगी यह सब तो अपने पृथक अस्तित्व और जीवन को मिटाना है, अपने को बहुत ही नीचे गिराना है, यह सदा दूसरे ही को ख़ुश करने की कोशिश है और सदा उसी की इच्छा को कानून समझना है किन्तु, बीबी रानी! तुमको यह ध्यान में रखना चाहिए कि जब तक स्त्री शिक्षिता और पूर्ण रूप से आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र न हो जाय, और विवाह का आज दिन का रूप उलट पुलट कर दूसरा न कर दिया जाय, स्त्री का पूर्ण

रूप से पृथक अस्तित्व और जीवन के लिए पागल होना पागलपन के सिवा कुछ नहीं है। रही तुम्हारी अपने को नीचे गिराने की बात सो ठीक नहीं है, ऐसा करने से स्त्री नीचे नहीं गिरती, वह नीचे झुकती है केवल उभर कर ऊपर उठने के लिए, वह अपने को नीचे झुकाती है केवल और जोरों से ऊँचे उठकर विजय प्राप्त करने और अपना जन्म जात अधिकार और स्वत्व प्राप्त कर राज रजने के लिए।

अच्छा, अब नमस्कार।

तुम्हारी
शांति

जड़ मनुष्य पर अधिकार

शान्ति कुटी
शिमला
२२—८—२७

"प्रेम, शुद्ध, पवित्र, कलमसहीन और
संयमयुक्त होना चाहिये"

शीला बहिन !

आज तुमको पशु या जड़ मनुष्य या मानव शरीर और उसकी इन्द्रियगतवासनाओं को अपनी ओर आकृष्ट करने और उनको अपने अधीन करने की क्रिया बतलानी है।

तुमको याद होगा, पिछले पत्र में मैंने लिखा था कि शरीर पर अधिकार अपने शरीर की सहायता से ही मिल सकता है। अपने शरीर को पुरुष की वासनाओं की तृप्ति और साधन का केन्द्र बनाने से यह सहज में ही हो सकता है। गुर इसका यह है कि मनुष्य को इतना भोजन न दे कि हर समय उसका पेट भरा रहे साथ ही इस बात की चिन्ता रखी जाय कि वह भूखा भी नहीं मर रहा है। पश्चिमीय देशों की स्त्रियों का सिद्धान्त है पशु को भोजन दो साथ ही मनुष्य को ऊपर उठाओ।* एक बात का लिहाज इस सब में बहुत जरूरी है और वह यह कि पुरुष की कितनी ही उदर-पूर्ति क्यों न की जाय उसे भावना यह सदा बनी रहे कि तुम्हारे पास अब भी उसको खुश करने के लिए ऐसा

"Romance must be clean, candid and controlled"

*Feed the brute and uplift the man.

बहुत खज़ाना भरा पड़ा है, जिसका रसास्वादन उसने अभी तक नहीं किया है। इसके साथ ही साथ यदि तुम उसकी नज़रों में नित्यप्रति अधिकाधिक उपयोगिनी और आकर्षक भी दिखाई देती रहो तो विजय निश्चित है। किन्तु इन सब बातों के साथ यह सदा याद रखना कि तुम एक पुरुष को तीन मास की अवहेलना से दास बना सकती हो किन्तु तीन ही घंटे के एक दम घुल मिल जाने से सदा के लिए खो सकती हो।

स्त्री पुरुष के संसर्ग के बारे में जो कुछ रहस्य है और जो इसमें सफलता प्राप्त करने की कीली है उसे मैंने इशारे और सूत्र रूप में सुहागरात वाले पत्र में लिख दी है। उससे अधिक कुछ भी कहना फ़िजूल है, फिर भी मैं इतना कह देना चाहती हूँ कि यह भी एक जबर्दस्त कला है और जो इसमें प्रवीण होते हैं उनका वैवाहिक जीवन बड़ा सुखद होता है। इसके ही साथ मैं इतना और कह देना चाहती हूँ कि मानव प्रकृति का लिहाज़ कर जितना इसका कम होना ज़रूरी है उतना कम तो यह हो नहीं सकता फिर भी जीवन में इसको गौण स्थान देना बहुत ज़रूरी है। मानव समाज ने भूख प्यास और इन्द्रियों की सभी आवश्यकताओं को कम से कम नियमित† कर लिया है, ऐसी दशा में यह मानते हुए भी कि काम की वासना सब से अधिक प्रखर और इस पर विजय प्राप्त करना सबसे कठिन है, फिर भी जहाँ तक संभव हो हम सब को काम की वासना को बहुत ही नियमित करने की कोशिश करनी चाहिये।

जीव मात्र में सृष्टि के प्रबन्ध से काम वासना की तृप्ति का कुछ नियम है। जानवरों के लिए अलग अलग ऋतु निर्दिष्ट है। जानवरों में बुद्धि और ज्ञान नहीं इसलिए सृष्टि ने रोक टोक

†Regulate

का प्रबन्ध किया। मनुष्य, जीवों का सरताज है, सब से बड़ी विशेषता उसमें यह है कि उसे बुद्धि और अच्छे बुरे का ज्ञान है। सृष्टि ने उसकी बुद्धि पर इसी लिए विश्वास कर कोई प्रतिबन्ध नहीं रखा। चतुर मनुष्यों का इसलिए यह कर्तव्य है कि आज़ादी को वह लाईसेन्स पूर्ण स्वतंत्रता या अधिकार का पट्टा न मान लें और अपनी ओर से ही प्रतिबन्ध बना लें।

दुःख और आश्चर्य की बात यह है कि सृष्टि का भार हम पर है, हमारा शरीर सृष्टि का केन्द्र है, हमारे शरीर का, हमारे स्वास्थ्य का हमारे मस्तिष्क पर भी बड़ा प्रभाव पड़ता है, हम क्या हैं और हमारा भविष्य क्या होने वाला है इसका भी हमारे शरीर से घना संबन्ध है फिर भी शरीर संबन्धी कुछ भी ज्ञान हमको नहीं दिया जाता। हम स्त्री हैं, हमसे स्त्रीत्व की पग पग पर आशा की जाती है किन्तु हमको यह नहीं बतलाया जाता कि स्त्रीत्व है क्या? इससे शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक परिवर्तन हममें क्या होते हैं। साथ ही हमको यह भी नहीं सिखलाया जाता कि जिस नूतन जीवन में हमको प्रवेश करना है उसके लिए हमको क्या क्या जानना चाहिये और क्या तैयारी करनी चाहिए। एक ओर दशा यह है दूसरी ओर अज्ञान से अगर हमसे कुछ भूल बन पड़ती है तो हम पर रहम करने वाला, हमारे साथ सहानुभूति प्रकट करने वाला या हमारी सहायता करनेवाला कोई नहीं खड़ा होता। शीला बहिन! पुरुषों का संसार इन बातों में एक है, अगर आज मुझमें और तुम्हारे जीजा जी में कोई मतभेद हो जाय, अनबन हो जाय तो हमारे पिता, बाबू जी, भी तुम्हारे जीजा जी की बात को, उनके ही मत को ठीक समझेंगे और उनकी सहानुभूति उनके ही साथ होगी; किन्तु इस रोने को मैं कहाँ तक रोऊँगी?

शरीर के सम्बन्ध में पहली बात जो किसी भी पुरुष या स्त्री को जाननी चाहिये वह उसकी बनावट है। शरीर के प्रत्येक अङ्ग की, विशेषकर जननेन्द्रियों की, बनावट और उनकी क्रियाओं का हर एक को आवश्यक ज्ञान होना चाहिये। इसके साथ ही हम लोगों को यह भी मालूम होना चाहिये कि हम उनको सदा स्वस्थ कैसे बनाये रह सकती हैं। इसका समुचित ज्ञान न होने से प्रायः पुरुष और स्त्री दोनों ही बहुत दुःख उठाया करते हैं।

शरीर के सम्बन्ध में दूसरी बात जो किसी भी स्त्री को मालूम होनी चाहिये यह है कि मनुष्य के दोनों अङ्गों, जड़ और जीव, को एक हद तक अपने शरीर के द्वारा वह अपने आधीन रख सकती है। पुरुष, अन्ततोगत्वा, बच्चा ही है, उसे खेलने को, अपना दिल बहलाने को कोई खिलौना चाहिये। खिलौना जितना आकर्षक होगा पुरुष उतना ही उसमें अपने को भूला रहेगा।

स्त्री अपने शरीर को मनुष्य के लिये अनन्त-काल तक खेलने को एक बहुत ही आकर्षक, मनोरंजक गोरखधन्धा या खिलौना बनाये रख सकती है, वह अपने शरीर को इस तरह रख सकती है कि दिन में यदि हज़ार बार पुरुष उसे देखे तो हर बार उसे एक नई ही अदा दिखाई दे और हर बार एक नये ही जादू का वह शिकार हो। यह सच है कि इसकी सफलता के लिये देखने वाले के भी आँख और हृदय होना चाहिये किन्तु पुरुष क्या कर सकता है, या नहीं कर सकता इसकी मुझको इस समय चिन्ता नहीं है इस समय तो मुझको केवल स्त्री के कर्तव्य की चिन्ता है। इसके सिवाय यदि पुरुष नहीं देखता या देख सकता तो दोष उसका है, प्रेम के खेल का वह अनाड़ी खिलाड़ी है,

स्त्री अपने कर्तव्य का पालन कर चुकेगी और "यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्रदोषः॥"

मेरी सीख यह भी है कि शरीर को आकर्षक, तथा सुन्दर बनाये रहने पर भी यदि पुरुष-मृग जाल से दूर ही दूर भागता रहे तो शरीर के साथ ही साथ दिल और दिमाग़ की भी ताक़त लगा दी जाय। ऐसी दशा में वार सहज में खाली न जायगा वरन् सौ में निन्यानवे बार वह निशाने पर ठीक पहुँचेगा।

तुम कहोगी, बहिन इसके लिए रूप की बड़ी आवश्यकता है। शरीर सुन्दर हो यह भगवान की देन है, किसी का होताहै किसी का नहीं होता, किन्तु बीबी रानी यह बात कुछ हद तक ठीक होती हुई भी सर्वथा ठीक नहीं है। कम से कम तुमको तो इसकी शिकायत नहीं। तुम तो माशाअल्लाह, चश्मबद्दूर, तुम पर राई नोन, ख़ुदा की शान हो, सौन्दर्य की मूर्ति हो और यह भी तो सुना है कि तुम्हारे रूप पर मोहित होकर ही दूल्हा भाई शादी के लिए तैयार हुए थे। मगर माना कि सब स्त्रियां रूपवती नहीं होतीं फिर भी यह तो सत्य ही है कि प्रत्येक स्त्री एक काल में बड़ी ही मन को हरने वाली और सुन्दरी दिखाई देती है। साथ ही गोरे और काले से ही सब कुछ नहीं होता, चेहरा मोहरा दुरुस्त हो और कोई बड़ी ही वीभत्स खराबी मुख में न हो तो स्त्री अपने को पूर्ण रूप से आकर्षक बना सकती है। तुमको याद होगा कि अभी ही ऊपर कहीं मैं लिख चुकी हूं कि यदि शरीर के आकर्षण का वार खाली भी जाय तो दिल और दिमाग़ के रामबाण से काम लेना चाहिये। इसके सिवाय रूप होना, चेहरा मोहरा दुरुस्त होना, केवल चाँद

※और यत्न करने पर भी यदि सफ़लता न मिले तो वह दोषी नहीं कही जा सकती।

का टुकड़ा ही होना पुरुष हृदय के लिए अमोघ अस्त्र नहीं है। सुन्दर से सुन्दर स्त्री, अगर बातों से जादू नहीं कर सकती, अगर अपनी मन्द मुसक्यान से सब कष्ट हर नहीं सकती, अपनी आखों से नशा पैदा करके संज्ञाहीन नहीं कर सकती, सब कुछ भुला नहीं सकती, अपने सहानुभूति और प्रेम से छलकते हुए हृदय से दूसरे का हृदय छीन नहीं सकती, अपना सौन्दर्य लिए बाज़ार में खड़ी रह सकती है किन्तु वह किसी भी समझदार मनुष्य के हृदय पर अधिकार घंटे दो घंटे के लिए भी नहीं प्राप्त कर सकती।

"अनियारे दीरघ नयनि, किती न तरुनि समान
वह चितवन औरै कछू, जेहि बस होत सुजान"

इन सब बातों का जीव और चेतन से सम्बन्ध है और इस लिए इस सम्बन्ध की बाते मैं जब तुमको मनुष्य के मस्तिष्क और आत्मा पर विजय प्राप्त करने का उपाय बताने लगूँगी बता दूंगी। अभी तो तुम इतना मान लो कि रूप एक अच्छा साधन है उसे राजा भी कह सकती हो किन्तु यदि उसके मंत्री गण आँख, कान, नाक, मुँह, और सभी अङ्ग प्रत्यङ्ग अपनी ख़ूबियों और विशेषताओं से, जो जन्म से ही उनमें मौजूद होती हैं, उसकी सहायता न करें तो रूप रूपी राजा कुछ कर नहीं सकता और गलियों में ठोकरें खाता फिर सकता है।

इस बात के अधिक समझाने की यूँ भी जरूरत नहीं है क्यों कि तुमने दुनिया में अकसर देखा है कि घर में सुन्दर से सुन्दर स्त्री मौजूद है, मगर लाला जी एक साधारण और ऐसा भी देखा गया है कौए सी काली बाजारू स्त्री के प्रेम के पाश में छटपटा रहे हैं। लाला जी भी देखने में बहुत सुन्दर हैं और सहसा काला रूप उनको सुहावना नहीं लग सकता फिर भी वह उसी के पीछे

पागल रहते हैं तो इसमें कोई बात तो है ही ? कम से कम इससे यह तो सिद्ध ही हो जाता है, कि गोरा रूप ही सब कुछ नहीं है।

आज का लेकचर अब यहीं पर समाप्त करती हूँ। शरीर को आकर्षक कैसे बनाया जाय इसकी चर्चा छोटी तथा सरल भी नहीं। इस सम्बन्ध में स्वास्थ्य बनाये रहने की शिक्षा पहिले आवश्यक है, दूसरे शरीर के शृङ्गार की बात भी साधारण नहीं और फिर इसके साथ ही साथ बाल, आँख, कान, नाक, मुँह सभी अंगों को सर्व श्रेष्ठ बनाये रखने की बातें बतानी है, आज इसलिए बस अब यहीं खत्म करती हूँ। कल जब तुमसे बातें करने बैठूँगी तब बीबी रानी तुमको और सीख दूँगी।

तुम्हारी
शान्ति

शरीर आकर्षक कैसे हो ?

शान्ति कुटी
शिमला
२३-८-२७

जितने सखुन हैं, सब में, यही है सखुन दुरुस्त
अल्लाह आबरू से रखे और तन्दुरुस्त ॥

"नज़ीर"

"बिना अच्छे स्वास्थ्य के शरीर सुन्दर हो ही नहीं सकता"

शीला बहिन,

तुम जानना चाहती हो कि शरीर अपना आकर्षक क्यों कर बनाया जाय। मैं भी आज तुमको यही बताने के लिए बैठी हूँ। सबसे पहिली बात जो इस सम्बन्ध में तुमको बतलाना चाहती हूँ यह है कि कोई भी शरीर जो स्वस्थ नहीं या रोगी है आकर्षक नहीं हो सकता इसलिए जो स्त्री अपने शरीर को आकर्षक बनाना चाहती हो उसे चाहिये कि वह अपने स्वास्थ्य की चिन्ता अधिक रखे और अपने शरीर को हृष्ट पुष्ट बनाये रहे। स्वास्थ्य, शरीर और मुख पर, एक तेज पैदा करता है।

आदि काल में स्त्रियाँ आज सी सुकुमारी नहीं होती थीं। वे मर्दों के समान ही पराक्रमी, परिश्रमी और वीरा होती थीं। इतिहास में अगर पैठ कर देखो तो दुनियां की सारी अच्छी बातों की आरम्भ में अविष्कर्त्ती स्त्रियां ही मिलेंगी। रामायण और महाभारत के काल में स्त्री आज सी छुईमुई नहीं होती थी। कैकेयी दशरथ के साथ रण में जाती थीं। यह पुरानी कथा है।

आधुनिक इतिहास में मुग़ल और अङ्गरेज़ी सलतनत के ज़माने की भी राजपूत महारानियों, रानी दुर्गावती, लक्ष्मीबाई आदि का नाम किसने नहीं सुना है ? हमारी बहिनें कुछ दिनों ही पहिले व्यायाम करती थीं, घोड़ों* पर सवारी करती थीं; यह भी जाने दो, वर्तमान समय में ही आजकल मेमें कैसी तगड़ी और कसरत करने वाली होती हैं ? माता ही जब दुर्बल होगी तो उसके बच्चे संसार पर कैसे राज्य कर सकते हैं ? मेमों में तो छः सात मील पैदल पहाड़ों पर चली जाना और फिर वहां दोस्तों की दावत का प्रबन्ध करना और सब को भोजन देना एक साधारण सी बात है। मर्दों की ही फुर्ती और चुस्ती से घन्टे भर टेनिस खेल लेना भी वह कोई कठिन बात नहीं समझतीं। हमारी बिलायती बहिनें तो 'ब्रिटिश चैनल' को भी तैर कर पार कर लेती हैं और "सोवियट रूस" में तो अब स्त्रियाँ फौजों में भर्ती हो गई हैं, और सेना नायक भी बन गई हैं। हममें से कितनी बीबी रानियाँ यह सब कर सकती हैं ? यहाँ तो आज सर में दर्द है, कल पेट में दर्द है, परसों ज़ुकाम है, चौथे दिन हरारत है, मियाँ बेचारे की जान की आ लगती है। सच पूछा जाय तो हम लोगों से अच्छी तो हमारी माएँ और दादियाँ हैं। आये दिन तो व्रत, फिर रोज सवेरे, मुंह अँधेरे, गङ्गा, और फिर आते ही गृहस्थी के कामों में जुट जाती हैं। ये हम लोगों से अधिक काम करती हैं, और फिर भी न थकावट है और न सर और नाक में दर्द। इन की काठी ही मानों कुछ दूसरी है।

मगर इसमें हम लोगों का तनिक भी दोष नहीं। अपनी बद-

---

* महाराज कुमारियां और बड़े बड़े राजपूत घरानों की बेटियां अब भी घोड़ों की सवारी करती हैं, शिकार खेलती हैं और बन्दूकों से अच्छा निशाना लगाती हैं।

किस्मती और देश के अभाग्य से, साथ ही गुलामी की जंजीरों में जकड़े और ऐयासी में पड़े रहने के कारण हमारे मर्दों का स्त्री सम्बन्धी आदर्श ही दूसरा हो गया था। वह कोमलाङ्गी और गुलाब की पंखड़ियों से भी अधिक सुकुमार स्त्री चाहते थे। उनका आदर्श था कि स्त्री फूल सी नाजुक साथ ही वजन में फूल के समान ही हो। हिन्दू कवियों में पंडितराज आदि तथा मुसलमान कवियों ने तो इस सम्बन्ध में हमारा और भी नाश कर मारा। इन लोगों ने हँसती बोलती बुलबुल और गुड़िया ही हमको बना दिया। कहने लगे, "बाल आया हाथ में धोखा कमर का हो गया"; "पान की पीक से छिल जाती हैं गरदन की रगें"; हमारे ही मुख से कहला दिया:—

"सुगन्ध लगाऊँ तों ऊभ मरूँ,
और ऊभ मरूँ पहिने तन सारी।
हार चमेली को भार सो लागत,
जानत हो तन की सुकुमारी।"

मन यही कहता है कि सामने होते तो इन सब की बुरी गति बनाती, इनके होश ठिकाने कर देती और इनको बतलाती कि समाज या जाति के सामने गलत आदर्श रखने का क्या फल होता है, उसकी सज़ा क्या होनी चाहिए। हमारे देश में ही ऐसा रहा हो सो नहीं है। पश्चिमीय प्रदेशों में भी 'पतली कमर' का दौर दौरा था। पुरुषों की स्वार्थपरता और कामुकता के कारण वहाँ कार्सेट* पहनने की एक बड़ी भयानक प्रथा चल पड़ी थी किन्तु शिक्षा-प्राप्त और अपना भला बुरा समझाने वाली हमारी

*लोहे और स्टील के यह बने होते थे, कमर और स्तन इससे एकदम ऐसे कसे जाते थे कि बढ़ ही नहीं सकते थे। जैसे चीनी स्त्रियाँ अपने पैर को नहीं बढ़ने देती थीं, उसी प्रकार से मेमें यह कसतीं थीं।

पश्चिमी बहिनें इन प्रथाओं को अब लात मार रही हैं अब उन्होंने समझ लिया है कि लोहे, हड्डी या बेतों के 'कार्सेट' की अपेक्षा, मसिल बेल्ट या मसिल कार्सेट, अपने ही शरीर की रगों और पट्ठों से बने हुए 'कार्सेट' श्रेष्ठ और लाभकर हैं। ये "पतली कमर के पुजारी" कविगण और कामवासना में लीन मर्द लोग तो चले ही गये, अपने को बरबाद भी कर गये किन्तु साथ ही साथ स्त्री समाज और आगे आने वाली सन्तानों का भी ये नाश मार गये और सदा के लिए हमको गुलामी में जकड़ गए। आश्चर्य तो यह है कि अभी भी पुरुषों की आँखे नहीं खुली। इनको अब भी इसकी फिक्र नहीं कि लड़कियों को बचपन से ही कुछ कसरत का शौक करायें। करायें भी कैसे, अभी तो अपने लड़कों को कसरती बनाना भी यह अपने लिये अभिमान की बात नहीं समझते। खैर, "बीती ताहि बिसार दे आगे की सुध लेय" बीबी रानी! अभी से, पाँच मिनट के लिए ही सही, कुछ साधारण हलकी कसरत करना शुरू कर दो। *मूलर्स एकसरसाइज़ ही करो, डंबल, मुग्दर की ज़रूरत नहीं। हमको मर्दों से से न कुश्ती करनी है और न उनका मुकाबला ही करना है किन्तु शरीर की रक्षा करना तो हमारा धर्म ही है। सब से अच्छा तो मील दो मील सुबह शाम चल लेना या तैर लेना है, किन्तु यह हो कैसे, पर्दा है और फिर शहर में निकलें कहां और शहर के बाहर जाँय तो सवारी चाहिये या पैसे रोज। गङ्गा यमुना के स्नान से यह कुछ हो जाता था किन्तु अब वह अधिकतर बड़ी बूढ़ियों के लिए है, रोगियों के लिए है, कुछ धर्मिष्टों के लिए है और अधिकतर उनके लिए है जो दूसरों की बहू बेटियों को ताकने जाते हैं, जो बगुला भगत हैं और जिनके ही लिए यह कहावत है "तसवीह फेरूँ किसको

---

*मूलर साहब के क्रम की कसरत।

घेरूँ"। बहू बेटियों का तो अब तिथि त्योहारों पर भी जाना मुश्किल हो गया है। पानी में घुसो तो आखें गड़ी हुई हैं, कपड़े बदलने खड़ी हों तो आखें ऊपर से हट ही नहीं रही हैं और फिर एक ओर हो तो कोई बचाये, जिधर फिरो उधर कोई न कोई ताक रहा है। अपना राज होता तो इन लुच्चों की आंखे जलते हुए गर्म सीकचों से निकलवा लेती, इन दोज़खो कुत्तों को तब मालूम होता कि दूसरों की बहू बेटियों के ताकने में क्या मज़ा है। ये ताकने वाले यह भूल ही जाते हैं कि जैसे यह दूसरों की बहू बेटियों को तकते हैं इसी तरह से दूसरे इनकी माँ बहिनों को भी तकते होंगे। गंगा यमुना इन लोगों की कृपा से गईं। इसलिए लाज़मी यही है कि सुबह नहा धोकर दस पन्द्रह मिनट कुछ कसरत कर लिया करो, कुछ न हो तो अपने कमरे के ही, उसके दरवाज़ों को चारों ओर से खोल कर, जिसमें पवित्र वायु हर तरफ़ से आती रहे, गिन कर कसरत के नाम से सौ दो सौ चक्कर लगा लिया करो। अच्छा तो सबसे यह है कि श्वास की, पेट, पैर और गर्दन की कुछ कसरत दस मिनट नित्य कर लिया करो।

अभी कुछ दिन ही पहले स्त्रियाँ अपने घर का बरतन चौका कर लेती थीं, आटा पीस लेती थीं, दाल दर लेती थीं, अपने घर की झाड़ू बोहारू कर लेती थीं, अभी भी बहुत से घरों में कम से कम एकादशी के दिन जाता धो लिया जाता है, और घर की स्त्रियाँ कूट्टू का आटा पीस लेती हैं जिसमें वह किसी का छुआ न हो किन्तु हम बीबी रानियों के राज में तो यह सब कुछ नहीं है। इन कामों के करने से जो कसरत हो जाती थी वह भी गई दूसरी ओर दिन रात हम मकानों में बन्द रहती हैं जहाँ न सूर्य की किरणें मजे से खेल सकती हैं और न *पवित्र वायु का अच्छा

*"सौ दवा न एक हवा" पुरानी कहावत है।

संचार होता है। ऐसी दशा में शरीर में आब और चमक आए कहाँसे ? चमक और आब के लिए तो सूर्य की किरणें और पवित्र हवा की सब से अधिक आवश्यकता है। खैर, इन बातों को तूल कहाँ तक दूँ पर मेरी अगर मानों तो तुम सुबह हाथ पैर हिलाने की, जो तुम को रुचे वह कसरत दस मिनट जरूर कर लिया करो।

एक स्त्री सच्चा सौन्दर्य, लावण्य, सुडौलता, ज़ेबाइश, ज़ीनत, खुशअदाएँ और लालित्य केवल हाथ पैर की *लयानुगत-क्रिया से प्राप्त कर सकती है। दो बात और करना। पहिली यह कि अपने कमरे को झाड़ू या ब्रश से तुम खुद साफ किया करो। तुम भी और तुम्हारी अन्य बहिनें और दुनियाँ वाले भी इस बात पर हँसेंगे, किन्तु मैं तुम से कहती हूँ कि इसमें कुछ रहस्य है और अगर इसे तुम करती रहोगी तो जीवन भर इसके फल के सुख भोगोगी और दूल्हा भाई भी सहसा तुम्हारे बन्धन से नहीं भाग सकेंगे। एक बात और है और वह यह कि सुबह कसरत करते समय तीन चार बार *(बेण्ड), झुक जाने की कसरत कर लिया करो। दूल्हा भाई अगर दो चार दस दिन सहायता देकर यह करा देगें तो कुछ दिनों में अभ्यास होते होते बिना सहायता के तुम आप से आप इसे कर लिया करोगी "पनिहारी की लेज से, सहज कटे पाखान" किन्तु दूल्हा भाई को उस समय फुर्सत न हो तो तुम खुद जमीन पर लेट कर हाथ और पैर के सहारे जिस तरह से तस्वीर में बना है उठ जाया करो। झाड़ देने और इस कसरत से प्रायः अर्थ एक ही निकलता है किन्तु दोनों के द्वारा दो भिन्न क्रियायें होती हैं। तुम कहोगी कि तारीफ तो इतनी

---

*Rythmic movements.

*परिशिष्ट भाग में चित्र दिया हुआ है।

कर दी मगर बतातीं नहीं आखिर इनसे होगा क्या ? मेरा जवाब इतना ही है कि कभी भेंट होने पर जबानी कह दूँगी, पत्र में नहीं लिखूँगी दूल्हा भाई की कहीं नजर पड़ गई तो मुझको शर्म आयेगी। हाँ, तुम्हारे सन्तोष के लिए इतना कह देना मुनासिब समझती हूँ कि इन दोनों से यौवन-श्री की प्रशंसनीय बृद्धि होती है।

पटा खेलने से भी स्त्री का शरीर बड़ा ही सुन्दर और सुडौल हो जाता है। देश की समाज की, तथा आवश्यक होने पर अपनी रक्षा के हेतु प्रत्येक स्त्री को अस्त्र शस्त्र का प्रयोग कुछ सीखना भी चाहिये।

महात्माजी ने जो चर्खे का क्रम जारी किया है, वह भी बहुत अच्छा है। स्त्रियों को चाहिये कि और किसी प्रेम से नहीं तो अपने शरीर के प्रेम से ही चर्खा चलाया करें। चर्खे का माहात्म्य कुछ विचित्र ही है। महात्माजी तो कहते ही हैं "वात्स्यायन" ने भी पतिव्रताओं के कर्तव्य में लिखा है:—

"कर्पासस्य च सूत्र कर्तनम् · सूत्र वानम्"

"रुई का सूत काता करे और उससे कपड़ा तैयार किया करे" अगर दूल्हा भाई अभी पढ़ते न होते और सुबह तुमको समय दे सकते तब तो मैं यही सलाह देती कि तुम लोग सुबह साथ ही जाकर मील दो मील का चक्कर लगा आया करो और सूर्योदय तक घर वापस आ जाया करो किन्तु दूल्हा भाई से कदाचित यह सधेगा नहीं इस लिए लाचारी है।

शरीर को बाहर से स्वस्थ रखने के लिए जो चाहिये वह मैं तुम को बता चुकी अब इस संबन्ध में सहज में और क्या किया जा सकता है यह भी बतला देना चाहती हूं। सबसे पहिली बात जो बतलाना चाहती हूं वह एक अङ्गरेजी की कहावत है। "रात्रि में जल्दी सो जाना और सुबह जल्दी उठ जाना मनुष्य को स्वस्थ, धीमान और श्रीमान बनाता है"। अपने यहाँ भी इसी

के जोड़ की नहीं इससे भी एक अंश में अच्छी कहावत है "प्रातः स्नायी सदा सुखी।" "प्रातः काल करो स्नाना, रोग दोष तुमको नहिं आना" सूर्योदय के पहिले स्नान कर सूर्य को अर्घ*देना ऋषियों का क्रम भी था। मेरी राय में जिस तरह से यह सब पुरुष के लिए ठीक है वैसे ही यह स्त्री के लिए भी ठीक है। मेरा अपना अनुभव तो यह है कि स्त्रियों के लिए पुरुषों की अपेक्षा यह अधिक हितकर है। एक आश्चर्य-जनक सत्य तुमको यह बतलाना चाहती हूं कि बारह बजे रात्रि के पहिले जो बाला स्त्री जितने अधिक घंटे सो लेगी उसका शरीर वैसा ही सुवर्ण सा चमकेगा और उसके मुख पर उतना ही अधिक तेज होगा। विवाह, शादी, दावतों में कभी कुछ देर हो जाय तो बात दूसरी है किन्तु मामूली तौर से एक बाला स्त्री को नौ और दस के बीच में सो जाना चाहिये। बारह बजे रात्रि के पहिले की नींद और सुबह की हवा और सूर्य की किरणें शरीर को सुन्दर और हृष्ट-पुष्ट बनाने की सर्वश्रेष्ट कीमियाँ है।

सृष्टि में चारों ओर निगाह फेंक कर देखो, दिन काम करने और दुनिया की झंझटों के लिए है और रात्रि सोने तथा आराम करने के लिए। सन्ध्या होते ही पशु पक्षी सब घोसलों, माँदों या थानों पर चले जाते हैं। दुष्ट हिंसक जीव, वह भी नीच प्रकृति के ही, रात्रि में जागते हैं, ठीक उसी तरह से जैसे रात्रि में चोर, डाकू, हत्यारे और लम्पट जागते हैं।

सुबह चार बजे से ही मुर्गे बाँग देने लगते हैं, उषा-काल में पक्षी सब घोंसलों से निकल ईश्वर का गुनगान करते, गाते,

---

*एक अङ्गरेज लेखक ने अभी ही इस संबन्ध में बहुत कुछ लिखा है। नित्य सुबह सूर्य की पूजा और अर्घ से अनेक महा कठिन रोग दूर हो जाते हैं। तुलसी की फेरी में भी तथ्य था।

नाचते, कूदते, उड़ते दिखाई देने लगते हैं। चतुर नर नारियों को सृष्टि के इस प्रबन्ध तथा पशु पक्षियों से भी इस सम्बन्ध में शिक्षा लेनी चाहिये।

एक बात और कह देना चाहती हू और वह यह है कि सोना उस वक्त अच्छा होता है जब भोजन पचने लगा हो और पेट हलका हो चला हो। इसके लिए ज़रूरी यह है कि भोजन और सोने में कम के कम तीन घंटे का अन्तर हो। कहने का मतलब यह है कि नो और दस के बीच सो जाने के लिए यह ज़रूरी है कि बियारी छः, साढ़े छः या सात बजे तक हो जाय। दो तीन बातों का करना और भी ज़रूरी है। सबसे पहिली यह कि सोने से कम से कम आध घंटे पहिले गर्म दूध और कभी दूध न हो तो गर्म पानी हो एक ग्लास पी लेना चाहिये साथ ही सुबह उठते ही कुल्ला कर और मुँह साफ कर तुरन्त ही एक गिलास रात का रखा हुआ ठंडा पानो पो लेना चाहिये। देखने में यह महा साधारण बातें हैं किन्तु वैवाहिक जीवन आरम्भ करने के दिन से आज तक मैं यह सब नित्य कर रही हूं और सच मानो शरीर को स्वस्थ, सुन्दर और सुडौल बनाने के लिए यह नुस्खा लाख रुपये का है।

शरीर को आकर्षक बनाने के लिए, उसे स्वस्थ रखने के लिए जितनी बातें आवश्यक थीं साधारण रूप से मैंने कह दीं, अब जो बातें मुझको और कहनी हैं उनको शरीर के शृङ्गार की चर्चा के साथ कहूंगी। इस पत्र में केवल एक बात और कह देना चाहती हूं और वह यह कि पुरुष और स्त्री दोनों के लिए ही यह आवश्यक है कि सोते समय कमर एक दम ढीली रहे, धोती या सारी कसी न हो, कमर बहुत कसी होने से सोने में स्वांस का जैसा चाहिये

*Abdomen

शरीर में संचार नहीं होता साथ ही*पेट के नीचे के भाग को भी जितनी स्वतंत्रता चाहिये नहीं मिलती । यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि मुँह ढक कर सोना बहुत ही हानिकारक होता है ।

बीबी रानी ! कहोगी कि अन्नादाई ही नहीं मैं सचमुच लेडी डाक्टर या डाक्टरबाई बन गई हूं किन्तु शीला बहिन, अपने शरीर और स्वास्थ्य की तथा अपने बच्चों की रक्षा के निमित्त प्रत्येक स्त्री का कुछ अंश में लेडी डाक्टर*होना बहुत ज़रूरी है ।

अब इस पत्र को यही समाप्त करती हूं । शरीर को आकर्षक बनाने के लिए और क्या क्या करना चाहिये और शरीर का श्रृङ्गार कैसे किया जाय इस सम्बन्ध में तुमको कल लिखूंगी । नमस्कार ।

तुम्हारी
शान्ति

---

*हमारी ही दादियां साधारण रूप से सैकड़ों दवायें जानती थीं, और साधारण रोगों और बच्चों का इलाज तो सर्वोत्तम रूप से वही किया करती थीं ।

why some fail—
"Too much talk ! not enough walk
Too much sigh ! not enough try
Too much blow ! not enough go
Too much blink ! not enough think
Too much mope ! not enough hope
Too much shirk ! not enough work"

शरीर की सफ़ाई

शान्तिकुटी
शिमला
२४-८-२७

प्यारी शीला बहिन,

स्वास्थ्य के सम्बन्ध में मोटी मोटी साथ ही आवश्यक बातें पिछले पत्र में तुमको लिख चुकी हूं। बीमार तो साल में एक दो बार मैं भी पड़ती ही हूँ किन्तु सच बात यह है कि सौ में निन्यानवे मनुष्य अपनी भूल या बेवकूफी से ही बीमार पड़ते हैं। अगर प्रकृति का विरोध और उसकी हठ-धर्मी से अवहेलना न की जाय, साथ ही प्रकृति के नियमों पर ध्यान सदा रखा जाय तो कोई कभी बीमार हो ही नही सकता। बीमार होने पर पड़ी पड़ी मैं यह सोचा करती हूं कि मुझसे कौन सी भूल हो गई, किस समय मैंने प्रकृति की अवहेलना की और सच मानो कभी कभी बीमारी का कारण ठीक समझ में आ जाता है। एक बात और बतला दूं, रोगी और नित्य ही चारपाई पर पड़ी रहने वाली स्त्री से पति ऊब जाता है, उसकी जान हलाकान हो जाती है, और पत्नी का प्रेम उसके हृदय से जाता रहता है, शिष्टता और मनुष्यत्व के नाम पर वह दवादारू की फिक्र कितनी ही क्यों न करता रहे। अभी चार दिन ही हुए मैं अपनी एक मेम मित्र से, यह सुन कर कि वह बहुत बीमार हैं, मिलने गई थी। वह जन्म की रोगिन हैं भी। पहुँचने पर मैंने देखा वह आराम कुर्सी पर बैठी साधारण गृहस्थी के प्रबन्ध में लीन हैं। मुझको यह देख कर बहुत आश्चर्य हुआ और मैंने कहा,

आप अपना पलङ्ग छोड़ कर यह क्या कर रही हैं, इससे तो तकलीफ़ के बढ़ जाने की आशङ्का है। उनका जवाब यही था कि प्यारी वहिन, पति रोगी स्त्री से ऊब जाता है। हर समय बीमार देख पतिदेव खिन्न हो जाते हैं। और मैं जानती हूं कि संसार की सभी बातों की भांति मानव-प्रेम की भी एक सीमा होती है, अस्तु।

अब में शरीर की भीतरी और बाहरी सफ़ाई के संबन्ध में कुछ बातें कहने के बाद शरीर के संबन्ध में तुमको कुछ विशेष बातें बतलाऊगी।

सब से पहिली बात जिसकी ओर मैं तुम्हारा ध्यान आकृष्ट करना चाहती हूं वह साधारण सफ़ाई का प्रेम है। सुनने में बात बहुत ही साधारण सी है किन्तु मैं तुम से इतना ही कहना चाहती हूं कि जितनी ही यह साधारण है, उतनी ही नहीं, उससे कहीं अधिक यह महत्वपूर्ण और सुफलों की देने वाली है। बाइबिल में लिखा हुआ है* "पवित्रता का पद देवत्व से कुछ ही कम है," यह बात बावन तोला पाव रत्ती ठीक है। अगर नर और नारी शरीर और हृदय में सफ़ाई और पवित्रता रखें तो यह संसार दुःख का राज्य न होकर सुखों का केन्द्र बन जाय। इस सम्बन्ध में सब से पहले स्नान की बात मैं तुमको बतलाऊँगी। यह प्रसन्नता की बात है कि नित्य स्नान करना हम हिन्दुओं में धर्म में शामिल कर दिया गया। मुसलमानों और अंगरेजों में नित्य स्नान की प्रथा न होने से उनका शरीर, हाथ, मुंह को छोड़ कर जो हर समय दिखाई देते रहते हैं, अक्सर गन्दा रहता है। पश्चिमीय प्रदेशों में ठंड इतनी पड़ती है कि पानी के संसर्ग से ही लोग काँपते हैं; यद्यपि अब प्रथा वहाँ बदल रही है। अरब की

---

*Cleanliness is next to Godliness.

मरु-भूमि में पानी की बहुत कमी थी, इसका नतीजा यह हुआ कि कुरान ने पानी के अधिक खर्च को भी पाप बतलाया है। इसी का नतीजा यह है कि इस देश में रहते हुए मुसलमान मुश्किल से ही कम के कम जाड़ों में सप्ताह में एक दिन जुमे की निमाज के लिए नहाया करते हैं। ऋषियों की तपो-भूमि और गंगा यमुना तथा अन्य नदियों के इस प्रदेश में पानी की कमी न थी, साथ ही हमारे पूर्वज स्नान तथा शरीर और मन की सफ़ाई के महत्व को संसार में सब से अधिक समझते थे। उन लोगों ने इसी लिए नित्य स्नान को आवश्यक धर्म या कर्तव्य बतलाया, किन्तु हमारे पतन काल में जिस तरह से अन्य बातें केवल रूढ़ि के समान रह गई हैं, उनके महत्व, तत्व और मर्म को हम भूल गयी हैं उसी तरह से स्नान के सम्बन्ध में भी हुआ है। हम केवल उसे धर्म समझ कर अब उसकी लीक पीट रही हैं। कहते दुःख होता है, केवल इस कारण से कि यह धर्म का अङ्ग है कि बिना स्नान के हम रसोई तथा भोजन नहीं कर सकतीं, एक मिनट में दो लोटा पानी शरीर पर फेंक लेने को ही स्नान समझने लगी हैं। जल्दी से सर पर पानी फेंकने में कुछ सर पर पड़ता है, कुछ पीठ पर बाकी जमीन पर। कभी कभी तो पेट, और हाथ तथा कमर पर अच्छी तरह पानी भी नहीं पड़ता, धोती या सारी ज्यों की त्यों सूखी ही रह जाती है, भीगती ही नहीं किन्तु कितने ही हिन्दू समझ लेते हैं कि हमने स्नान कर लिया और शोला, चिटका, कोरा, मुटका, पीताम्बर या दूसरी ही धोती पहन दो मिन्टी पूजा कर रसोई में पहुंच जाते हैं। एक दो घरों का हाल सुना है जहां कोरा, चिटका, या मुटका काहली से चीथड़ा और मैला होता है किन्तु हमारे सर पर जूं नहीं रेंगती, लोग उसी को पहिनते हैं और समझते हैं कि वह धर्म का पालन पूर्ण रूप से कर रहे हैं। मैं इतना ही कह देना चाहती हूँ कि यह धर्म का पालन नहीं उसकी कमर तोड़ना है।

ससार में जितनी आवश्यक और अच्छी बातें, जितने अच्छे (Rules of conduct) जीवन के नियम थे, हमारे ऋषियों ने सभी को धर्म के नाम से पुकारा। कारण यह था कि धर्म का अर्थ कर्तव्य है और दूसरे धर्मभीरु और धर्मप्राण होने से धर्म का नाम साथ होने के कारण हम उन नियमों का सदा ध्यान रखतीं। उन लोगों ने यह सब हम लोगों की भलाई के लिए किया था किन्तु अपने अभाग्य से हम उन बातों के मर्म और महत्व को भूल गई हैं और धर्म के नाम पर अब केवल लीक ही पीट रही हैं। खैर, मतलब यह है कि स्नान का अर्थ दो लोटा पानी शरीर पर छोड़ लेना नहीं है और न बंबे के नीचे दो मिनट खड़े होकर भाग जाना स्नान ही है। हम स्त्रियों के लिए स्नान के सम्बन्ध में अनेक कठिनाइयां थीं। हम लोगों में एक कहावत है कि स्त्री को भोजन में और पुरुष को स्नान में अधिक समय लगता है। किसी (proposition) कौल, नियमवाक्य मत या सिद्धान्त का (contrary) विपरीत, प्रतिकूल, विरुद्ध, विपर्यय, या उल्टा भी ठीक नहीं हुआ करता किन्तु अपने अभाग्य से हम स्त्रियाँ इस कहावत का अर्थ यह भी समझने लगीं कि स्नान में स्त्री को कम से कम समय लगना चाहिये। दूसरी कठिनाई यह भी थी कि स्त्रियों के लिए घरों में गुप्त स्नानागार का प्रबन्ध न था। पहिले ज़माने में नदी, तालाब व कुओं पर स्त्रियाँ नहाती थीं। चारों ओर वहाँ पुरुष भी होते थे। किसी तरह जल्दी स्नान कर, घर भाग आना ही फर्ज़ था। घर पर पानी लाना, एक और कबाहत थी, जब कि घर का पानी स्त्रियाँ ही भर लाया करती थीं। अगर घर पर किसी दिन पानी लाईं भी तो कम खर्च का ख्याल होता था क्योंकि पानी भरना और लाना तो उनको ही पड़ता था, तीसरे चूल्हा जलाने और भोजन बनाने की भी जल्दी होती थी क्योंकि खेत के कामों से पुरुष भी उसी समय लौटते थे और कुटुम्बियों

को भोजन देना ज़रूरी होता था। घरों में बन्द स्नानागार थे ही नहीं, आखिर गरीब क्या करतीं? अब भी पुरानी प्रथा के बने हुए मकानों में स्नानागार या स्नान के कमरे नहीं हैं। स्त्रियों और मर्दों दोनों को ही इस आवश्कता की ओर ध्यान देना चाहिये। कमरे हों या नहीं, स्त्री को पर्दे का प्रबन्ध कर, या जिस समय मर्द घर के बाहर या बैठक में हों स्नान का प्रबन्ध कर लेना चाहिये।

स्नान का अर्थ शरीर की पूर्ण रूप से सफ़ाई है, और शरीर के रोम रोम के छिद्रों को साफ़ कर देना है जिससे उनमें हवा और सूर्य का प्रकाश पहुंचता रहे। देखने में शरीर में मैल अक्सर दिखाई नहीं देता किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि मैल होता भी नहीं।

प्रत्येक स्त्री को स्नान में कम से कम पन्द्रह या बीस मिनट लगाना चाहिये। सबेरे उठकर नित्य-क्रिया से छुट्टी पा ठंडे पानी से, बासी पानी और भी हितकर होता है, स्नान करना चाहिए। भगवान कृष्ण ने चीर-हरण-लीला से यह भी शिक्षा स्त्रियों को दी थी कि वह कपड़ा उतार कर नग्न हो स्नान न किया करें। यह शिक्षा आज दिन भी नहीं मानी जाती किन्तु इसका अर्थ यही था कि घट और घाट पर, या खुली हुई जगहों में, जहाँ मर्दों का गुज़र हो, स्त्रियां नग्न हो कर न स्नान करें। गुप्त स्नानागारों और अपने घरों के कमरों में, छतों पर नहीं, एक स्त्री को अपने रात्रि के कपड़े अलग कर ही स्नान करना चाहिए। अच्छा तो यह हो कि एक टब हो, उसमें पानी भरा हो साथ ही पास एक हंडे या बालटी में स्पंज भीगता रखा हो। टब में वह बैठ जाय और मुलायम स्पंज से अपने अङ्ग प्रत्यङ्ग को खूब रगड़ दे। सबसे पहिले छाती पर पानी का तरारा दे उस पर स्पंज फेर देना चाहिये। इसके बाद पेट और पेड़ू को

स्पंज से मुलायमियत से रगड़ना चाहिये। इसके बाद गरदन, पीठ, पैर, हाथ और सभी अंगों को स्पंज का लाभ पहुँचा देना चाहिये। अनन्तर एक खुर खुरे तौलिये से, खद्दर का तौलिया इस काम के लिये सर्वोत्तम होता है, शरीर को रगड़ रगड़ कर उसका सब पानी पोंछ देना चाहिए, इस तरह से कि शरीर में एक प्रकार की चमक आ जाय। बहुत से मर्द भी हमारे तौलिया या अगोंछे के महत्व को नहीं जानते। कुछ तो बदन पोंछना धर्म ही नहीं समझते, अनेक पहिनी हुई धोती के एक सिरे से अगोंछे का काम ले लेते हैं। बदन को न पोछने से तथा उसे पहिनी हुई धोती से पोछने से स्नान से लाभ होने की अपेक्षा हानि होती है। महीने ही में एक दो बार गर्म पानी में सारे सारे शरीर को कुछ मिन्टों के लिए डुबो देना भी अच्छा होता है।

आज कल की हमारी अनेक नाम की पढ़ी लिखी, पश्चिमीय रंग में रंगी, बीबी रानियां, केवल आधे हाथ मुंह, गर्दन और पैरों को स्पन्ज से धो लेने या तौलियों से पोंछ लेने को ही स्नान* समझने लगी हैं। इस प्रथा की जितनी निन्दा की जाय कम है।

स्नान के बाद बहुत ही साफ धुले हुए कपड़ों को पहिनना चाहिये। स्नान के बाद फिर मैले या पहिने हुए कपड़ों के पहिन लेने से स्नान का लाभ काफ़ूर हो जाता है।

हमारी बहुत सी बहिनें स्नान के बाद पौडर लगा लेती हैं। पौडर से शरीर में एक तरह की खुशबू सी आ जाती है, शरीर में ताजगी भी उससे आती है, साथ ही मन भी प्रफुल्लित हो जाता है किन्तु मेरी राय में जो ठंढे पानी से, जिस प्रकार से मैंने ऊपर कहा

---

*"आये चैत सुहावन, फूहड़ मैल छुड़ावन" की कहावत इस देश में फूहड़ स्त्रियों के लिए थी जो शीत के भय से जाड़ों में स्नान करने से डरती थीं।

है, स्नान करे उसे पौडर लगाने की कोई भी आवश्यकता नहीं है। मैं यूँ भी पाउडर के विरुद्ध हूं क्योंकि मेरा ख्याल है कि फेफड़ों ही के समान शरीर के चमड़े को भी श्वास लेने की जरुरत रहती है। पाउडर से चमड़े के छिद्र बन्द हो जाते हैं, पसीना उन्हीं में मरता और सड़ता रहता है, साथ ही *मल शरीर में प्रवेश कर जाता है और धीरे धीरे कुछ दिनों में शरीर की चमक और रंगत जाती रहती है। अन्त में इतना ही कह कर कि शरीर को आकर्षक और सुन्दर बनाने के लिए इस तरह से स्नान और शरीर की सफाई आवश्यक है, मैं शरीर की भीतरी सफाई की बात पर आती हूं।

शरीर की भीतरी सफ़ाई के लिए प्रकृति ने सर्वोत्तम प्रबन्ध आप ही कर रखा है। हमारा काम यही है कि हम देखती रहें कि प्रकृति का प्रबन्ध ठीक चल रहा है। साथ ही आवश्यक होने पर प्रकृति को कभी कभी हमको कुछ सहायता भी देती रहना चाहिये।

पेट का साफ न होना, उसका भारीपन, कब्ज़ का रहना, शरीर के स्वास्थ्य को ही नहीं शरीर की चमक दमक और सौन्दर्य को नष्ट कर देता है। प्रकृति ने प्रबन्ध किया है कि शरीर से मल बाहर हो जाय ऐसी दशा में यदि यह पेट या अतड़ियों में किसी तरहसे रह गया तो निस्सन्देह ही हानि करेगा। अगर यह पेट में ही पड़ा रह जाता है तो इससे ज़हरीला गैस (अबखरात) पैदा होकर फिर शरीर में ही समा जाता है और इससे शरीर को बहुत कष्ट आगे चलकर पहुँचता है। पेट का साफ़ न होना, संसार को समस्त बीमारियों का प्रधान कारण है। एक बात से और तुमको सावधान कर देना चाहती हूँ, अक्सर मर्द और स्त्रियाँ भी सुबह पलंग से उठते ही शौच से निबृत्त नहीं हो लेते, यह बड़ी गन्दी आदत होती है। चाहिये तो यह कि सूर्योदय के पहिले पेट से मल

---

*Foreign matter.

बाहर हो जाये, क्योंकि पेट में सूर्योदय के बाद मल रहने से ज़हरीला गैस शरीर और मस्तिष्क में भीन जाता है किन्तु यह न हो सके तो पलंग से उठते ही शौच से निबृत ज़रूर हो लेना चाहिये।

मैं जुलाबों के पक्ष में नहीं, न मैं इसके ही पक्ष में हूँ कि "इनोज़ फ्रूट साल्ट" "इप्सम्स साल्ट" "क्रूशन साल्ट" या दस्तावर दवाओं आदि का ही शरीर आदी बनाया जाय मैं तो औषधियों के, वह कैसी ही क्यों न हों, विरुद्ध हूं, और प्रकृति की ही सहायता लेना सदा लाभकर समझती हूं। पेट की सफ़ाई के लिए मील दो मील चल लेना, या साधारण पेट की कसरत* कर लेना, उठते ही एक गिलास ठंढा पानी पी लेना या रात्रि में सोते समय गर्म पानी पी लेना जिसका ज़िक्र मैं पहिले कर चुकी हूं, काफी है। आज के लिए इतना सबक तुमको काफी होना चाहिये, अब अगले पत्र में शरीर को चमत्कार-पूर्ण बनाये रखने के लिए भोजन कैसा होना चाहिये और अङ्ग प्रत्यङ्ग की लुनाई की बृद्धि के लिए और क्या क्या करना चाहिये इस सम्बन्ध में लिखूँगी।

आशा है तुम प्रसन्न होगी और दूल्हा भाई को बहुत दिक नहीं करती होगी।

तुम्हारी
शान्ति

---

*Abdominal Exercise.

भोजन कैसा हो ?

शान्ति कुटी

शिमला

२५-८-२७

बहिन शीला,

शरीर के स्वास्थ्य और उसकी बाहरी और भीतरी सफ़ाई के सम्बन्ध में पिछले पत्रों में आवश्यक बातें मैं लिख चुकी हूं, आज मैं तुम से भोजन के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहती हूं। शरीर भोजन के सहारे ही चल सकता है, इसलिए प्रत्येक स्त्री को जो अपने शरीर को स्वस्थ और आकर्षक बनाना चाहती है भोजन के सम्बन्ध में विशेष ध्यान रखना चाहिये।

यह हमारा अभाग्य है कि देश में इतनी पुस्तकें नित्य प्रति प्रकाशित हो रही हैं किन्तु लेखकों ने कृपा कर यह नहीं किया कि देश की या कम के कम प्रान्त की सब कहावतों का एक संग्रह प्रकाशित कर देते। एक दो पुस्तकें ऐसी मेरी नज़र से ज़रूर गुज़री हैं किन्तु लेखकों को उनसे ही सन्तोष न कर लेना चाहिए। कहावतों में पूर्वजों के अनुभव, आने वाली सन्तानों के लिए उनके संदेश, और जीवन के सद्व्यवहार के नियम भरे पड़े हैं। उनकी सहायता से बहुत अंशों हम जीवन की कठिनाइयों का सामना कर सकती हैं। आज तुमको एक ऐसी ही कहावत सुनाती हूं। मालूम नहीं तुमने कभी सुना या नहीं किन्तु कहावत पुरानी है—

"गया मर्द जिन खाई खटाई।
गई नारि जिन खाई मिठाई॥"

मैं तुमसे यही कहना चाहती हूं कि मीठा खाने से और मिठाई की आदी होने से और जो कुफल फलते हों सो फलते हों किन्तु जो प्रत्यक्ष सत्य है वह यह है कि अधिक मीठे की खाने वाली स्त्रियाँ बीमार जल्दी पड़ा करती हैं, उनके दाँत खराब हो जाते हैं और साथ ही उनके शरीर की कान्ति बहुत जल्द क्षीण होती है। मैं इसलिए तुमसे अनुरोध पूर्वक कहती हूं कि तुम मीठे को बहुत प्रिय न बनाना। कहावत का उपदेश यह भी है कि, जीभ को सदा वश में रखना चाहिये। चटोरी मत बनना* "तावद जितेन्द्रियों नस्यात् विजितान्येन्द्रियः पुमान, न जयेद रसनम् यावत, जितम् सर्वम् जिते रसे" रसना को वश में रखने से अन्य इन्द्रियां भी वश में रखी जा सकती हैं।

भोजन के सम्बन्ध में मुझको बहुत कुछ नहीं कहना है। जो जल्दी पच सके, साथ ही पेट को खराब करने वाला न हो वही भोजन अच्छा है। किन्तु तुमको यह भी जाना चाहिये कि खाद्य पदार्थ में अनेक ऐसी चीजें हैं जो खून को साफ करने वाली हैं, उसकी वृद्धि करने वाली हैं और शरीर की कान्ति बढ़ाने वाली हैं। सबसे पहिली वस्तु, और जिसकी जितनी भी प्रशंसा की जाय कम है, दुग्ध और दही है। इसके साथ ही साथ अगर मक्खन का भी अधिक व्यवहार किया जाय तो फिर कहना ही क्या है। इसीलिये ऋषियों ने संसार की समस्त वस्तुतों का त्याग कर भी गोधन को अपने साथ ही रक्खा था। शरीर की कान्ति की वृद्धि के लिए संसार में दुग्ध† घी और मक्खन से बढ़ कर

---

*जब तक जबान के चटोरपन पर काबू न हो मनुष्य अन्य इन्द्रियों को वश में नहीं कर सकता। एक जबान पर काबू होने से सब इन्द्रियां वश में हो सकती हैं।

†सीत दूध जिसने दे साईं।
वाको तो बैकुण्ठ यहां हीं॥

कोई चीज़ नहीं है। "भात बिना है रांड रसोई, खांड बिना अन सूती। बिन घिव की जिन रोटी खाई, मानो खाई जूती"। पश्चिमीय संसार में मक्खन और रोटी सबसे आगे चलती हैं। पश्चिमीय संसार की हर तरफ़ विजय का यह एक कारण है। प्राचीन काल में हमारे यहाँ भी माखन रोटी सबसे पहिले थी। भगवान कृष्ण तो माखन के लिए पागल रहते थे। सूरदास कृष्ण चरित्र चित्रित करते हुए लिख गये हैं:—"तनिक माखन दे मोरी माई। तनिक माखन तनिक रोटी मांगत है तुतलाई"। गरीबी और गुलामी के कारण हमारा माखन भी अब हमको नहीं मिलता, बिना एक गौ के पहिले कोई गृहस्थ गृहस्थ नहीं समझा जा सकता था किन्तु अब क्या है ?

जिसका मुख पीला पड़ने लगा हो, बदन में कमजोरी मालूम पड़ती हो और आलस्य अधिक प्रतीत होता हो उसके लिये पालक का साग बहुत ही हितकर है। विलायती भाँटा या टमाटो, रक्त को साफ़ और उसकी बृद्धि करता है। टमाटो सौन्दर्य की भी बृद्धि करता है अगर वह कच्चा खाया जाय। शलजम भी रक्त को पवित्र रखता है। साथ ही हरी तरकारियों का अधिक से अधिक खाना शरीर की रंगत की खूब बृद्धि करता है किन्तु यह सब एक ओर है और अधिक से अधिक पके हुये (आग में नहीं) फलों का नित्य प्रति सेवन एक ओर। आम, अंगूर, अमरूद, संतरा, केला, शरीफा और प्राय: सभी फल स्वास्थ्य और शरीर दोनों ही के लिए अमृत हैं।

स्त्रियों को सौन्दर्य बृद्धि का नुस्खा बताने वाली एक मेम ने एक दिन मुझसे कहा कि स्त्रियों के लिये सौन्दर्य-बृद्धि का सर्व श्रेष्ठ नुस्खा है कम* भोजन, पवित्र वायु का सेवन और चिन्ता रहित

---

* Meagre are fresh air and absence of care"

जीवन* । मैं इसमें इतना ही और जोड़ देना चाहती हूं कि दिन में कम से कम आध घन्टे सूर्य के प्रकाश का सेवन, रात्रि में बारह बजे के पहले अधिक से अधिक शयन और सुन्दर पवित्र विचारों का मस्तिष्क में विचरण।

भोजन की चर्चा के साथ ही साथ एक बात और भी कह देना चाहती हूं और वह यह कि महीने भर में कम से कम दो व्रत जरूर रख लेना चाहिये पूर्वजों ने एकादशी का व्रत बहुत समझ कर रक्खा था। स्वास्थ्य की रक्षा के लिए महीने में कम से कम दो दिन केवल फलाहार कर लेना बहुत अच्छा होता है, किन्तु

---

*सावन साग, न भादों दही, क्वार करेला, कातिक मही।
अगहन जीरा, पुसे घना माघे मिसरी फागुन चना ॥
इन बारह से बचे जो भाई, ताके घर में बैद न जाई"
यह देश की पुरानी कहावत है।

सूर्य के प्रकाश में कितना गुण है इसका अन्दाज़ा इसी से लगा लो कि आज दिन यूरोप में विशेष कर जर्मनी और फ्रांस में एक नया दल पैदा हो गया है, यह कहता है कि वसन स्वास्थ्य को नष्ट करता है वसन ही कामुकता की वृद्धि करता है और नग्न रह कर पवित्र वायु और सूर्य के रश्मियों का सेवन स्वास्थ्य के लिये अमृत तुल्य है। जर्मन सरकार ने कानूनी तौर से इस दल के अस्तित्व को स्वीकार कर लिया है और इसको सुविधाओं के लिये वह प्रबन्ध भी करने लगी है। इस दलवालों के लिए अलग मैदान, पार्क वगैरह छोड़ दिये गये हैं। छुट्टियों में वृद्ध, युवा, बालक नर नारी सब वहाँ जाते है, नग्न हो पवित्र वायु और सूर्य ये प्रकाश का सेवन करते हैं, और वहां कसरत करते, नहाते, धोते और तैरते हैं। इस दलवालों का दवा यह है कि इससे कामुकता की कमी हो रही है और इस दल-वाले अधिकतर पवित्र जीवन ही वहन करते हैं।

व्रत के मानी यह न हों कि सूखे फलों को आग में पका कर खाया जाय, सिंघाड़े या कूटू के आटे की पूरियां खाई जाँय। फलाहार से लाभ होना तो दूर रहा, सिंघाड़ा और कूटू तो अधिक हानि ही करते हैं। फलाहार सच्चा होना चाहिये अर्थात् उस दिन फलों का ही भोजन करना चाहिये। भोजन शाम को एक बार ही हो अधिक अच्छा है किन्तु यह न सध सके तो बारह बजे दिन के बाद केवल फल और शाम को दूध पी लिया जाय। बहुत से आदमी रविवार का व्रत रखते हैं, दिन भर नमक नहीं खाते, शाम को मीठे की चीजें ही खाते हैं। यह भी अच्छा व्रत है। मास में कम से कम एक दो दिन नमक बिलकुल न खाना लाभकर हुआ करता है।

भोजन के सम्बन्ध में इतना और कहना चाहती हूं कि यह बने बहुत पवित्रता से, परसा बहुत पवित्रता से जाय, और किया बहुत पवित्रता से जाय। भोजन के वसन भी पवित्र और दूसरे होने चाहिये। अंगरेजों और प्रायः सभी पश्चिमीय सभ्यता वालों ने एक भोजन का* वस्त्र ही बना लिया है। हमारे शास्त्रों की आज्ञा यह है कि भोजन ही के नहीं वरन् बाहर जाने, घर में पहिनने, सोने और खाने के सब वस्त्र अलग अलग होने चाहिये। भोजन पर बैठने के पहिले हाथ, पैर, मुंह धो लेना बहुत जरूरी है और खाकर उठने पर मुंह और दांतों को बहुत अच्छी तरह साफ कर देना चाहिये। मुँह में पानी ले एक कुल्ला कर छुट्टी पा जाना मुँह और दाँतों का साफ करना नहीं है। भोजन के समय दूसरा कपड़ा इस लिए पहन लेना चाहिये कि जो कपड़ा मनुष्य पहिले देर से पहिने हुआ था, या जिसे पहिने हुये वह बाहर आया गया है उस में जहरीले कीटाणु घूमने फिरने में आ गये हों तो कोई

*Dining suit

आश्चर्य की बात नहीं। भोजन करते समय वस्त्र से इनका भोजन में भी चला जाना आसान है। इसी दृष्टि से भोजन करते समय दूसरे साफ़ कपड़ों का पहिन लेना ज़रूरी है। ऊन या रेशम में कीटाणु रह नहीं सकते, "ऊन: वातेन शुद्धयति" इसी लिए आर्य-क्रम शोला, पीताम्बर पहिनने का है। इन बातों को छोड़ कर अधिक पवित्रता का ख्याल, अपने लिए, समाज के लिए, और देश के लिए हानिकर है।

मैं नहीं जानती इन बातों के सम्बन्ध में दूल्हा भाई के विचार क्या हैं? पढ़े लिखे होने से आशा तो है बुद्धि से बातों को वह देखते होंगे। पुराने ज़माने में रामायण या महाभारत के काल में इतनी छुआछूत कभी नहीं थी। प्राचीन काल में छुआछूत कहीं थी भी नहीं; मुस्लिम काल में मैं मानती हूं छुआछूत में अत्यधिक बृद्धि की गई और मैं समझती हूं कि उस मे लाभ ही हुआ क्यों कि यदि इतनी रोक-टोक न होती, खाने की स्वभाविक पूर्ण स्वतन्त्रता होती तो आज सात करोड़ की जगह दस बारह करोड़ मुसलमान होते किन्तु अब इस प्रकार की छुआछूत की तनिक भी जरूरत नहीं। यह हमारे लिये अति हो रही है और संसार की जातियों की उन्नति की दौड़ में हमको यह सब से पीछे ढकेल रही है। मैं समझती हूं कि विजेता से अपनी रक्षा करने तथा उनसे असहयोग के अर्थ ही मुस्लिम काल में छुआछूत की बृद्धि की गयी थी क्योंकि मुस्लिम काल के पहिले छुआछूत का रूप ऐसा भयानक और नाशकारी देश के किसी कोने में भी नहीं था।

पूज्य मालवीय जी इतने बन्धनों को मानते हुए भी बड़े हो गये यह छुआछूत की महत्ता को नहीं सिद्ध करता और न इस से यही सिद्ध होता है कि छुआछूत और इतने बन्धनों में बँधा हुआ मनुष्य बड़ा हो सकता है या संसार का अधिक भला ही कर सकता है। मालवीय जी

को नियम के अपवाद स्वरूप ही समझना चाहिए, वह नियम नहीं हो सकते। आज हिन्दुओं की हीन दशा का सब से ज़बर्दस्त कारण छुआछूत हो रही है। छूत रूपी राक्षसी हर तरफ से हर तरह से हमारा संहार करती जा रही है और इतनी छुआछूत के रहते हुए हिन्दू जाति के उत्थान का स्वप्न देखना शेखचिल्ली का स्वप्न है। तुम्हीं सोचो, जो जाति इतना अधिक समय खाना बनाने और खाने में लगा देगी वह इस युग में जब कि एक एक मिनट बहुमूल्य हो रहा है दूसरों के मुकाबले में जो प्रत्येक मिनट आगे बढ़ते जा रहे हैं कैसे ठहर सकती है ? इस बात की गांठ बांध लो कि अगर हिन्दुओं की आँखें अब भी नहीं खुलतीं तो यह न कभी स्वराज्य हासिल कर सकेंगे और न स्वतंत्र होंगे।

हम वेदों की दोहाई देती हैं, "वेद भगवान" कहती हैं, केवल मुँह से, हम वैदिक हैं नहीं। वेदों की आशा है कि हम दूर दूर प्रदेशों में जाकर अपना अधिकार जमायें, वहाँ वैदिक सभ्यता का प्रचार करें, वहाँ वेदों का झंडा उड़ायें। वेद के एक मंत्र का अर्थ है कि हम उसी प्रदेश में रहें जहाँ हमारा झंडा फहराता हो और जहाँ हम अपना झंडा कुछ दिनो में फहराने लगें। इन सब बातों का एक मात्र अर्थ था विजय, विजय, चारों ओर विजय, किन्तु दूसरे देशों पर जाकर विजय प्राप्त करना तो दूर रहा हम अपने ही देश को खो बैठी हैं। दूर देशों में जाकर विजय प्राप्त करने का तो अब सवाल ही नहीं है, हमारे राम और कृष्ण के भक्त, जावा, श्याम, सुमात्रा, बोर्नियो, कम्बोडिया मलाया-प्रायद्वीप-समूह में भरे पड़े हैं, किन्तु हम से एक दम कट जाने और दूर हो जाने के कारण हम उनको भूल गयी हैं, और वे हमको भूल गये हैं। प्रधान स्रोत से अलग हो जाने के कारण वे छिन्न भिन्न और छीजते जा रहे हैं और दिन-दिन ईसाई और मुसलमान होते जा रहे हैं। हमारे अंग हमसे कटते जा रहे हैं किन्तु हम उनकी रक्षा

नहीं कर सकतीं, उनकी रक्षा करना तो दूर रहा हम उनके पास पहुंच भी नहीं सकतीं क्योंकि जहाज़ पर पैर रखते ही हमको भ्रम है कि छूत की हम शिकार हो जाँयगी और हमारा धर्म जाता रहेगा। विजय की बात तो दूर रही अपने देश की ग़ुलामी की जंजीरों को काटने के अर्थ, उसकी ग़रीबी को दूर कर उसे समृद्धिशाली बनाने के लिए, कला कौशल सीखने और विद्योपार्जन के लिए भी यूरोप और अमरीका हम नहीं जा सकतीं, क्योंकि हम भूल से समझने लगी हैं कि हमारा धर्म छुई मुई है, वह दूसरों की छाया या सम्पर्क से कुम्हला जाता है, उसमें धारण और रक्षा करने की शक्ति नहीं रही है, क्योंकि हम समझने लगीं हैं कि हमारा धर्म भोजन मात्र में है और वह इतना कमज़ोर है कि दूसरों के छू जाने से वह उड़ जाता है और दूसरे धर्म इतने मजबूत और श्रेष्ठ हैं कि जिनको उनके अनुयायी छू लें, जिन पर वह कलमा पढ़ हाथ रख दें, या पानी छिड़क दें वे उनके हो जांय। हम लोगों को अपने बच्चों को और साथ ही पुरुष समाज को यह बतलाना है कि यह सब भ्रम है। हमारा सनातन आर्य-धर्म सर्वश्रेष्ठ है, उसकी जिस पर छाया पड़ जाय, जो उसकी शरण में आ जाय वह पवित्र हो जायगा, जिस वस्तु को हम गंगा, गौ, गायत्री या गीता का नाम ले छू लेंगी वह कैसी ही अपवित्र क्यों न हो गई हो पवित्र हो जायगी। हमको अपने बच्चों को सिखाना है कि वह किसी देश या समाज में रहें वे हिन्दू ही रहेंगे; शर्त यही है कि वे हिन्दू बने रहें, हिन्दू विचारों और आदर्शों के अनुयायी रहें, हिन्दू सभ्यता को सर्वश्रेष्ठ सभ्यता मानें, तदनुसार आचरण करें तथा भोजन, वसन, रहन, सहन, सब हिन्दू रखें और सबके ऊपर सच्चा हिन्दू-हृदय रखें। तत्व यही है कि आर्य-क्रम से रहने से ही हम सच्चे हिन्दू हैं और सदा रह सकते हैं, हम चाहे अमरीका में रहें, चाहे इंग्लैण्ड में या संसार के किसी भी कोने में।

हमारा धर्म सर्वश्रेष्ठ है, हमारी सभ्यता आदर्श सभ्यता है, इसके कहने की ज़रूरत नहीं है, किन्तु शीला बहिन, हम में साहस नहीं है, आत्मबल नहीं है, हमारे मर्द लोग ठीक बातों को समझते हुए भी आगे क़दम नहीं बढ़ाते, साहस की कमी को वे धर्मभीरुता और धर्म-प्रेम का नाम देते हैं, और तमाशा यह है कि इस "सब का दोष हम गरीबों के माथे मढ़ा जाता है और कलंक का टीका हम गरीबों के माथे लगाया जा रहा है। वह्म करते समय हमारे पुरुषगण कभी कभी कह दिया करते हैं "भैया क्या करें, लाचार हैं, स्त्रियों से लड़कर क्या गृह में असन्तोष की वृद्धि करें ? वे अशिक्षिता हैं, समझती नहीं, मानती ही नहीं, कहती हैं, बाप दादों ने किया, हज़ारों, लाखों वर्षों से यही होता आया, आज तक सब लोग इसी तरह से रह कर बड़े भी हुए, कितनों हो का नाम आज भी इतिहास में पूजा जा रहा है, उन लोगों को संसार की भलाई करने में कठिनाई नहीं हुई अब अंग-रेज़ी पढ़ यह नये बाबू लोग कलयुगी बने हैं और हम लोगों को भी कलयुगी बना हमारा धर्म नष्ट करना चाहते हैं। बहिन, हम में से प्रत्येक स्त्री का यह धर्म है कि इस कलंक से स्त्री जाति को बचाये, सारी हिन्दू जाति समाज और देश के पतन का भार हम ग़रीबों के सर लादा जा रहा है। हमको चाहिये कि हम इस प्रथा को तोड़ें। स्त्रियां पुरातन पूजा की पक्षपातिनी ज़रूर हैं, क्योंएि हम फूँक फूँक कर क़दम रखने वाली हैं, क्योंकि हम प्रकृति के अधिक निकट हैं, क्योंकि प्रकृति हमारी मार्ग प्रदर्शिका और क़ानून है, हमारे जीवन की श्वास है किन्तु इसके साथ ही हम भावुक नहीं हैं, साथ ही पुरुषों की अपेक्षा हम अत्यधिक व्यावहारिक हैं। पुरुष नहीं रास्ते पर आते तो छुआछूत की कुशरूपी कुप्रथा की जड़ में हम लोगों को ही मठा नित्य प्रति सुबह और शाम देना चाहिये और माता के हृदय से रसातल को

जाती हुई हिन्दू जाति की रक्षा के निमित्त उठ खड़ी होना चाहिये। आशा है तुम अपनी सखी सहेलियों को भी इस प्रयत्न में शामिल करोगी।

शरीर के स्वास्थ्य, उसकी सफाई और उसके पोषण के सम्बन्ध में मुझे और कुछ कहना नहीं है अगले पत्रों में अब शरीर के वसन और अंग प्रत्यंग के शृङ्गार की चर्चा करूँगी। देखो बहिन, जो कुछ मैं परिश्रम कर तुमको बता रही हूँ उस पर ध्यान देना और उसके अनुसार आचरण करना, यह न हो कि एक कान से सुनती जाओ और दूसरे कान से सब हवा में मिलता जाय।

तुम्हारी
शान्ति

वसन कैसा हो ?

शान्ति कुटी
शिमला
२६-८-२७

शीला

आज तुमसे शरीर के वसन की चर्चा करनी है। वसन संबन्धी थोड़ा इतिहास तुमको बता देने से वसन की महिमा और उसका उद्देश्य तुम्हारी समझ में सहज ही में आ जायगा।

आदि काल में वसन था ही नहीं, कपड़े का नाम भी लोग नहीं जानते थे। स्त्री पुरुष नग्न रहा करते थे। बाद में कुमारी युवतियाँ युवकों को आकृष्ट करने के लिए अपने अंग को पेड़ की डालियों या पत्तियों से ढकने* लगीं। विवाहित स्त्रियाँ जिनको पति में जीवन का सहारा मिल जाया करता था और जिनको विवाह के अर्थ किसी पुरुष को फांसने की आवश्यकता नहीं होती थी ऐसा नहीं करती थीं। वसन का आदि इतिहास इतना ही है और वसन का सारा महत्व इसी में छिपा पड़ा है। तुम भी यह जानती होगी कि घूंघट और चादर से छिपी हुई स्त्री को लोग अधिक उत्सुकता से देखने की चेष्टा करते हैं चाहे वह कितनी

*Man adores mystery. Hint at something hidden and he will follow you like a shadow with the burning desire to know. But she is a silly woman who tells.

When mystery flies out of the window boredom comes in at the door ."

ही साधारण स्त्री बाद में क्यों न प्रकट हो। वसन इसलिए केवल शरीर को अधिक आकर्षक बनाने और कामुकता की वृद्धि करने के लिए होता है। अब तो वसन से और भी काम लिया जाता है साथ ही अब वसन सभ्यता का चिन्ह* हो गया है। किसी किसी ने तो यहाँ तक कह डाला है कि वसन मनुष्य का ६-१० हिस्सा है। वसन से मनुष्य बहुत कुछ जाना भी जा सकता है। उसके स्वभाव, प्रकृति और मज़ाक का उससे बहुत कुछ पता चल जाता है। वसन अगर पहिनते बने तो शरीर की शोभा दुगनी चौगुनी कर देता है, इसलिए हम स्त्रियों को जो अपने सौन्दर्य की वृद्धि करना चाहती हैं और जो प्रत्येक समय आकर्षक बनी रहना चाहती हैं वसन पर सदा ध्यान रखना चाहिये। वसन का कीमती होना, ज़रा भी ज़रूरी नहीं। चतुर पहिनने वाली साधारण से साधारण वस्त्र को कीमती वस्त्रों से अधिक महत्व की बना देती हैं।

वसन के सम्बन्ध में हमको किसी से कुछ लेना या सीखना भी नहीं है। संसार में हमारा वसन धारण करने का क्रम सर्वश्रेष्ठ है। स्त्रियों के लिए सारी के समान सुन्दर बाना अभी तक संसार में दूसरा कोई नहीं हैं। हमारी साधारण मलमल और

---

*The basic reason for wearing cloth is to keep the body warm. The clothing confines a cushion of air that prevents the escape of heat that radiates from your body. Since dry air conducts heat less effectually than does moist air, the underclothes should be made of a material that will absorb the perspiration. If they are not, the heat generated by the body is radiated and lost."

Dr. Bernarr Macfadden.

शान्तिपुर और आन्ध्र प्रदेश की सुहावने रंगों में रंगी हुई धोतियाँ किसी समाज में भी अपना रङ्ग जमा सकती हैं। हमको केवल रङ्ग का ज्ञान होना चाहिये। कौन सा रंग किस समय में हमको सर्व-श्रेष्ठ बना देता है इसका ज्ञान होना ही हमारे लिये काफ़ी है। आजकल की शिक्षिता स्त्रियों को तो कुछ रङ्ग का ज्ञान हो गया है नहीं तो गुजराती स्त्रियों को छोड़ कर प्रायः देश की समस्त स्त्रिया रग के महत्व से अनभिज्ञ हैं। हम यही नहीं जानतीं कि किस समय कौन सा रंग हमारे शरीर पर शोभा देता है और हमारी श्री की बृद्धि करता है। इसका ज्ञान प्रत्येक स्त्री को अपने अनुभव, या सखियों की सहायता से प्राप्त करना चाहिये।

वस्त्रों के सम्बन्ध में हमको कुछ विशेष कहना नहीं है, हां, इतना जरूर कह देना चाहती हूँ कि वसन साफ सुथरा खूब होना चाहिये, साथ ही ऐसा होना चाहिये कि शरीर अमृतमय वायु और आकाश के चमकते हुए लम्प के प्रकाश से किसी समय भी दूर न हो। किन्तु इसके साथ ही हमको यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि मूर्खतावश स्त्रियों में जो महीन से महीन* कपड़े पहिनने की प्रथा चल गई है वह हानिकर है और सभ्यता के विरुद्ध है। वस्त्र का ढीला होना जिसमें वह एक दम बदन से चिपका न रहे और अङ्ग प्रकट न हो लाभकर है, बदन से चिपकी रहने की एक ही चीज़ हम स्त्रियों के लिए है और वह अङ्गिया, चोली या खंड है जिसे गुजराती, महाराष्ट्र तथा दक्षिणी स्त्रियां पहनती हैं। खेद की बात है कि इधर कुछ दिनों से इस बाने का

---

*इसका कितना लिहाज रखा जाना चाहिये यह ग्रामो में रहने वाली स्त्रियों के एक गायन की इस पंक्ति से प्रकट होता है—

रङ्ग झिनुआ में मोरा अङ्गा दिखाय,
झिलिया लैदे बारे बालम"

रिवाज उठता जा रहा है। मुसलमानों में तो यह कायम है, हिन्दू स्त्रियां, विशेष कर हमारे प्रान्त की, मालूम नहीं ऐसे परम हित-कर वसन को क्यों त्यागे दे रही हैं। मेरी समझ में प्रत्येक स्त्री को जिसे अपने शरीर की शोभा और सौंदर्य का कुछ भी ख्याल है इसका उपयोग* करना चाहिये।

वस्त्रों की चर्चा करते हुए दो आवश्यक बातें और मैं तुमसे कहना चाहती हूँ। पहिली बात यह है कि अगर खद्दर नहीं पहिना जा सकता तो वस्त्र सब स्वदेशी हों। प्रत्येक स्त्री को जो विदेशी वस्त्र पहनती है यह समझना चाहिये कि वह अपने बच्चों की गुलामी की जंजीर को और मज़बूत कर रही है। विदेशी वस्त्रों से देश का धन लुटता चला जा रहा है और हमारी ग़रीबी के साथ ही साथ देश की परतंत्रता दिन-दिन अधिक होती जा रही है। मेरा कहना तो यह है कि अपने पहिनने की बात तो कुछ है ही नहीं स्त्रियों को चाहिये कि अगर पतिदेव विदेशी वस्त्र पहिने हुए उनके पैर भी छूना चाहें तो वे उनसे कह दें कि कृपा कर इन कपड़ों को उतार आइये तब मुझको छुइये। उनको चाहिये कि वे उनसे कह दें कि आप पर मेरा कोई ज़ोर नहीं, आपको मैं मज़बूर नहीं कर सकती किन्तु ईश्वर के नाम पर इन विदेशी वस्त्रों को पहिने हुए मुझको छूकर मेरे शरीर को आप अपवित्र न करें, मैं आपसे यही भिक्षा मांगती हूं।

---

*मेमों ने कार्सेट को छोड़ कर अब Breast supporter धारण करना शुरू कर दिया है। "It improves the figure and it is distasteful to see breasts exposed to a great deal of fatigue and pain. Supporter also guards against caucer, pain, tumors, and unpleasant feeling which women certainly feel when breasts are left loose."

बहिन, देखो तो करोड़ों रुपया इन वस्त्रों के लिए हम बिदेशों को भेज रही हैं। अपने घर में खाने को नहीं और हम विदेशों को मालामाल कर रही हैं। अगर आज हम स्त्रियां यह संकल्प कर लें कि हम विदेशी वस्त्रों को जीवन रहते नहीं धारण करेंगी; हमारे बच्चे विदेशी वस्त्रों को छूएँगे नहीं; हमारे गृह में विदेशी वस्त्र आयेगा नहीं तो हमारे घरवालों, हमारे रिस्तेदारों, हमारे देशवालों की, जो चार चार पैसे के लिए दफ्तरों में ठोकरें खाते फिरते हैं, दशा ही कुछ दूसरी हो जाय। सब से अच्छा तो यह है कि अपने घरवालों को कपड़ा पहिनाने का भार हम स्त्रियां खुद अपने ऊपर ले लें। अगर हम नित्य नियम से घंटा डेढ़ घंटा चर्खा दोपहर में भोजन करने के बाद गप शप करती हुई चला लें तो हम सहज में ही अपने लिए, पति-देव के लिए और बच्चों के लिये कपड़े तैयार कर सकती हैं। जो पैसा कपड़ों में आज खर्च हो रहा है उसी से गृहस्थी के और सौ काम हम निकाल सकती हैं किन्तु यदि हम इतना नहीं कर सकतीं, अपनी काहिली से, तब भी इसकी तो कोई वजह है ही नहीं कि हम विदेशी कपड़ा पहिनें। देश की मिलों में प्राय: सब प्रकार का अच्छा से अच्छा कपड़ा तैयार हो रहा है, हम उनसे अपना सारा काम चला सकती हैं। महीन से महीन, अच्छी से अच्छी, खद्दर की सारियाँ इस समय मद्रास, बम्बई से आ सकती हैं, और महीन न भी हों तो क्या हम स्त्रियों के लिए यह उचित है कि हम अपने बच्चों को यह शिक्षा दें कि अगर उनकी माताएँ सर्वश्रेष्ठ भोजन नहीं बना सकतीं तो वे दूसरों की माताओं से या अन्य बच्चों से भोजन माँग कर खांय इसलिये कि हमारे घर में अच्छा नहीं तैयार होता। शीला बहिन, सोचो, न्याय करो और अपने विवाह की खुशी में हमको यह भेंट दो और संकल्प करो कि चाहे वस्त्र-विहीना रहो किन्तु तुम कभी भी विदेशी वस्त्र नहीं धारण करोगी। मैं तुम से सच कहती हूँ कि

हमारे मर्दों ने एड़ी चोटी का पसीना एक किया, मरे कटे, जेल गये, संसार की यातनाएँ उन लोगों ने सहीं पर अधिक कुछ कर नहीं सके किन्तु अगर आज हमारा स्त्री-समाज एक बार संकल्प कर देश को स्वतंत्र करने का बीड़ा उठा ले, तो घरों के भीतर ही बैठी हुई हम सब कुछ कर सकती हैं, हां, शर्त यही है कि संकल्प स्त्रियों का "कर मिट या मर मिट" का हो। तुम इस बात को पत्थर की लकीर ही समझो कि अगर स्त्री-समाज आज उठ खड़ा हो तो "मुल्क को आज़ाद कर लेना कोई मुश्किल नहीं" और जो मर्द पिछले पचास वर्षों में नहीं कर सके हम उसे कुछ ही समय में करके दिखा दें।

दूसरी बात तुम से पर्दे*के सम्बन्ध में कहनी है। वस्त्र वास्तव में पर्दा ही है और इसलिए वस्त्र ही के साथ पर्दे की चर्चा ठीक है। पर्दा हिन्दुस्थान में नाम मात्र का था। मुसलमान अपने साथ इसे इस देश में लाये। आज भी जिन प्रान्तों में मुसलमानों का आधिपत्य अधिक रहा वहीं पर्दा भी विशेष है। गुजरात, बम्बई, मद्रास, मालाबार, आसाम इन प्रदेशों में पर्दा कहां है? रामायण और महाभारत के काल में पर्दा कैसा था? मुसलमान, स्त्रियों को आत्माविहीन गुड़िया समझते थे, कदाचित इसी लिए पर्दे के रिवाज को उन लोगों ने ऐसा रूप दिया। पर्दा याद रखो स्त्रियों की गुलामी का डंका स्वरूप है। इससे स्त्रियां सुरक्षित रहती हों, या पवित्र रहती हों सो ठीक नहीं है। मुसलमानों में तो बड़ा जबर्दस्त पर्दा है किन्तु हिन्दुओं से अधिक नहीं तो बराबर का ही उनमें व्यभिचार है। दुनियाँ में बहुत सी बातें हैं जिनमें अगर

*"The reason why women were to remain veiled or invisible in the synagogue was in itself a tribute to them, it was feared that the sight of their beauty might retract the male mind from the worship of God".

कुछ खराबी है तो अच्छाई भी कुछ होती है किन्तु पर्दे में वह भी नहीं है। एक भी अच्छी बात पर्दे के सम्बन्ध में नहीं कही जा सकती। एक ओर यह है दूसरी ओर इससे खराबियां और हानियां बहुत हैं। स्त्रियों के स्वास्थ्य के लिए तो यह विष ही है। घर में बड़े बूढ़ों के कारण हर वक्त हाथ भर का घूँघट लटकाये बीबी रानी को सूर्यदेव के दर्शन ही नहीं होते। घर की चहारदिवारियों में क़ैद सूख रही हैं; मुख की कान्ति बिदा मांग रही है और शरीर पीला पड़ता जा रहा है। सब से हानिकर बात यह है कि पर्दे में रहते रहते हम दूसरों की सहायता और रक्षा की आदी हो जाती हैं और कभी अभाग्यवश अगर काम पड़ा तो हम अपनी रक्षा भी नहीं कर सकतीं। अभी ही कुछ दिन हुए मैंने किसी अखबार में पढ़ा था कि कोई अपनी पत्नी को लिवा कर किसी स्टेशन पर उतरा। पत्नी जी हाथ भर का घूँघट लटकाये पीछे पीछे चल पड़ीं। तुमने देखा ही होगा बड़े स्टेशनों पर तीसरे दर्जे के फाटक पर कितनी घमासान रहती है। पति जी भीड़ में इधर उधर हो गये, और बहू रानी ज़मीन देखती हुई, आगे बढ़ती किसी दूसरे के पीछे चली गईं और वह उनको अपने घर ले गया। पर्दे की इस से अधिक प्रशंसा और क्या हो सकती है?

और बहिन, यह तो देखो, पर्दा होता भी है किन से? गैरों से नहीं, अपनों से? क्या उल्टी दुनिया है? जिनसे पर्दा न होना चाहिये, जो अपने हैं और जो हमारे भले बुरे के साथी हो सकते हैं उनसे हम पर्दा करती हैं और जिनसे हमको खतरा हो सकता है, जो गैर हैं उनसे पर्दा हम नहीं करतीं। गंगा नहाने बहुरिया जा रही हैं, मुँह खुला हुआ है, हँसती बोलती, निगाह दौड़ाती चली जा रही हैं, कोई लज्जा, हया, लिहाज़ या पर्दा नहीं किन्तु कहीं कोई आपस वाला दिखाई दिया कि हाथ भर का घूँघट लटक गया।

मैं तो कहती हूँ कि ऐसी दशा में घर वालों से पर्दा करना उनको अपमानित करना है, उनसे कहना है "तुम्हारा विश्वास नहीं या तुम बुरे हो।"

पर्दे के पक्ष में मैं भी हूं किन्तु मेरे पर्दे का अर्थ है, कवि गालिब के शब्दों में बेगानगी; मुंह छिपाना नहीं*। किसी से पर्दा करने का अर्थ यह है कि मैं उसको नहीं जानती, वह मेरे लिये अजनबी है, मैं उससे नहीं बोलती, मैं उसकी ओर तनिक भी मुख़ातिब नहीं होती। बस मेरा उससे पर्दा है और मैं उससे पर्दा करती हूं। पर्दे का अर्थ मुंह छिपाना है, यह समझना मूर्खता और दासता के सिवा कुछ नहीं है।

यह असंभव नहीं कि साधारण घूँघट बड़ों की इज्ज़त के लिए रचा गया हो। बड़ों के सामने नंगा सर न रहे, कपार आधा खुला न हो, उनके सामने सर झुका, नम्रतापूर्वक उठो बैठो, उनके सामने अधिक बोलो नहीं, पुरानी, बिशेष कर, मुग़ल काल की, सभ्यता में यह सब शामिल था। बहू बेटियां ही नहीं लड़के भी इसी तरह से व्यवहार करते थे। टोपी सीधी हो, माथे तक बाल ढके हों, पिता की बातों का केवल आवश्यक हां, ना में जवाब हो, यह एक क्रम सा था। मैं तो ऐसे पिताओं को जानती हूं जो जीवन भर अपने पुत्र से बोले ही नहीं, अपने बड़ों के लिहाज़ से, ऐसे पुत्रों को भी जानती हूं जो जीवन में दस बीस बार अपने पिता से बोले हों, या सिवा हां, ना के और कभी कुछ न बोले हों। लड़कों से जब यह आशा की जाती थी तो फिर बहू से भी ऐसी ही आशा रखना स्वाभाविक ही था किन्तु अब यह सब बदल गया है। पुत्रों का क्रम भी बदल गया है, और अब

---

*"दोस्ती का पर्दा है बेगानगी
मुँह छिपाना हमसे छोड़ा चाहिये"

बहुओं का भी बदल जाना चाहिये। मैं पूछती हूं कि श्वसुर अपने नये पिता या बाबू जी से न बोलना मूर्खता नहीं तो क्या है? सास ससुर से अधिक हमारी भलाई चाहने वाला और कौन हो सकता है। हमारे माता पिता के स्थान की पूर्ति वही तो करते हैं, उनसे अगर हम अपने सुख दुःख की बातें न कहें, उन से न सलाह लें तो फिर किस से लेंगी? वास्तव में घूंघट वस्त्र के समान ही मुख की आकर्षण शक्ति की बृद्धि करने के लिए रचा गया था। यह घूंघट मुँह को ढक नहीं लेता साथ ही यह फुट दो फुट का होता भी नहीं, यह इंच डेढ़ इंच ही का होता है। यह मुख के सौन्दर्य को हज़ार गुना अधिक कर देता है और इसके मर्म को जो घूंघट रखना जानती हैं वे ही जानती हैं। शीला, इन्हीं कारणों से मेरा निवेदन तुमसे है कि पर्दे की प्रथा हम सब स्त्रियों को मिल कर तोड़ने का प्रयत्न करना चाहिये। अपना राज्य नहीं, अधिकार अपने हाथ में नहीं, नहीं तो टर्की की भाँति एक कानून से पर्दा तोड़ दिया जाता। समस्त टर्की में, इस्लाम और मुसलमानों के गढ़ में, आज दिन तुम को एक स्त्री भी बुर्के या पर्दे में नहीं दिखाई देगी। तीन वर्ष के ही स्वराज्य में स्त्रियों को उनकी जन्म जात स्वतंत्रता मिल गई। हम यहाँ कानून नहीं बना सकतीं, हम पर दूसरे राज करते हैं, हमारा अपने ही देश पर राज नहीं किन्तु स्त्री-समाज अपने दृढ़ संकल्प से ही पर्दे की हानिकर प्रथा को देश-निकाला दे सकता है।

वसन की चर्चा को समाप्त करती हुई मैं एक बात विशेष रूप से कह देना चाहती हूं और वह यह है कि वसन सदा साफ़ सुथरा और सौम्य होना चाहिये, तड़क भड़क और चमकवाला नहीं। स्त्री को अपने को ऊपर उठाने के लिए सदा इस बात को ध्यान में रखना चाहिये कि वसन की सहायता से पुरुषों को आकृष्ट करने या उनकी वासनाओं को जागृत करने की चेष्टा हीन और स्त्रियों के

मान और प्रतिष्ठा को नीचे गिराने वाली है। एक बात और है, वसन में एक बड़ी विचित्रता और विशेषता है तुम जितनी उसकी इज्ज़त करो उतनी ही इज्ज़त दूसरों से वह तुम्हारी कराता है "कपड़ा कहे तू मुझे कर तह, मैं तुझे करूँ शह" इसलिए सदा वसन को साफ़ सुथरा रखना चाहिये साथ ही उस को उठाना धरना, उसकी तह लगाना, उसको आलमारी या बक्स में रखना बड़ी इज्ज़त और सावधानी से ही होना चाहिये।

अन्त में यही कह कर इस पत्र को समाप्त करती हूं कि मैं आशा करती हूं कि तुम अपनी अन्य सखी सहेलियों को भी पर्दे की ख़राबियों को बतलाओगी और निकट भविष्य में ही स्त्री-समाज इस बर्बर प्रथा का सदा के लिए अन्त कर देगा।

तुम्हारी
शान्ति

श्रृङ्गार

शान्ति कुटी
शिमला
२७-८-२७

नायकस्य च नाविमुक्त भूपणम विजने सन्दर्शने तिष्ठेन् ।*
—वात्स्यायन

"कमल अमल शोभा देत शैवाल में भी
रुचिर रुचि शशी की होत है मैल से भी
यह मुनि-जन कन्या बलकलों से सुहाई
बिमल छबिमयी को क्या नहीं कान्ति दाई"
(स्व० पं० श्रीकृष्ण जोशी)

प्यारी शीला बहिन,

आज श्रृङ्गार के सम्बन्ध में तुमको कुछ लिखना चाहती हूं किन्तु सुबह से ही सोच रही हूँ और बहिन कुछ समझ में नहीं आता कि क्या लिखूँ। सच बात तो यह है कि श्रृङ्गार करना मैं खुद ही नहीं जानती। मैंने तो नियम यह रखा है कि जो वस्त्र, जो गहने तुम्हारे जीजा जी को पसन्द हैं उन्हीं को हेर फेर कर सदा धारण करती रहती हूँ; सब एक साथ ही नहीं कभी एक, दो, कभी तीन।

"बहुभूषणं विविध कुसुमानुलेपनं विविधाङ्ग-राग समुज्वलं वास इत्यभिगामिको वेष:। प्रतनुश्लक्ष्णाल्पदुकूलता परिमितमा-

---

*नायक जब अकेला बैठा हो तो बिना श्रृङ्गार के इसके सामने कभी न दिखाई दे।

भरणं सुगन्धिता नात्युल्वण मनुलेपनम्—तथा शुक्लान्यन्यानि पुष्पाणीति वैहारिकोवेषः❀

—वात्स्यायन

मेरा अपना ख्याल यह भी है कि स्त्री का सर्वोत्तम श्रृङ्गार उसका सतीत्व, उसकी पवित्रता, सौम्यता, उसके शरीर का सुन्दर स्वास्थ्य, उसका सुन्दर हृदय, विद्या, उसका मिष्टाभाषण और पति का प्रेम है।

किन्तु यह सब होते हुये भी मुझ से यह छिपा नहीं कि शरीर का श्रृगांर अर्थात् उसे सर्वोत्तम रूप में आकर्षक और लुभावना बनाना मनुष्य की पशुता को वश में करने के लिए नितान्त आवश्यक है। मेरा कहना तो यह है कि जो स्त्री यह देखे कि उसका पति उससे कुछ कम प्रेम करने लगा है या कुछ फटा फटा सा रहता है उसे अपने श्रृङ्गार की ओर भी फिक्र करनी चाहिये। हमको यह भूलना न चाहिये कि "गोबर की झाँझी भी पहिरे ओढ़े अच्छी लगती है"। इसके साथ जिस स्त्री का पति उसके प्रेम-पाश में बँधा हो उसे भी श्रृङ्गार की आवश्यकता उतनी ही है इसलिये कि पतिदेव उसमें अधिकाधिक अनुरक्त होते जाँय किन्तु इन सब के साथ हमको यह ध्यान में रखना चाहिये कि "आँख एको नहीं कजरोटी दस ठाई" की कहावत को हम चरितार्थ नहीं कर रही हैं। श्रृगांर सब की स्थिति और आवश्यकता के अनुसार भिन्न हुआ करता है संभव है जो श्रृगांर तुम्हारे रूप को अत्यन्त सुन्दर बना दे वही हमारे लिए कुछ न कर सके या हमको

❀साधारण रूप से अनेक गहनों को धारण करे, विविध अङ्गराग लगाये, कुसुमों को धारण करे, समुज्ज्वल वस्त्र, धारण करे, बिहार वेश में सफ़ेद वस्त्र, कम गहने, थोड़े ही सफ़ेद पुष्प धारण करे और थोड़ा ही अङ्गराग, इत्र वगैरह लगाये।

और भी भद्दा बना दे। शृंगार के लिए इसलिए अधिक न कह कर मैं इतना ही कहना चाहती हूँ कि सर्वश्रेष्ठ शृंगार सादगी और नफ़ासत में है। हम लोगों को सदा ध्यान में रखना चाहिये कि हम "फूहड़ करे सिंगार, माँग ईंटों से फोड़े" की कहावत को चरितार्थ नहीं करतीं। बोझ से लद जाना या हज़ार पाँच सौ की सारी लाद लेना शृंगार नहीं हो सकता, इसके विपरीत एक भला सा लाल टीका ज़मीन आसमान का अन्तर कर देता है। मेरी समझ में शृंगार के लिए दो चार अच्छे जेवर काफी हो सकते हैं इसके साथ ही साथ गहने भी अपने अपने समय पर ही अच्छे होते हैं। उदाहरणार्थ सोने को तौक, अच्छी बनी हुई दिन में गले के सौन्दर्य को दुगना चोगुना कर देती है किन्तु गर्मी की रातों में चाँदनी जब खिली हुई हो चाँदी की बड़ी नफ़ासत की बनी हुई तौक जिसमें सफ़ेद पुखराज उतार चढ़ाव में एक कोने से दूसरे कोने तक जड़े हों ग़ज़ब करती है, किन्तु बीबी रानी सच पूछो तो एक हीरे की कील या कानों में मोती के बुन्दे, सुन्दर मोतियों की गले में लड़ी या ऐसी ही चीजें जो आँखों और दिल को ठंढक पहुंचाती हैं वह सोने चाँदी को कहाँ नसीब, किन्तु बहिन यह सब समाई की बातें हैं, हाँ जेवर तो बनवाते ही रहना चाहिये, क्योंकि रुपयों को सुरक्षित रखने और बचाने का यह अच्छा उपाय है। जेवरों के सम्बन्ध में यह भी कह देना चाहती हूँ कि उनको अपने शरीर की आवश्यकता और उनकी अनुकूलता देखकर बनवाना चाहिये पुरानी लीक पीटना, हमेशा ऐसा ही बनता आया है या रिवाज ऐसा है और अन्य स्त्रियां भी ऐसा ही पहिनती हैं, काफी नहीं है। ज़रा अपने यहाँ के अनन्त तथा टीक को देखो और जो आज कल मेमें बाहों में पहनती हैं और जिनको (Slave bangle) स्लेव बैंगिल कहते हैं उनको देखो, बुद्धि से क्या हो सकता है यह तुमको तुरन्त प्रकट हो जायगा।

यह सब तो शरीर की बाहरी और साधारण सजावट हुई अब अंगो के सम्बन्ध में भी कुछ कह देना चाहती हूं ।

सब से पहिले मैं बालों को लेती हूँ। किताबों में पढ़ा है, यदि मेरी स्मरण-शक्ति मुझको धोखा नहीं दे रही है, कि स्त्रियों के बालों में पुरुषों का काम निवास करता है, और स्त्रियों का काम पुरुषों की आवाज़ में रहता है। यह सब जो कुछ हो किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि स्त्रियों के बालों में सौन्दर्य बहुत है। मेमें तो आजकल बाल कटाने लगी हैं, उनमें तो 'शिलिङ्ग', बिङ्गिल "बाब" आदि का फैशन चल पड़ा है, बाल अब वह एक तरह से पुरुषों के समान काक-पक्ष सा रखने लगी हैं किन्तु मुझको यह सब तनिक भी नहीं सुहाता।

बालों को प्रत्येक स्त्री तनिक साधारण फिक्र से अच्छा से अच्छा और सुन्दर से सुन्दर बना सकती है। 'सच पूछा जाय तो प्रत्येक बाला के बालों में सुन्दर सूर्य की रश्मियाँ कैद रहती हैं और स्त्री में अगर बुद्धि हो तो उनके प्रकाश से पुरुष की आंखों में वह चकाचौंध पैदा कर सकती है। यह सच है कि हम सभी घुंघराले लच्छेदार बाल नहीं पा सकतीं किन्तु इसका अर्थ यह नही है कि तनिक चेष्टा करने से हममें से प्रत्येक अपने बालों को सुन्दर से सुन्दर रूप नहीं दे सकती।"

बालों के लिये यह भी आवश्यक है कि प्रत्येक दस दिन या बारह दिन पर गरम पानी और साबुन या सब से अच्छा तो बेसन है, उससे वह अच्छी तरह से धो और साफ कर दिये जांय। हमको यह कभी न भूलना चाहिये कि वास्तव में हमको बालों को नहीं वरन् बालों की जड़ों और सर की खाल को साफ करना चाहिये। बालों को चमकदार और सुन्दर बनाने के लिए बहुत से पोमेड्स लोशन्स और शैम्पूज़ आजकल मिलते हैं किन्तु मेरी राय में उन सब से हानि अधिक और लाभ कम होता है।

बालों को सदा सुन्दर और चमकदार बनाये रखने का सबसे सरल और सच्चा उपाय उनको धोना और उनकी जड़ों को खूब साफ रखना है। हाँ, बालों से जो खिदमत लेना चाहती हो उसे नित्य सुबह स्नान के बाद शीशे के सामने खड़ी होकर कंघे ब्रुश से कम से कम बालों की दस मिनट तक खिदमत जरूर करनी चाहिये। बालों में खुशबू मिला हुआ शुद्ध आँवले का तेल, जैतून का तेल (Olive oil) या कोई सुगन्ध मिला कर पवित्र बू-रहित रेड़ी का तेल देना बहुत हितकर होता है किन्तु यह याद रहे कि तेल को बालों में चुपड़ने से कोई लाभ नहीं होता, तेल बालों की जड़ों और सर की खाल में सोखाना चाहिये। रात्रि में सोने के पहले फिर दस मिनट बालों की खिदमत करनी चाहिये। न बहुत मुलायम न बहुत कड़े ब्रश से उनको ब्रश करने के बाद ढीली एक या दो चोटी बांध देनी चाहिये, और अगर बालों को घुंघराले बनाने की इच्छा हो तो बालों को "कलिङ्ग पेपर्स" में ठीक से रख कर सो जाना चाहिये।

मुख और चमड़े की रंगत अच्छी रखने के लिये बहुत अच्छे साबुन का व्यवहार करना चाहिये। ठंडा पानी रंगत के लिये सब से अच्छी वस्तु है। सोते समय मुख पर मठा, छाछ मुलायमीयत से मल देना भी अच्छा लाभ करता है। गले और गर्दन को हंस सा सफेद रखने के लिए ठंडे पानी में दस पाँच बूँद कागजी नीबू का रस मिला मुलायम तौलिये से उनको रगड़ देना काफी होता है।

*दांतों की सदा विशेष चिन्ता रखनी चाहिये। दांतों के साफ सुथरे और अच्छे होने पर शरीर का स्वास्थ्य बहुत कुछ निर्भर है। अमरीका के अनेक डाक्टर तो दुनिया भर की बीमा-

---

*"आँखे अञ्जन, दाँते मंजन नित दे नित दे नित दे
काने लकड़ी, नाके उङ्गली, मत दे मत दे मत दे"

रियों की जड़ दांतों को ही समझने लगे हैं। दाँत गन्दे रखने से बीमारी जल्दी पास आती है। यह सब न भी हो तो सुन्दर दांत प्रकृति की देन है। दांतों का मोतियों सा होना अनारदानों सा खिला होना शरीर की शोभा की बृद्धि करता है। मैं दांतों में मिस्सी लगाना या उनको काला करना अच्छा नहीं समझती। दंत मञ्जनों और "टूथ पेस्टों" की भी मैं कायल नहीं। तुमने देखा है कि अब तक मैंने जो बातें लिखो हैं, अधिक से अधिक उनका उद्देश्य प्रकृति ही से सहायता प्राप्त करना और प्रकृति के ही निकट रहना है। मेरी राय में इसीलिए दांतों को साफ रखने के लिए सब से अच्छी चीज़ हमारी जली लकड़ी का कोयला है। इसको पीस कर या पिसवा कर हम लोगों को एक शीशी में रख लेना चाहिये और रोज सुबह और शाम को भी उसकी सहायता से एक अच्छे कड़े टुथ ब्रश से, अच्छा तो यह है कि एक नीम के दतुवन से, जो अच्छी तरह दांतों से कुचली गई हो, दाँतों को साफ कर देना चाहिये। एक बात का ख्याल जरूर रखना चाहिये और वह यह है कि जब हम दांतों से चौबीस घण्टे काम लेती हैं तो उनकी सफ़ाई में हमको कम से कम पाँच सात मिनट तो जरूर ही लगाना चाहिये। एक दो मिनट में दांतों पर ब्रश या दतुवन फेर कर अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेना ठीक नहीं है। जब कोई चीज खाई जाय उसके बाद दांतों को पानी से ही अच्छी तरह साफ भी कर देना चाहिये। सोने के पहिले अगर दाँतों को पानी से ही साफ कर सोया जाय तो और भी अच्छा होता है। होठों को लाल, बिम्बाधर रूप देने के लिए आजकल मेमें "रूज" लगाती हैं, हम लोग यही फल पानों को खाकर प्राप्त कर सकती हैं किन्तु शर्त यह है कि पान दिन भर में सब मिला कर पन्द्रह बीस से अधिक न खाये जायँ और वह भी खाना खाने के बाद ही। पान अधिक

खाने से दातों की रंगत खराब हो जाती है, और उनकी मोतियों की चमक जाती रहती है।

जब यही सब तुमको लिखने बैठी हूँ तो मैं यहाँ पर हाथों का भी जिक्र कर देना चाहती हूँ। हाथों की तनिक फिक्र रखना और कुछ मिनट इनकी सेवा में खर्च करना लाभकर सिद्ध होगा। एक तो हाथ हर समय पुरुषों के सामने आता रहता है दूसरे सुन्दर हाथ का एक खास असर पुरुष पर हुआ करता है। हम सब के हाथ सुन्दर, सुडौल, कमल की रंगत वाली उङ्गलियों वाले नहीं हो सकते किन्तु फिर भी हम प्रकृति की देन को सुन्दर और सुरक्षित रख सकती हैं। हाथों की रंगत बनाये रखने के लिए उनको गर्म पानी से साफ़ करने के बाद, ठंडे पानी से धो देना चाहिये और साथ ही दो चार बूँद नींबू का रस ऊपर से रगड़ लेना चाहिये। हाथों की समुचित फिक्र करने में हम लोगों को उङ्गलियों के नाखूनों पर भी विशेष ध्यान रखना चाहिये। नाखूनों का उद्देश्य उङ्गलियों की मुलायम कोरों की रक्षा करना है। हम लोगों को इसलिए सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि नाखून न इतने छोटे हों कि वे अपने उद्देश्य की पूर्ति न कर सकें, साथ ही वे इतने बढ़े हुए भी न हों कि दुनिया भर का मैल उनके नीचे जमा हो जाय। पाँचवे दसवें दिन साबुन मिले गर्म पानी में कुछ मिन्टों तक उङ्गलियों को डुबो देना और उङ्गलियों के सिरों को कटोरी की तले में दबा देना अच्छा होता है। नाखूनों का काटना भी एक कला है और उसका गुर यह है कि नाखून उङ्गलियों की बनावट के अनुसार ही काटे जाँय। पश्चिमीय प्रदेशों में नाखूनों को चमकदार बनाने के लिए उन पर पालिश भी की जाती है। युवा स्त्रियों को, जिनका स्वास्थ्य ठीक है, मेरी समझ में इसकी जरूरत नहीं। प्रकृति स्वयम उनके नखों को गुलाबी बनाये रहती है किन्तु अगर

तुम्हारी इच्छा ही हो तो तुम हाथों को साफ़ करने के बाद साम्हर के एक टुकड़े से नाखूनों को मुलायमीयत से एक दो मिनट रगड़ दे सकती हो।

हाथ का साफ सुथरा और चमकदार होना आजकल सभ्यता का चिन्ह समझा जाता है और अक्सर स्त्रियाँ हाथों को मुलायम और चमकदार रखने के लिए सोते समय हाथों में वेसलीन या मठा भी मल दिया करती हैं।

आँखों में सप्ताह में एक दो बार सोते समय काजल या सुरमा लगा लेना और सुबह उठने पर उसको धो डालना ज़रूरी है। अंगों में हमारी आँखें × विशेष कर स्त्रियों के लिए सब से बहुमूल्य और नाज़ुक चीज़ हैं। इनसे ही सब से अधिक हम काम भी लेती हैं। इनके अच्छी और ख़राब रहने से हमारे जीवन का घना संबन्ध है, इसलिए इनकी फिक्र सब से अधिक आवश्यक है। हम स्त्रियों के जीवन की सफलता का बहुत कुछ भार हमारी आँखों पर ही है यह भी हमको भूलना न चाहिये। लखनऊ के एक होनहार आधुनिक शायर के शब्दों में—

"अख्तर❀ में है, न मेहर† में है, नय क़मर‡ में है,
कहते हैं जिसको हुस्न फ़रेबे नज़र में है"।

×जो उठे तो एक तमाशा है, न उठे तो एक कहानी है।
जो उठे अगर वह पूरी तो है नीमचा सरासर।
जो खिचे बमद्दे अबरु तो है तेग के बराबर॥
जो हो सीधी वोह तो पैंका, जो हो कज ज़रा तो खंजर।
है छुरी जो लोट जाये, कहीं एक बार चल कर॥
"नियाज"

❀सितारे †सूर्य ‡चाँद।

एक प्राचीन कवि का कहना है:—

"कहति, नटति, (१) रीझति खीजति, (२) मिलति, खिलति लजिजात। भरे भौन में करत हैं, नैनन ही सों बात ॥"

तुम इससे समझ सकती हो कि आँखें कितनी बहुमूल्य हैं।

बीवी रानी, शरीर को और भी मनमोहक और आकर्षक बनाने के लिए हम स्त्रियों के पास और भी अस्त्र हैं और वह हैं हाव, भाव और अदा। किन्तु इन चीज़ों के लिए किसी के सीख की जरूरत नहीं पड़ती। प्रत्येक स्त्री तनिक साधारण बुद्धि, शीशे की सहायता तथा सखी सहेलियों या पतिदेव के बताने से अपनी सुन्दर से सुन्दर अदाओं को जान लेती है और सदा उनके प्रयोग से लाभ उठा सकती है।

मेरी समझ में एक साधारण से साधारण स्त्री—अगर मेरी कही हुई बातों पर सदा ध्यान रखे और उनके अनुसार आचरण करे—सुन्दर से सुन्दर रूप प्राप्त कर सकती है और सौन्दर्य की एक सुन्दर कली अपने को बना सकती है। किन्तु बीबी रानी, यह सब जड़-पुरुष या पशु-पुरुष को ही वश में करने की बातें हैं और पशु-पुरुष पर विजय कोई ऐसी विजय नहीं जिसका कोई भी स्त्री गर्व कर सके, साथ ही यह विजय चिरस्थायी भी नहीं। मनुष्य पर सच्ची विजय उसके मस्तिष्क, उसके चेतन, उसके हृदय और उसकी आत्मा पर विजय है और वह शरीर को उतना चमत्कारपूर्ण बनाने से नहीं जितना अपने हृदय और मस्तिष्क को सुन्दर और ज्ञानमय बनाने से प्राप्त हो सकती है* । मुख और शरीर की

---

*"नेह भरो दीपक तऊ गुन बिन जोति न होत"

दीये में तेल भरा हो, पर बत्ती न हो तो रोशनी नहीं होती ठीक इसी तरह से हजार प्रेम हो, सौन्दर्य हो किन्तु ज्ञान न हो तो पति के हृदय पर अधिकार नहीं मिल सकता।

(१) नाही करती है (२) खीजती या नाराज होती है।

शोभा, जैसा मैं पहले कभी लिख भी चुकी हूँ, हृदय और मस्तिष्क के चमत्कार के बिना फ़ीकी है और संसार में अपना सिक्का नहीं जमा सकती। तुम यह सदा याद रखना कि संसार में वही स्त्री राज कर सकती है जो शरीर और मुख के सौन्दर्य के साथ ही साथ सुन्दर हृदय, सुन्दर आत्मा और सुन्दर मस्तिष्क भी रखती हो।

एक बात शृङ्गार के सम्बन्ध में और कह देना चाहती हूं और वह यह कि शृङ्गार सदा अकेले में करना चाहिए, पति के सामने भूल कर नहीं।

अपने वादे के अनुसार अगले पत्र में मैं अब पशु नहीं जीव-मनुष्य और मनुष्य के मस्तिष्क पर विजय प्राप्त करने के सम्बन्ध में बातें करती किन्तु जब स्वास्थ्य और शरीर को सुन्दर बनाए रखने के सम्बन्ध में इतना लिखा है तो हम स्त्रियों के शरीर के स्वास्थ्य और जीवन से जिसका घना सम्बन्ध है, उसकी कुछ चर्चा करने के बाद ही मस्तिष्क के विजय की चिन्ता में मैं लीन हूंगी; अच्छा अब, नमस्कार।

तुम्हारी
शान्ति

रजोधर्म

शान्तिकुटी
शिमला
२८-८-२७

शीला,

आज मैं तुमको रजोधर्म के सम्बन्ध में कुछ लिखूँगी। प्रत्येक स्त्री का इससे जीवन में प्राय: ग्यारह बारह वर्ष की अवस्था से लेकर पैंतालीस पचास वर्ष की अवस्था तक साथ रहता है किन्तु यह आश्चर्य की बात है कि हम में से सौ में निन्यानवे इसके सम्बन्ध में कुछ नहीं जानतीं या अगर कुछ जानती भी हैं तो गलत सलत या नाम मात्र को। सच पूछो तो शरीर के स्वास्थ्य और उसके सौन्दर्य की चर्चा अधूरी होती अगर मैं रजोधर्म, या मासिकधर्म की चर्चा तुम से न करती। रजोधर्म और हमारे स्वास्थ्य से घना सम्बन्ध है, और रजोधर्म के, ठीक ठीक, घड़ी की सुई की चाल के साथ सदा ठीक समय से होने पर ही हमारा स्वास्थ्य और हमारा सौन्दर्य अधिकतर निर्भर है। प्रत्येक स्त्री को इसलिए इसकी फिक्र रखनी चाहिये और इसके सम्बन्ध में उचित जानकारी रखनी चाहिए।

रजोधर्म का देश के जलवायु, गर्मी सर्दी और लड़की के उठान से घना सम्बन्ध होता है। गर्म मुल्कों में लड़कियाँ जल्दी और ठण्डे मुल्कों में अधिक दिनों में रजस्वला होती हैं। जिन लड़कियों का उठान अच्छा होता है, हृष्ट-पुष्ट होती हैं और जिनमें स्त्रीत्व जोरों का या प्रौढ़ होता है वह अपनी अन्य बहिनों की अपेक्षा जल्दी रजस्वला होने लगती हैं। नियम यही है किन्तु

कुछ बालिकाएं खराब सोहबत में उठने बैठने और हरदम पति सम्बन्धी बातों की चर्चा और विचारों में लीन रहने से समय से पहिले भी रजस्वला हो जाया करती हैं। जैसा कि मैं ऊपर कह चुकी हूं स्त्री के उठान के अनुसार यह ग्यारह बारह वर्ष की अवस्था से शुरू होकर पैंतालीस पचास वर्ष तक जारी रहता है साथ ही जब यह बन्द होता है तब स्त्री को प्रायः कष्ट होता है और उसके जीवन में अनेक परिवर्तन होते हैं।

रजोधर्म प्रकृति का डंका है। इसके द्वारा प्रकृति इस बात की घोषणा करती है कि बाला ने पूर्ण स्त्रीत्व की चौखट पर कदम रखा है और उसमें बच्चा पैदा करने की शक्ति का अंकुर उत्पन्न हो गया है। अज्ञान से कितने ही लोग यह समझ कर कि बाला में पूर्ण स्त्रीत्व का विकास हुआ है, यह भी समझने लगे कि रजस्वला होने से स्त्री पति के सहवास और सन्तान के धारण करने के भी योग्य हो जाती है। इसी अज्ञान के कारण हम लोगों में मुस्लिम राज्य-काल में यह धर्म समझा जाने लगा कि ऋतुमती होने के पहिले ही कन्या का विवाह हो जाय। कारण यह था कि तनिक सुन्दरी होने से कन्या को देखते ही आततार्इ उठा ले जाते थे। उस समय के पंडितों ने इसलिए "अष्टवर्षा भवेत गौरी..." का नियम बना दिया। आठ ही वर्ष की कन्या का विवाह पुण्य समझा जाने लगा, क्योंकि विवाह होते ही कन्या पर्दे में हो जाती, उसका बाहर निकलना, आना जाना बन्द हो जाता और आततार्इयों का भय जाता रहता। अष्टवर्षा और समय की स्थिति के विचार की प्रधानता यहाँ तक बढ़ी कि कहा जाने लगी कि यदि कन्या विवाह होने के पहिले माता पिता के गृह में ही रजस्वला हो जाय तो माता पिता नरक जाते हैं। इन बातों के कहने वालों का मूर्खता वश ख्याल यह था कि अगर कन्या रजस्वला होते समय पति के गृह में होती तो गर्भवती हो जाती। स्त्री और कुछ पुरुष

समाज के लिए हमारे इन पंडितों और कुछ प्राचीन ऋषियों का यह ख्याल वर्तमान स्थिति में जहर साबित हुआ है और आज की हमारी कमजोरी, दीनता, अयोग्यता और अधः पतन का यही सबसे प्रधान कारण है। यह प्राचीन प्रथा और कुछ ऋषियों के मत के भी विरुद्ध है यह कहने की मैं जरूरत नहीं समझती। गोभिल और आश्वलायन सूत्रों के उन श्लोकों से जिनका उल्लेख मैंने सुहागरात सम्बन्धी पत्र में किया है तुमको यह स्पष्ट होना चाहिये कि रजस्वला होते ही गर्भाधान की विधि है ही नहीं, सत्य तो यह है कि रजोदर्शन के बाद भी कन्या अत्यन्त बाला ही होती है। विवाह के बाद कहा गया है कि पति पत्नी साथ उठें बैठें, एक ही जगह में भूमि पर सोयें किन्तु एक वर्ष तक रहें पूर्ण ब्रह्मचर्य से। अगर कुछ ऋषियों के उपर्युक्त वचन न भी होते तो भी सुश्रुत और वागभट्ट के वचन ही इस सम्बन्ध में अधिक मान्य समझे जाने चाहियें। सुश्रुत का वचन हैः—

उनषोडशवर्षायां अप्राप्तः पंचविंशतिम्।
यदि आधत्ते पुमान् गर्भ, कुक्षिस्थः सः विपद्यते॥
जातो वा न चिरञ्जीवेत् जीवेद् वा दुर्बलेन्द्रियः।
तस्मात अत्यन्त बालायां गर्भाधानं न कारयेत॥

(सुश्रुत)

अर्थात् पचीस वर्ष की अवस्था के पहिले पुरुष गर्भाधान न करे और न सोलह वर्ष की अवस्था से कम की बाला गर्भाधान स्वीकार करे नहीं तो गर्भ पूर्णकाल तक गर्भ में रह कर पैदा नहीं होगा, यदि पैदा होगा तो बहुत दिन जियेगा नहीं और यदि जियेगा भी तो महा कमजोर जीवन भर रहेगा।

वागभट्ट भी इसी मत का समर्थन करते हुए कहते हैंः—

*"पूर्ण षोडश वर्षा स्त्री, पूर्ण विंशेन संगता
वीर्यवन्तं सुतं सूते ततोन्यूनऽब्दतः
रोग्यल्पायुरधन्यो वा गर्भे भवति वा न वा"

मैं उन लोगों से सहमत नहीं जो इस सम्बन्ध में सुश्रुत और वागभट्ट की अपेक्षा, पाराशर याज्ञवल्क और सांख्यायन के मत को अधिक आदरणीय समझते हैं। हमारे विशेषज्ञ तो सोलह वर्ष की अवस्था से भी सन्तुष्ट हो जाते हैं किन्तु यूरोपीय विशेषज्ञों का मत है कि एक बाला को इक्कीस वर्ष की अवस्था हो जाने पर ही बच्चा पैदा होना चाहिये क्योंकि इक्कीस वर्ष तक स्त्री पूर्ण अभिवृद्धि प्राप्त नहीं कर चुकी होती है।

मेरी राय में इसलिए नियम हम लोगों में यह तो जरूर होना चाहिये कि जो माता पिता अपनी कन्या का विवाह ऋतुमती होने के पहिले कर दें या जो माता पिता सोलह वर्ष की अवस्था होने के पहिले किसी कुमारी का पति से संसर्ग होने दें उनको महापातक लगना चाहिये, यही नहीं कानून से उनको दंड भी कुछ दिया जाना चाहिये।

अगर तेरह, चौदह पन्द्रह, वर्ष की अवस्था में हम लोगों का विवाह होने लगे, अगर उसके बाद ऋषियों के मत के अनुसार और अक्ल की बात मान कर पतिगण वर्ष भर ब्रह्मचर्य से रह कर, पत्नियों का परिचय प्राप्त किया करें और पत्नी के हृदय का प्रेम प्राप्त कर सोलह वर्ष की अवस्था में संसर्ग के लिए लालायित हों, और अनन्तर पांच वर्ष तक माता पिता न बन कर पहिला बच्चा पत्नी की इक्कीस वर्ष की अवस्था में पैदा करें तो कुछ ही

---

*१६ वर्ष की स्त्री २० वर्ष के पति के संसर्ग से हृष्ट पुष्ट सन्तान पैदा करती है इससे कम अवस्था के पति पत्नी हों तो बच्चा रोगी तथा अल्पायु होगा। यह भी हो सकता है कि गर्भ रहे या न भी रहे।

दिनों में हमारी, उनकी, हमारे बच्चों की, हमारे समाज और देश की दशा ही दूसरी हो जाय❀। बालिकाएँ सोलहवर्ष की अवस्था तक कुछ तो पढ़ ही लेंगी, साथ ही ब्रह्मचर्य से हमारा समाज शक्तिशाली होगा, हमारी सन्तानें हृष्ट-पुष्ट, सजीव और दीर्घजीवी होंगी और स्वयम् बालिका-माताओं पर बालकों और बालिकाओं के पालन का भार नहीं होगा।

इस सम्बन्ध की बहस को समाप्त कर अब अपने प्रस्तुत विषय पर आ जाती हूं और रजोधर्म क्या है, उसका उद्देश्य क्या है, उस दशा में हमको किन नियमों का पालन करना चाहिये इसी के सम्बन्ध में तुमको कुछ बतला देना चाहती हूं।

तुमने देखा होगा कि हम लोगों में प्रथम रज दर्शन को छोटी चौक के नाम से पुकारा जाता है। देश में कहीं कहीं पुनर्विवाह, पुष्पोत्सव, फल शोभन या फूल चौक भी इसका नाम है। इस समय खुशियां मनाई जाती हैं, गाना बजाना होता है, बिरादरी की औरतें और सखी सहेलियां निमंत्रित की जाती हैं क्योंकि विशेष प्रतिबन्ध न रहने से प्रथम रजो-स्नान के बाद ही गर्भाधान की बिधि आवश्यक समझी जाती है। पति पत्नी गर्भाधान संस्कार के लिए तैयार हो जायँ इसीलिए फूल चौक आदि की यह प्रथा प्रचलित है। तुम यह भी जानती हो कि बच्चा पैदा होने के कुछ दिनों पहिले आठवें मास में एक बड़ी चौक के नाम की रस्म होती है। छोटी चौक और बड़ी चौक के नाम से ही विशेष कर, जब कि बड़ी चौक की रस्म बच्चा पैदा होने के कुछ

❀इक्कीस वर्ष से पहिले ही माता हो जाने से तथा प्रत्येक वर्ष या हर दूसरे तीसरे वर्ष बच्चा पैदा करने से, स्त्री की बाढ़ मारी जाती है, और अपने पृथक जीवन के उद्देश्य की सिद्धि की उसमें शक्ति ही शेष नहीं रह जाती।

ही दिनों पहिले होती है, तुम समझ सकती हो, कि छोटी चौक या रजोधर्म और बच्चे के पैदा कर सकने में कोई सम्बन्ध ज़रूर है।

किन्तु आश्चर्य की बात यह है कि एक ओर तो इस तरह खुशियाँ मनाई जाती हैं दूसरी ओर रजोधर्म घृणा की दृष्टि से देखा जाता है, रजस्वला स्त्री एक अछूत, पैरिया या पंचमा के समान समझा जाता है, उसे कोई छूता नहीं और मर्दों की नज़रों से दूर कहीं कोने अँतरे में, गृह की अँधेरी कोठरी में वह कम्मल लिये पड़ी रहती है, वह कोई वस्तु छू नहीं सकती, अगर कोई उससे छू जाय, तो वह स्नान करे, कपड़े बदले, और कोई कपड़ा भी उससे छू जाय तो वह भी धोया जाय आदि आदि।

आदि काल में और भी खराबियाँ और विचित्रताएँ थीं। रजस्वला स्त्री के सम्बन्ध में यह ख्याल था कि अगर वह किसी फले हुये वृक्ष के नीचे बैठ जाय तो उसके फल सूख जायँ। अगर खाद्य वस्तु वह कोई छू ले या तैयार करे तो उसमें विषैले कीटाणु फैल जाँय। इन विषयों के एक प्रकाण्ड पंडित और विशेषज्ञ हेवलाक ईलिस ने इस सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा है। इतने दिन पढ़े हो गये कि ठीक ठीक याद नहीं किन्तु कुछ ऐसा ख्याल मुझको है कि कदाचित एक या दो वैज्ञानिकों या डाक्टरों के ऐसे मतों का भी उन्होंने उल्लेख किया है जिनका हृदय पर ऐसा प्रभाव पड़ता है कि रजस्वला भोजन न बनाये तो अच्छा, किन्तु इसके लिये मैं शपथ नहीं खा सकती कि उन्होंने ऐसा जरूर ही लिखा है। यहूदियों में तो रजस्वला के सम्बन्ध में बहुत ही हास्यास्पद और वीभत्स विचार थे। लकीर के फकीर पार्सियों में अब भी रजस्वला स्त्री बहुत घृणित और हेय समझी जाती है, यही नहीं कि वह गृहस्थी के काम धन्धों से अलग कर दी जाती है, वह रहने के मकान से भी

दूर कर दी जाती है, और मकान के नीचे के हिस्से में, सब से अलग जहाँ काठ कबार रहता है, वह रहने को भेज दी जाती है। पहाड़ों में भी रजस्वला स्त्री मकान से बाहर कर दी जाती है, सर्दी में मकान से बाहर रहने में उसे कष्ट बहुत होता है। एक यूँ ही वह कष्ट में होती है ऊपर से उस पर यह अत्याचार होता है।

यह सब अति है और हमारी अज्ञान की दाद देने वाली और उसको प्रकट करनेवाली बातें हैं। स्त्री खाना बनाये यह मैं भी कभी नहीं चाहती किन्तु मेरा कहना यह है कि उसके साथ मानव व्यवहार किया जाना चहिये और अछूत की भाँति उसके साथ व्यवहार नहीं होना चहिये। रजोधर्म कोई बीमारी या छूत नहीं। यह स्त्रीत्व और प्रौढ़त्व का चिन्ह है, और रजोधर्म स्त्री को पवित्र करने का प्रकृति का प्रबन्ध है। शरीर में जो कुछ (Foreign and superfluous matter) खराबी जमा हो जाती है रजोधर्म के काल में वही बाहर निकल जाती है। एक बात और है, मैंने ऊपर लिखा है कि रजोधर्म इस बात की घोषणा है कि स्त्री विकास को प्राप्त कर रही है और बच्चे को पैदा करने की शक्ति उसमें आ रही है, रजोधर्म के बाद इसी से स्त्रियों में पति के सहवास की इच्छा भी होती है। बच्चे को पैदा करने वाले कीटाणु जो मास भर में बच्चे के रूप में परिणत नहीं होते वे बेकार हो जाते हैं और शरीर से उनको बाहर करने के लिए भी रजोधर्म प्रकृति का एक प्रबन्ध है। "मनु" ने तो लिखा है कि रजोधर्म होने पर स्त्री पवित्र हो जाती है। सच पूछा जाय तो रजोधर्म स्त्री के शरीर से (Superfluous matter) खराबियों और फाजिल माद्दे को निकाल बाहर करने का ही एक प्रबन्ध है। जानवरों में भी उनको, जो अपने बच्चों को दूध पिलाती हैं, रजोधर्म होता है।

हाँ, उनमें मासिक न होकर यह विशेष ऋतुओं में होता है और उसी समय वह गर्भवती भी होती हैं। जहाँ तक मैं समझती हूं अलग और दूर रहने की प्रथा इसीलिए चलाई गई क्योंकि ऋषियों को इस बात का भय था कि कहीं पति-पत्नी अगर एक दूसरे को छूते रहे, साथ रहे और किसी समय संयम उनका जाता रहा और पति-पत्नी का संसर्ग हो गया तो भयावह फल होगा क्योंकि रजोधर्म के काल में पति-पत्नी-संसर्ग जहर के समान है और अनेक भयावह बीमारियों का पैदा करने वाला है। दूसरा कारण अछूत बनाने का यह भी हो सकता है कि यह काल स्त्रियों के कष्ट का काल होता है, इस समय में उनको पूर्णरूप से पड़े रहने और आराम करने की नितान्त आवश्यकता होती है। स्त्री पूर्णरूप से आराम ही करे, उसे घर गृहस्थी की कोई चिन्ता न हो, तनिक सा भी उसे कोई काम न करना पड़े, कोई उससे किसी भी काम की आशा ही न करे, इसलिये मेरी समझ में ऋषियों ने एकदम से, पति और पत्नी की हितचिन्ता से ही, स्त्री को एक दम अछूत बना दिया।

जिस तरह से संसार की अनेक अन्य बातों में हम सब धर्म तथा प्रथा के मर्म, तत्व और महत्व को भूल कर केवल लीक पीट रही हैं, और वह भी इस भद्दे और लचर तरीके से कि उसकी अच्छी बातों पर हरताल फेर उसकी खराब बातों से हम हानि उठा रही हैं, ठीक उसी तरह से रजोधर्म के सम्बन्ध में भी हो रहा है। नियम बनाया गया था पति-पत्नी की हितचिन्ता से, इसलिए कि पत्नी आराम से पड़ी रहे और उसे कोई काम-काज न करना पड़े, किन्तु यह सब तो हम भूल गये और प्रथा के नाम पर अब स्त्रियों के साथ केवल अत्याचार हो रहा है। सब से दुखदायी बात यह है कि रजोधर्म स्त्रियों की एक लज्जा की बात है, साधारण बुद्धि, सभ्यता, स्त्री की प्रकृति इस बात की

अपेक्षा करती है कि वह इसको छिपाये। पढ़ी लिखी, सलज्जा स्त्रियाँ इसकी चर्चा अपने पतियों से भी करना पसन्द नहीं करतीं, ऐसी दशा में अछूत बना कर हमसे इस लज्जा की दशा का ढिंढोरा पिटवाया जाना बहुत ही कष्टकर है।

मैं तो, बीबी रानी, बहुत पढ़ी लिखी नहीं, पंडिता नहीं, लेकचर झाड़ नहीं सकती, और झाड़ भी सकती होती तो ऐसी लज्जा की बात के सम्बन्ध में पुरुष समाज से कहती ही क्या ? किन्तु धर्माचार्यों को उचित है कि जैसे सभी पुरानी प्रथाओं के सम्बन्ध में वह विचार कर रहें हैं और समय की गति के अनुसार उनमें आवश्यक परिवर्तन कर रहे हैं, ठीक उसी तरह से स्त्रियों के साथ जो इस सम्बन्ध में अत्याचार हो रहा है उसके सम्बन्ध में भी वह विचार करें।

अभी कुछ ही दिन हुए मुझसे एक श्रद्धास्पद, वयोविद्या-वृद्ध, धर्म के आचार्य, और सनातन धर्म के महा कट्टर अनुयायी और प्रवर्तक से इस सम्बन्ध में बातें हुई थीं। उन्होंने अन्त में यही कहा कि इस काल में पति-पत्नी का संसर्ग बचाने के लिए, साथ ही इसलिए कि स्त्रियों को तनिक भी काम न करना पड़े और वे पूरी तौर से आराम से पड़ी रहें अछूत का नियम प्रचलित किया गया। मेरा कहना यह है कि हमको ईश्वर और प्रकृति की ही नकल करनी चाहिए, मानव नियमों की नहीं। ईश्वरीय या प्राकृतिक नियम यह है कि आग में हाथ रखो जल जायगा, पानी में कागज फेंको गल या सड़ जायगा, पेचिश है, दस्त आ रहे हैं, भोजन करोगे खराबी और भी बढ़ेगी, किन्तु प्राकृति ने यह आयोजन नहीं किया कि बच्चा आग के पास जा ही न सके, पानी के पास कागज़ पहुँच ही न सके। नियम, कानून मानव समाज ने ही बनाए हैं। चोरी करो, दण्ड होगा। चोरी के लिए पुलिस भी

रखनी पड़ी और मजिस्ट्रेट भी, फिर भी चोर चोरी करते ही हैं। कोई आग में हाथ नहीं छोड़ता किन्तु सोने पर हाथ अनेकों का दौड़ ही जाता है। मेरा इसलिए निवेदन है कि प्रकृति की शिक्षा के भरोसे रहना ही अच्छा है और इसलिए उपर्युक्त उद्देश्यों की सिद्धि के लिये स्त्री को एकदम अछूत बनाने के सिवा और कोई बात सोची जाय तो अच्छा है।*

दूसरे, बीबी रानी, अब तो समय बदल गया है, हमारी बहिनें अब घर में ही नहीं रहतीं, वह पर्दे में भी नहीं रहती हैं। कितनी ही हमारी बहिनें स्कूलों में, कालेजों में पढ़ने जाती हैं, कितनी ही पढ़ाने जाती हैं, कई डाक्टरनि बन गई हैं, कोई-कोई अब वकालत करने लगी हैं, इन सब को बराबर बाहर आना जाना, दूसरों से मिलना जुलना पड़ता है। अगर बाहर न भी

---

* "रजस्वला सम्बन्धी विषय में हमें पुरानी छूत-छात माननेवाली प्रणाली ही ठीक मालूम पड़ती है, यदि उसमें से घृणा के अंश को निकाल कर और अन्य उचित परिवर्तन कर दिये जांय तो लाभ ही अधिक हो। लड़कियों को इन दिनों अवश्य अनध्याय करना चाहिये, स्नान इत्यादि तथा व्यायाम से बचना चाहिए और आराम से बैठना चाहिए। हम अपने अनुभव के आधार पर कह सकते हैं कि अपने शिक्षा काल में हमें जिन अमेरिकन, इंगलिश या पाश्चात्य सभ्यता की अनुयायिनी योरुपियन, क्रिश्चियन, हिन्दू और मुसलमान स्त्रियों का साथ रहा है उनमें से अधिकांश रज सम्बन्धी रोगों से पीड़ित रहती थीं। इधर पंजाब में भी छूत का अभाव होने से प्रायः वे नहा धो लेती हैं और प्रत्येक कार्य में भाग लेती हैं, अतः उनमें से भी अधिकांश इस प्रकार के रोगों से ग्रस्त रहती हैं। पहिले यह रोग इतना फैला हुआ नहीं था जितना कि अब है।

("ज्योति" की समालोचना से)

जायें-आयें तब भी घर पर तो दूसरों से मिलना जुलना, बातें करना बन्द नहीं किया जा सकता। अछूत बन कर यह अपनी लज्जा की दशा को भला दूसरों पर, या घर के नौकरों-चाकरों पर ही कैसे प्रकट कर सकती हैं ? हमारे धर्माचार्यों को इसलिए इस सम्बन्ध में गम्भीरता से विचार कर शीघ्र ही कुछ तय कर देना चाहिए कि रजोधर्म का मातृत्व से, जो स्त्रियों के जीवन का आदर्श और उद्देश्य है, घना सम्बन्ध है और इसलिए रजोधर्म घृणा नहीं वरन् आदर की दृष्टि से देखा जाना चाहिए। मैं स्वयम् नहीं चाहती कि स्त्रियाँ भोजन बनायें, या तनिक सा भी काम रजोधर्म के काल में करें। लोगों को भय है कि अगर अछूतपना स्त्रियों का मिटा तो खामख्वाह उनको चलना फिरना या कुछ काम करना ही पड़ेगा, गृहस्थी में रहती हुई किसी के कोई काम कहने पर वह किससे कहेंगी कि मैं नहीं उठ सकती, या मुझको कष्ट है और यह सब कहने सुनने, बहानों की बात बनाने से भी तो जिसको छिपाने का आयोजन है वह प्रकट हो जायगा किन्तु मेरा निवेदन यही है कि "अति सर्वत्र वर्जयेत्।" स्त्रियाँ न चलें फिरें या काम ही करें, और न एक दम अछूत* बनाई जाकर घर और गृहस्थी से ही बाहर की जाँय। किन्तु, बीबी रानी, तुम्हारा बड़ी बूढ़ियों का साथ है, जीवन भर वह इसी तरह से रह चुकी हैं, तुम्हारी लज्जा, अछूतपने या अत्याचार की दलीलों का महत्व उनकी समझ में आयेगा नहीं इसलिये

*गुजरातियों में रजस्वला अछूत नहीं होती, वह केवल भोजन नहीं बनाती। महारानियों, रानियों और बड़ी ठकुराइनों में भी यही प्रथा है। भोजन बनाना या काम करने की तो जरूरत ही इनको क्या, रजस्वला होने पर केवल यह पूजा पाठ बन्द कर देती हैं।

कु० का० मा०

तुम उनसे व्यर्थ की हाय-हाय न करना, उनकी समझ में आ जाय तो अच्छा, नहीं तो जिद न करना, अधिक से अधिक घर में ऐक्य हो, सब की इच्छाओं और भावनाओं का आदर होता रहे, खटपट न हो, और सब को अपनी इच्छा के अनुसार बिना दूसरे के हृदयों को आघात पहुँचाये हुए स्वतंत्रता पूर्वक रहने का अधिकार हो, जीवन को सुखमय बनाने का एक मन्त्र यह भी है।

रजोधर्म के सम्बन्ध में दो-चार बातें और कह कर मैं अब इस पत्र को समाप्त करूँगी। मैं कह चुकी हूं कि प्रत्येक स्त्री के स्वास्थ्य और उसके रजोधर्म से घना सम्बन्ध है और यह कि सदा ठीक समय पर इसके होने से ही शरीर स्वस्थ रह सकता है। रजोधर्म सर्वश्रेष्ट दशा में अट्ठाईसवें दिन और वर्ष में तेरह बार होना चाहिये। किसी किसी को इक्तीसवें, उनतीसवें और तीसवें दिन भी यह होता है। कितने दिन पर होता है यह महत्व की बात नहीं, अधिक महत्व की बात इसके सम्बन्ध में यह है कि जिस दिन वह होता है, जब वह होता है प्रत्येक मास वह उतने ही दिनों पर होता रहे।

रजोधर्म के काल में स्त्री को अधिक सावधान भी रहना चाहिए और उसको अनेक नियम पालन करने चाहिये क्यों कि इस समय की भूलों से अक्सर स्त्रियों का स्वास्थ्य सदा के लिए बिगड़ जाते हुये देखा गया है। स्त्रियों को यूँ भी सावधान रहना चाहिए क्योंकि यह समय उनके कष्ट का समय होता है। रजो-धर्म के काल में प्रायः अधिकतर स्त्रियों को, जो कमजोर हैं या जिनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं, पीड़ा होती है। हाथ-पैर, अंग-प्रत्यङ्ग में अजीब तरह की पीड़ा होती है जो कभी-कभी असहनीय हो जाया करती है। स्त्रियों में इस समय अनमनापन, चिड़-चिड़ापन और आलस्य भी बढ़ जाता है। स्त्री को इसलिए सावधान रहना चाहिए साथ ही पति-देव को भी समझना चाहिए कि यह काल

स्त्रियों के चिड़चिड़ेपन और कष्ट का होता है। कष्ट निवारण के लिए, अगर वह अधिक हो, स्त्री को चाहिए कि वह बिस्तर पर आराम से लेटी रहे, पूर्ण रूप से आराम करे, कोई चिन्ता न करे, गर्म फलालैन के टुकड़ों को पेड़ू और उसके आस-पास रखे, इतने से भी कष्ट न जाय तो गर्म पानी से भरी बोतल को बहुत सहारे से फेरना चाहिए। बहुत सी स्त्रियाँ गर्म चोकर को एक बड़ी थैली में भर कर, अधिक दर्द होने पर, पेड़ू पर हलके-हलके फेरती हैं। जाघों, पैर और पीठ के नीचे के भाग को सहारे से मलवाना भी इस समय में लाभकर होता है। कष्टकर रजोधर्म का प्रधान कारण स्त्रियों का कमज़ोर तथा आलसी होना और अधिक न चलना फिरना होता है। रजोधर्म का कष्ट कम हो इसका उपाय यह भी है कि आँवले की बुकनी बना कर एक फंकी रोज या रजोधर्म के दो चार दिन पहले से नित्य खाई जाय और पेट बराबर साफ रखा जाय। रजोधर्म के शुरू होने के दो दिन पहिले एक साधरण हल्का सा जुलाब विधारा का ले लिया जाया करे तो और भी अच्छा। एक दम गर्म पानी से नहीं, कुनकुने पानी से पेट, पीठ और पेड़ू स्पंज की सहायता से साफ़ कर देना भी रजोधर्म के स्राव को कष्ट-हीन करता है।

रजोधर्म के समय में इस बात की बहुत फिक्र रखनी चाहिए कि ठंड न लग जाय, इससे बड़ी हानियाँ होती हैं। कदाचित् इसी ख्याल से रजोधर्म के काल में स्नान एक दम मना है और कम्मल हर समय साथ रखा जाता है। ठंडे पानी से या खुली जगह में स्नान करने से बड़ी हानि पहुँच सकती है किन्तु मेरा ख्याल यह है कि बन्द जगह में, जहाँ हवा का गुज़र न हो, गर्म पानी से शचैल स्नान नहीं वरन् स्पंज से अगर हाथ, पैर, मुंह, पेट कुछ कुछ धो दिया जाय तो हानि की अपेक्षा लाभ ही की संभावना होगी।

रजोधर्म प्राय: तीन से पाँच दिन तक होता है, किसी-किसी को आठ या दस से भी अधिक दिनों तक स्राव जारी रहता है। स्त्रियों की प्रकृति और उनके स्वास्थ्य से इनका बहुत सम्बन्ध होता है और इस लिए दिनों की संख्या के सम्बन्ध में कोई निश्चित नियम नहीं हो सकता किन्तु इसके सम्बन्ध में दो बातों को सदा ध्यान में रखना चाहिये। प्रथम यह कि स्राव का एक दम, अचानक, दिनों के बीच में बन्द हो जाना जब कि अपना पुराना अनुभव कहता है कि उसे जारी रहना चाहिये भयावह है और ऐसी दशा में किसी लेडी डाक्टर, वैद्य या हकीम से सहायता तुरन्त लेनी चाहिये। दूसरी बात यह है कि अगर यह दिखाई दे कि स्राव की मात्रा प्रति मास अधिक होती जाती है या दिन प्रत्येक मास में निरन्तर चढ़ते जाते हैं तो इस दशा में भी एक चतुर लेडी डाक्टर से तुरन्त सलाह लेनी चाहिये। हमको यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि अगर जो सब मैं ऊपर बतला चुकी हूँ वह सब करने के बाद भी रजोधर्म का कष्ट कम न हो तो उस दशा में भी लेडी डाक्टर से सलाह लेनी चाहिये। बहुत सी आज कल की पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ कष्ट को कम करने के लिए (Aspirine) एसपिरीन तथा अन्य दवायें खा लेती हैं किन्तु तुम मेरी इस बात को पत्थर की लकीर समझना कि यह और ऐसी ही अन्य औषधियाँ कभी-कभी बहुत हानि पहुँचा देती हैं और इस लिए तुम तब तक किसी औषधि का सेवन कभी न करना जब तक कोई चतुर डाक्टर या वैद्य उसके लिए न कहे। रजोधर्म के बाद पोटेसियम परमैगनेट (Potassium Permanganate) से (Douche) डूश ले लेना या जननेन्द्रिय और गर्भाशय को धो देना हितकर होता है। कितने पानी में कितना वह मिलाया जाय यह कोई भी डाक्टर या लेडी डाक्टर बता देगी। साधारण रूप से पाव भर पानी में एक ग्रेन पोटेसियम ठीक होता है।

रजोधर्म के दिनों में से एक दिन पूर्ण रूप से पड़ा रहना और आराम करना भी आवश्यक है और अच्छा होता है। ठंढे पानी से स्नान महा हानिकारक होता है यह कभी मत भूलना। होना तो यह चाहिये कि इन्हीं दिनों में नहीं वरन् रजोधर्म शुरू होने के तीन दिन पहिले से ही ठंढे पानी के बजाय गर्म पानी से स्नान किया जाय। हाँ, शचैल स्नान किसी भी पानी से रजोधर्म के दिनों में नहीं करना चाहिये। रजोधर्म गर्भाधान के होते ही बन्द हो जाता है और बच्चा हो जाने पर भी जब तक स्त्री बच्चे को अपना दूध पिलाती रहती है रजोधर्म नहीं होता। किन्तु अगर गर्भ में बच्चा न हो साथ ही दिन चढ़ते जाते हों और रजोधर्म न हो तो तुरन्त लेडी डाक्टर से सलाह लेनी चाहिये। उपर्युक्त सभी बातों से तुम समझ गई होंगी कि रजोधर्म केवल इस बात की सूचना मात्र है कि गर्भाधान हो सकता है और गर्भाधान की गुञ्जायश है। इसमें कोई अपवित्रता नहीं और इस लिए रजस्वला को अछूत समझना ठीक नहीं है। हाँ, रजोधर्म के समय अधिकतर पड़े रहना, आराम करना, परिश्रम का काम न करना, बैठा रहना बहुत ज़रूरी है। चलना फिरना, कूदना, दौड़ना या किसी तरह का शारीरिक या मानसिक परिश्रम या कष्ट उठाना हानिकर होता है। रजोधर्म से स्त्री के स्वास्थ्य, सौन्दर्य और ध्येय से घना सम्बन्ध है और इस लिए अगर तुम सुखी और स्वस्थ जीवन वहन करना चाहती हो तो मेरी बातों को सुनी अनसुनी न कर देना।

शरीर को स्वस्थ और सुन्दर बनाये रखने के लिए मेरी समझ में जितनी आवश्यक बातें थीं मैंने सूत्र रूप में तुमको सब बतला दीं। जैसा कि मैं ने तुमसे शुरू में ही कहा था एक भी बात ऐसी नहीं जिसे एक साधारण स्त्री अपनी सहज बुद्धि या साधारण विवेक से न जान सके या न कर सके, फिर भी यह

हम लोगों का अभाग्य ही है कि सहज साधारण बातों की अवहेलना कर हम अपने और अपने पति के जीवन को कभी-कभी नहीं वरन् प्रायः कष्टमय बना देती हैं। मैं आशा करती हूँ कि तुम सब कुछ जान और समझ कर अपने वैवाहिक-जीवन को अधिक से अधिक सुख देने वाला बनाओगी। अब अगले पत्र में मैं मनुष्य के हृदय, आत्मा और मस्तिष्क पर क्यों कर अधिकार हो सकता है इस सम्बन्ध की चर्चा करूंगी। ख़ुश रहो दिन-दिन फलो-फूलो और क्या कहूं।

तुम्हारी—
शान्ति

हृदय पर अधिकार*

शान्ति कुटी
शिमला
२६-८-२७

‡"परस्परानुकूल्येन तदेवं लज्जामानयोः
संवत्सरशतेनापि प्रीतिर्न परिहीयते"
(कामसूत्र)

शीला बहिन,

तुम मेरे इस पत्र की बड़ी उत्सुकता से बाट जोहती रही होगी। तुम सोचती रही होगी कि माना कि पशु-पुरुष पर अधिकार मिल ही जाय किन्तु जीव-मनुष्य पर, जिस के मस्तिष्क के विकास की कोई सीमा ही नहीं, जो हर समय किसी न किसी धुन में दीवाना रहता है, कैसे कोई अधिकार प्राप्त कर सकता है। तुम सोचती रही होगी कि मानव-हृदय सी चंचल वस्तु, जो हिलने डुलने में पारे से कम नहीं, कभी भी वश में नहीं की जा सकती, किन्तु मेरा कहना तुम से यही है कि जड़ या पशु-पुरुष की अपेक्षा जीव-पुरुष पर

---

*"True conjugal love, and the most lasting, is based upon the full acceptance of three essential conditions—Spiritual sympathy, aesthetic attraction and mental affinity."

—W. M. Gallichan

‡परस्पर प्रेम रखते हुए और लज्जा करते हुए स्त्री-पुरुष की प्रीति सौ वर्ष में भी कम नहीं हो सकती।

कब्जा करना कठिन तो जरूर है फिर भी बहुत मजेदार है और असम्भव नहीं। काम सहज नहीं है, हो भी कैसे सकता है, दुनिया में कौन सी विजय आसान है ? विजय का प्रथम नियम सभी विजयों में एक समान है और मेरा ख्याल है कि अगर स्त्री संकल्प कर ले, और इसी विजय लाभ के हेतु अपना जीवन उत्सर्ग कर दे तो विजय प्राप्त करना तनिक भी कठिन नहीं। एक साधारण सी स्कूल और कालेज की परीक्षा पास करने के लिए हमको अपनी पूरी शक्ति लगा देनी पड़ती है, सोते, जागते, उठते, बैठते उसी की चिन्ता रखनी पड़ती है, फिर एक मनुष्य पर विजय प्राप्त करने के लिये, उसे अपने वश में रखने के लिए अगर हमको अपनी सारी शक्तियां लगा देनी पड़ें तो यह कौन सी बड़ी बात है, विशेष कर जब हम जानती हैं कि इस एक विजय के प्राप्त करने से हमारा सांसारिक जीवन बहुत सुखमय हो सकता है। बहुत सी हमारी पढ़ी-लिखी बहिनों का कहना है कि पुरुष इस योग्य नहीं कि उसके लिए इतना कठिन साधन साधा जाय। उनका कहना है कि ज्यादे से ज्यादा खाना, कपड़ा, गहना और पति के 'प्रेम' का सुख ही तो मिल सकता है। उनका कहना है कि पति हमको सुख से रखता है और किसी अन्य स्त्री की ओर आंख उठा कर नहीं देखता, बस इतने ही के लिए हम अपने व्यक्तित्व को, अपने भिन्न अस्तित्व को, अपनी प्रकृति और ध्येय को भूल जांय और हर तरह से अपने को उस में लीन कर दें। मेरा जवाब इस संबन्ध में इतना ही है कि मैं यह कभी नहीं चाहती और इस संवन्ध में जो कुछ मुझ को कहना है उसे अगले किसी पत्र में लिखूंगी किन्तु उन सब बातों के साथ ही मेरा कहना यह है कि समाज की वर्तमान स्थित में, विशेष कर भारत में, जहां न स्त्रियां अभी स्वतंत्र हैं और न उनका आर्थिक जीवन ही स्वतंत्र है, हमको इसी बात की चेष्टा करनी चाहिए कि पति और पत्नी

के जीवन में अधिक से अधिक समता हो। यह सच है कि हम दो भिन्न व्यक्तित्वों को एक नहीं कर सकतीं किन्तु हम यह कर सकती हैं कि भिन्न व्यक्तित्व रूपी दो बाजे एक ही स्वर और ताल से बजें, किसी का कोई स्वर कर्णकटु और बेसुरा न सुनाई दे और दोनों की लयदारी और साम्य से एक समाँ सा बँधा रहे।

स्त्री के जीवन के उद्देश्य मेरी समझ में दो हैं। सृष्टि को कायम रखना और मनुष्य को पशुत्व से देवत्व की ओर ले जाना। इन उद्देश्यों की सिद्धि तभी हो सकती है जब हम माता के हृदय से पुरुष रूपी शिशु से उसके सर्वथा निकम्मा होने पर भी, प्रेम ही करें, उसे सुधारने की चेष्टा में रत रहें, और उसकी हित-चिन्ता में ही लीन रहें। यह सब न भी हो तब भी जब विवाह हुआ है और दो व्यक्तियों को एक साथ जीवन-यात्रा करनी है तो बुद्धि इसी बात की अपेक्षा करती है कि दोनों इस बात के लिए प्रयत्न करें कि उनका जीवन सुखमय हो अधिक से अधिक मेल के साथ वे रहें और परस्पर सहयोग से वे जीवन में अधिक से अधिक सुख और लाभ उठायें। मैं यह नहीं कहती की दोनों में से एक भी अपनी विशेषताओं को तिलाञ्जलि दें, दोनों ही अपनी विशेषताओं को कायम ही नहीं वरन् उनकी वृद्धि भी करें; किन्तु ये विशेषताएँ उसी तरह प्रकट हों जैसे कि जब चार बाजे, उदाहरणार्थ सितार, वायलिन, हारमोनियम और तबला बजते रहते हैं तो कभी एक बजाने वाला एक तान लगा जाता है, कभी दूसरा लगा देता है। कभी तबले वाला परन्द के बोल बजा जाता है किन्तु अलग होते हुए भी सब एक होते हैं, और समाँ जो बँधा हुआ होता है वह टूट नहीं जाता और न राग का जो रूप सामने नाचता रहता है उसमें ही कोई फ़र्क आता है।

तुम कहोगी, यह संभव नहीं किन्तु बहिन, मेरा कहना यह है कि यह असंभव भी नहीं। तुमको याद होगा कि मैं तुमको लिख चुकी हूँ कि जिस तरह से पशु या जड़, पुरुष पर अधिकार उसकी पशु-वृत्ति पर अपने जड़ शरीर की सहायता से अधिकार प्राप्त करने से मिलता है ठीक उसी तरह से पुरुष के मस्तिष्क और हृदय पर कब्जा अपने मस्तिष्क और हृदय की सहायता से प्राप्त होता है। मैं इन बातों के साथ ही यह भी कह देना चाहती हूँ कि जिस तरह से पशु-पुरुष पर अधिकार प्राप्त करने के उपाय सहज हैं और साधारण बुद्धि से जाने जा सकते हैं ठीक उसी तरह से पुरुष के मस्तिष्क पर अधिकार प्राप्त करने के उपाय भी वैसे ही सहज हैं और साधारण बुद्धि-विवेक से काम में लाये जा सकते हैं। हाँ, सफलता के लिये यह जरूरी है कि दोनों का मस्तिष्क एक ही श्रेणी का न भी सही तो एक ही प्रकार का हो, दोनों ही समान अभिवृद्धि प्राप्त किये हों, और दोनों प्रेमियों का उठना-बैठना, खाना-पीना, सोच-समझ सकना अर्थात् दोनों की तहजीब, तबीयत, मिज़ाज, सभ्यता, अभिवृद्धि, मज़ाक और रुचि एक समान हो।

इसी लिए हमारे पूर्वजों ने यह कह रखा था कि "समं विवाहं मैत्रीं च न तु पुष्ठवि पुष्टयोः" 'सम' का अर्थ यही नहीं है कि विरादरी एक हो, जात-पाँत एक हो, सम*का सबसे पहिले अर्थ है कि समाज में स्थिति दोनों की एक सामान हो, दोनों की शिक्षा का क्रम एक रहा हो और दोनों एक ही समान रहन सहन और सभ्यता के वातावरण में पले हों। यदि किसी पिता ने

---

*सोहत संगु समान सौं, यहै कहै सबु लोग
पान-पीक ओठनु बनै, काजर नैननु जोग॥

—"बिहारी"

अपनी कन्या को पश्चिमीय क्रम से पाला है और शिक्षा दी है, अगर उसने उसे शिक्षा देकर उसके मस्तिष्क की अभिवृद्धि की है, अगर उसने उसे संगीत, चित्रकारी, बोलना और लिखना सिखाया है तो उस कुमारी को अपनी ही बिरादरी के एक युवक के पाणि-ग्रहण से, जिसकी देख रेख इसी प्रकार की नहीं हुई, जिसने कोरी संस्कृत पढ़ी है, या जो मूर्ख है या केवल हिन्दी जानता है और जिसके रहने-सहने, उठने बैठने का क्रम यदि गँवारू नहीं तो शहर का भी नहीं है,—क्या सुख मिल सकता है ? "समं विवांह मैत्री च" में समम् का अर्थ मेरी समझ में एक समान (culture) मिज़ाज, सभ्यता और रहन-सहन❀ वाले ही हैं अन्यथा वैवाहिक-जीवन जितना सुखकर होना चाहिए नहीं होगा।

यह हम लोगों का अभाग्य है कि हमारा पुरुप-समाज पत्नी के रूप को ही भूल गया है स्त्री के, संसार-यात्रा की नैया की बराबर की खेवैया, सहचरी और सहधर्मिणी के रूप का ज्ञान हमारा पुरुष-समाज बिलकुल बिसरा बैठा है। अधिक अंश में इसका कारण हमारे देश और समाज का पतन, हम लोगों में अविद्या का साम्राज्य और हमारी ग़रीबी है। हमारे पुरुष-समाज ने स्त्री को केवल बच्चों की माता और गृहस्थी करने वाली का रूप दे रखा है। विद्या का अर्थ और मूल्य उसकी नज़रों में केवल नौकरी या धन कमाना रह गया है। अमीर मा-बाप के बच्चे, पुराने क्रम के अच्छी और समुचित शिक्षा नहीं पाते क्योंकि उनको नौकरी करने की ज़रूरत नहीं, हम गरीब पढ़ाई नहीं जातीं क्योंकि हमको दफ़तरों में नहीं जाना है ? हमारे

❀"समस्याद्याःसह क्रीड़ा विवाहा संगतानि च
समानैरैव कार्याणि नोत्तमैर्नापिवाधमैः"

(कामसूत्र)

मा-बाप यह सोचते ही नहीं कि अगर दफ़्तरों में नहीं जाना है तो संसार में तो रहना ही है। संसार दफ़्तर से छोटा नहीं है और फिर गृहस्थी भी तो दफ़्तर से बड़ी ही चीज़ है। "दफ़्तर सप्ताह में एक दिन बन्द रहता है, वर्ष में अन्य भी कितने ही अवसरों पर दफ़्तरों में छुट्टी रहती है किन्तु गृहस्थी जीवन भर, कभी एक मिनट के लिए भी बन्द नहीं होती। "पुरुष-समाज में खोज कर देखने से बिरला ही कोई मनुष्य मिलेगा जो गृहस्थी की साधारण झंझटों और समस्याओं का नित्य-प्रति बिना सर पटके सामना कर सके, और जो यह सब करते हुए एक मिनट में ही धोने के लिए, कपड़े बदलने के लिए, खाना पका देने के लिए, डाक्टरी करने के लिए, सामान की ख़रीदारी करने के लिए और दूसरों की मेहमानदारी या बातें कर उनको खुश करने के लिए तैयार हो जाय। पुरुषों को किसी एक व्यापार या व्यवसाय के लिए शिक्षा दी जाती है, और उसी में वे प्रवीण होते हैं किन्तु स्त्रियों से, जिनको केवल अपने प्राकृतिक झुकाव और सहज ज्ञान का ही सहारा होता है, गृहस्थी के अगाध जीवन में, जिसके लिए उनको कोई समुचित शिक्षा नहीं दी जाती, आशा की जाती है कि वे दर्जनों विषयों में प्रवीण हों।"

गृहस्थी की झंझटों और समस्याओं को हल करने के लिए और गृहस्थी को एक हंसता हुआ कानन बनाये रहने के लिए योग्यता की किसी कम अंश में आवश्यकता नहीं होती। शीघ्रता, अनेक विषयों के ज्ञान, जल्दी निष्कर्ष पर पहुँचने और अपने कर्तव्यों के पालन में एक साधारण गृहस्थ-स्त्री किसी भी पुरुष के मुकाबले में खड़ी की जा सकती है।

एक गृहस्थी के प्रबन्ध में, जिसमें माता-पिता और चार बच्चे हों, कोई भी मनुष्य चक्कर खा जायगा; समुचित प्रबन्ध करने

के लिए स्त्री सुबह से जब तक रात्रि में सोने नहीं जाती परीशान रहती है, ख़ुश रहती है और हँसती रहती है। सब के आराम का प्रबन्ध पहिले से ही तैयार रहे, "यही नहीं हर एक को उसके समय पर ही खाना भी मिल जाय और सब की पसन्द और स्वाद का भी ध्यान रखा जाय, जिसे जो खाना प्रिय है उसे वही मिलता रहे, सब के स्नान के लिए पानी का प्रबन्ध ठीक रहे, बदलने के लिए कपड़े सब के अपने ठीक स्थानों पर रखे हों, कोई बीमार है तो उसकी दवा-दारू भी होती रहे, किसी के कपड़े फटे हैं या बटन टूटे हैं तो उनको भी वह सी कर तैयार रखे; यही नहीं वह बसन्त ऋतु में जब प्रकृति उदार होती है उसकी उदारता से लाभ उठा कर फल, तरकारी आदि को भी अचार और मुरब्बों के रूप में उस जाड़े के समय के लिए, जब प्रकृति कंजूस के रूप में प्रकट होती है—सुरक्षित रखे।"

सूझ, सत्यशीलता, न्याय, विवेक, (adaptibility) स्थिति के अनुकूल बनना, साहस, चातुर्य, निर्माण तथा रचना-शक्ति, नीति-निपुणता यह सब अनेकों में से कुछ विशेषताएँ और खूबियाँ हैं जिनको प्रत्येक स्त्री को, जो सफल गृहस्थ होती है, हर समय काम में लाना पड़ता है और इन सब के साथ ही साथ उसमें (Energy) निरन्तर परिश्रम की शक्ति होती है। मनुष्य कठिन परिश्रम सारी शक्ति लगा कर कुछ समय तक ही कर सकता है, फिर उसे आराम करने और सुस्ताने की ज़रूरत पड़ती है। इसके विपरीत स्त्री सुबह से शाम तक निरन्तर घड़ी की सुई या मशीन सी काम करती रहती है और उसे आराम कभी निद्रा के समय और अधिकतर तो चिता पर ही मिलता है। पुरुष हँसेंगे, उनको एतबार भी न आयेगा किन्तु सच बात यह है और यह मेरी नहीं एक अङ्गरेज की राय है कि एक स्त्री एक दिन में सुबह से शाम तक के उठाने धरने, झाड़ू-बुहारू देने,

साफ़ करने, बरतन धोने और गृहस्थी के प्रबन्ध में चक्की सी घूमती रहने में उतनी ही शक्ति का व्यय करतो है जिससे एक साधारण आटे की चक्की आसानी से दिन भर चल सकती है। हाल यह है, बुद्धि, विवेक, शक्ति और मस्तिष्क की वृद्धि की आवश्यकता हमको इतनी है किन्तु फिर भी हमारे शरीरों और मस्तिष्कों को अधिक से अधिक पुष्ट करने की कोशिश नहीं की जाती।

देश के अभाग्य से, हिन्दुओं के अभाग्य से, लड़के बिहारी, देव, पद्माकर, भूषण को नहीं पढ़ते, वे शेक्सपीयर, टेनीसन, बायरन, शेली, कीट्स, वर्ड्स वर्थ* आदि को पढ़ते हैं, हमारे ही सौन्दर्य और शृङ्गार के रस में भीनने पर उनका मस्तिष्क अङ्गरेजी में काम करता है, उनको याद आता है "एक† सुन्दर वस्तु अनन्त काल के लिए आनन्ददायक वस्तु होती है" मगर हमलोग इसको समझती नहीं; हम उनके ही समान उनके कल्पना-संसार में उनके साथ दौड़ नहीं लगा सकतीं, उनका साथ नहीं दे सकतीं, उनका मजा इस तरह आधा तथा किरकिरा हो जाता है। हमारी खराबी तो यहाँ तक बढ़ी हुई है कि शेक्सपीयर, टेनीसन का जिक्र ही क्या, हम भी बिहारी, देव, व्यास, कालिदास और भवभूति को नहीं जानती। एक तो ग़रीबी और अविद्या के कारण हमारे माता-पिता इस ओर ध्यान ही नहीं देते और अगर सौभाग्य से किसी को इस ओर ध्यान देनेवाले माता-पिता मिल भी जाते हैं तो दस बारह वर्ष में ही हमारा विवाह हो जाता है। पाँच, छः वर्ष गुड़ियों और खिलौने में गये, बाकी के पाँच या छः वर्ष में हम पढ़ ही क्या सकती हैं? नतीजा

---

* अङ्गरेज़ कवियों के नाम हैं।

† A thing of beauty is a joy for ever.

यह होता है कि हमारा मस्तिष्क वृद्धि नहीं प्राप्त करता और इसका फल यह होता है कि पति जी अपने पशु-शरीर के लिए हमारा और मस्तिष्क के लिए दूसरों का साथ ढूँढ़ते हैं या कम से कम उसकी बातों में हमसे अलग रहते हैं। "समं विवाहं मैत्री च" का अर्थ यह समझा ही नहीं गया कि विद्या से भी दोनों एक समान ही नहीं तो कुछ ही कम ज्यादे विभूषित हों। मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि अगर पति एम० ए०, एल-एल० बी० हो तो पत्नी भी एम० ए०, एल-एल० बी० ही हो किन्तु मैं इतने से सन्तुष्ट हो जाऊँगी अगर पति एम० ए०, एल-एल० बी० है तो पत्नी को एम० ए० के विषयों का साधारण ज्ञान हो और अपने विशेष विषयों में वह प्रवीण हो।

मैं आज दिन की शिक्षा प्रणाली के विरुद्ध हूँ। मेरी समझ में बालकों और बालिकाओं के पाठ्य-विषय और क्रम अलग-अलग, दोनों की आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर, निर्दिष्ट होने चाहिए। संसार के अधिकतर विषयों का साधारण ज्ञान दोनों को जरूर होना चाहिए किन्तु इसके सिवाय अपने-अपने विषयों में दोनों को प्रवीण होना चाहिए। स्त्री का हर एक विषय में पंडिता होना जरूरी नहीं है, जरूरी यह है कि उसका मस्तिष्क विद्या द्वारा विकास प्राप्त किया हुआ हो जिसमें अगर किसी बात को वह न जानती हो तो समझदारी के साथ वह उसे समझ सकने की कोशिश कर सके या उसकी बातों को सुन सके और उसमें दिलचस्पी ले सके। सच तो यह है कि "विद्या से माँजे बिना, बुद्धि गहै नहिं ज्ञान"

वह स्त्री अपने पति के मस्तिष्क और हृदय पर कब्जा जमा सकती है जो पति की सहृदय सहचरी बन सके, जो उसके साथ पढ़ सके, जो उसके प्रिय कवियों को, उसके प्रिय काव्यों और विषयों के सम्बन्ध में उसके साथ सहृदयता के साथ बहस कर

सके, और जो उसके शौकों और दिल बहलाने वाली बातों में उसी के समान सरगर्मी और दिलचस्पी से भाग ले सके। अगर पति राजनीतिक जीव है, देश की सेवा का उसने बीड़ा उठाया है, तो पत्नी इतनी तो होनी ही चाहिए कि सभा सुसाइटी का क्रम और हाल उसे मालूम हो, देश और देश-सेवा को वह भी अपना धर्म नहीं तो कर्तव्य समझती हो, देश में बहती हुई लहरों से वह अवगत हो,उनके सम्बन्ध में अपने विचार रखती हो और उनका विनिमय पतिदेव से कर सकती हो। अगर पति सम्पादक हो तो पत्नी में कम से कम इतनी विद्या और हृदय होना ही चाहिए कि पति के लेखों को वह सराह सके, उनके सम्बन्ध में अपना मत प्रकट कर सके, टिप्पणियाँ, कभी-कभी, छोटी-छोटी लिख सके, पुस्तकों की समालोचना कर ले या कम से कम पत्र के कलेवर में स्त्रियों का कालम रचकर पत्र की शोभा बढ़ा दे। अगर पत्नी यह सब या इसी प्रकार की बातें नहीं कर सकती, अगर पति के कामों में वह भाग नहीं ले सकती, और पति के प्रधान कामों से वह अलग सी रहती है तो वह पति की सहचरी नहीं हो सकती, न पति के सुख दुःख और कठिनाइयों में वह हिस्सा ही बटा सकती है और इन बातों का नतीजा यह होगा कि पति की आत्मा की वह अधिकारिणी नहीं हो सकेगी।

बीबी रानी ! इसी लिए, मैंने तुमको शुरू में ही लिखा था कि पढ़ो, पढ़ो, जितना पढ़ सको, पढ़ो और अधिक से अधिक अपने मस्तिष्क की वृद्धि और पुष्टि करो।

मस्तिष्क की वृद्धि परम आवश्यक है। मस्तिष्क का अपने शरीर, अपने चलन, और रहन सहन सब पर भारी प्रभाव पड़ता है, साथ ही रूप यौवन चार दिन की चाँदनी है किन्तु मस्तिष्क का विकास सूर्य के प्रकाश के समान सदा दौर्दण्ड प्रताप से प्रकाशित

होता रहता है। मस्तिष्क और हृदय की सहायता से हम अपने को पति के जीवन का सहारा बना सकती हैं, उसकी छोटी से छोटी बातों से लेकर बड़ी से बड़ी बातों में इस तरह से भाग और सहानुभूति-पूर्ण दिलचस्पी ले सकती हैं कि वह हर बातों में हमारी सलाह का आदी हो जाय और हमसे बिना सलाह किये कोई बात करनी उसे कभी सुहाय ही नहीं। यही नहीं मस्तिष्क और हृदय की सहायता से हम उसके प्रत्येक सुख-दुःख में भीन सकती हैं, और इस तरह से उसके सुख को दूना और चौगुना और उसके दुःख को आधा और चौथाई कर सकती हैं। मस्तिष्क के चमत्कार यह हैं; किन्तु पुरुष समाज की भूल से हमारा मस्तिष्क इस उच्च कोटि का अभिवृद्धि-प्राप्त किया हुआ नहीं होता, फिर भी निराश होने की जरूरत नहीं है। हम सहज बुद्धि, प्राकृतिक झुकाव, साधारण विवेक, प्रेम और सहानुभूति से छलकते हुए सुन्दर माता के हृदय से सफलता-लाभ कर सकती हैं और यह है कि संसार के किसी भी मनुष्य को, जो मनुष्य है, पशु नहीं, अपनी उङ्गली के इशारे से सदा नचाती रह सकती हैं। वेश्याएँ पंडिता नहीं होतीं, वह भी शेक्सपियर और मिल्टन* को नहीं जानतीं, बड़ी पढ़ी-लिखी भी नहीं होतीं, फिर भी उनमें ऐसी अनेक हैं, जो बड़े बड़े विद्वानों को नचाया करती हैं और अपना गुलाम बना कर रखती हैं। इसका गुर क्या है, यह कौन सा जादू है, इसकी चर्चा मैं अब अगले पत्र में करूँगी। आज विलम्ब बहुत हो गया है और आज तुम्हारे जीजा जी के लिए कुछ विशेष व्यञ्जन मुझको तैयार करने हैं। बीबी रानी ! समझती होगी कि चूल्हे, चक्की और अंगीठी के पास मैं काहे को कभी जाती हूँगी किन्तु बात यह नहीं है। एक से एक अच्छे खाद्य पदार्थ मैं बनाना जानती हूं और

---

*प्रसिद्ध अङ्गरेज़ कवियों के नाम हैं।

बनाती हूं । उसको बनाने का अभ्यास बना रहे इसलिए कभी-कभी उनको बनाती भी रहती हूँ यह बात ही दूसरी है कि नित्य ही उनमें अपना समय नहीं लगाती क्योंकि समय को मैं जीवन की बहुमूल्य घड़ियां समझती हूँ, उससे अधिक से अधिक लाभ उठाना मैं अपना कर्तव्य समझती हूँ और इस लिए, अपने लिए, गृहस्थी के लिये, स्त्री-समाज के लिए और देश के लिए जिन कामों को अधिक लाभकर मैं समझती हूँ या जिनके द्वारा मैं खाना बनाने की अपेक्षा समय का अच्छा उपयोग कर सकती हूँ, तुम्हारे जीजा जी की सम्मति से, उन्हीं में मैं अपना अधिक समय लगाती हूँ । अच्छा जाओ, नमस्कार, दूल्हा भाई भी थके माँदे पढ़कर आते होंगे, तुम भी उनके लिए कुछ तैयार कर रखो ।

तुम्हारी
शान्ति

---

*पुरुष बिवाह से केवल एक सखी सहचरी नहीं चाहता, वह चाहता है एक सच्ची हृदय और आत्मा की हिस्सेदार, वह केवल मौज के वक्तों के लिए एक साथिन ही नहीं चाहता, वह चाहता है एक समझदार मित्र जो दुख, सुख में, वर्षा और निदाघ में, सुकाल और अकाल में उसकी पूर्ण सखी और सहचरी हो, वह केवल एक अनुरक्ता, प्रेमविह्वला, प्यार प्राप्त करने के लिए उत्सुक, प्रेममयी स्त्री अपना प्रेम प्रकट करने के लिए नहीं चाहता, जो उसकी वासनाओं की तृप्ति का साधन हो। वह चाहता है एक बुद्धिमती, विवेकयुक्ता सुन्दर, स्वस्थ मस्तिष्क वाली घर की मालकिन।"

---

*"Man wants in marriage not a "pal" but a heart and soul partner, not merely a companion for the gay hours, but an understading friend in foul weather as in fair, not only a fond woman for his caresses but an intellectual mistress of his home."

स्त्री-जीवन का उद्देश्य

तथा

मनुष्य के मस्तिष्क पर अधिकार

शान्ति कुटी
शिमला
३०-८-२७

"कान्ता सम्मतितया उपदेश युजे"

भिन्नो,

दूल्हा भाई सर्वथा तुम्हारे हों, बिना तुम्हारे उन का काम ही न चले, तुम्हारे सुख को ही वह अपना सुख समझें, तुम्हारी इच्छा उनके लिए कानून हो, तुम्हारी कामनाओं की पूर्ति वह अपने लिए धर्म समझें, तुमको प्रसन्न और सुखी रखना वह अपने जीवन का ध्येय समझें, और संसार में अपना सर्वश्रेष्ठ मित्र और साथी वह तुमको ही समझें, यह सब कैसे हो तुम इसका गुर जानना चाहती हो। तुम चाहती हो जानना वह जादू जिससे तुम जितना पानी पिलाओ उतना ही वह पीयें, जो पहिनाओ वही पहिनें, जो खिलाओ वही खायें, और इसके साथ ही साथ तुम चाहती हो कि तुम्हारे अथाह प्रेम के समुद्र में अवगाहन करते हुए वह अपने को धन्य-धन्य समझते रहें और तुम्हारी ही बलैया लेते रहें। तुम्हारी इच्छा है कि वह तुमको दासी, गृहस्थी का प्रबन्ध करनेवाली न समझ कर संसार के समस्त सुखों को देनेवाली और उनके हृदय में उत्तम से उत्तम भावों को जागृत करनेवाली देवी समझें। है न यही बात?

मैं तुमसे पहिले ही कह चुकी हूँ कि इन सब बातों की सिद्धि के जादू का मन्त्र तीन चीज़ों से बना हुआ है, स्नेह और सहानुभूति से छलकता हुआ सुन्दर पवित्र हृदय, स्वस्थ मस्तिष्क और स्वस्थ शरीर। खेद की बात है कि हम लोग इस रहस्य को जानती ही नहीं कि मस्तिष्क का शरीर पर और शरीर का मस्तिष्क पर प्रायः एक समान ही प्रभाव पड़ा करता है। सच तो यह है कि अस्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निवास हो नहीं सकता। इसी सत्य के साथ ही साथ एक दूसरे बड़े सत्य को भी हमको सदा ध्यान रखना चाहिए और वह है यह कि जिस तरह से शरीर को स्वस्थ रखने के लिये शारीरिक कसरत की ज़रूरत है ठीक उसी तरह से मस्तिष्क को स्वस्थ रखने के लिए दिमाग़ी कसरत की ज़रूरत है। मस्तिस्क की वृद्धि दिमाग़ी कसरत से ही हो सकती है और हम को यह सदा याद रखना चाहिए कि अच्छा अभिवृद्धि प्राप्त किया हुआ मस्तिष्क, शरीर को स्वस्थ और जीवन को दीर्घ करने के लिए ही नहीं वरन् शरीर को सुन्दर और आकर्षक बनाये रहने में भी सहायक होता है।

"आज काल के पुस्तकालयों और सस्ती पुस्तकों के समय में, ख़र्च के नाम पर हम लोगों को मस्तिष्क की वृद्धि न कर सकने का बहाना हो भी नहीं सकता। घंटे दो घंटे नित्य क्रम से पढ़ने से हम लोग प्रकृति और जीवन के प्रायः समस्त चमत्कारों को जान सकती हैं, हम सृष्टि और मनुष्य के आदि इतिहास का ज्ञान प्राप्त कर सकती हैं और दुनिया की समस्त आवश्यक बातों के संबन्ध में साधारण आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर सकती हैं।" हम को यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि हम रद्दी कहानियों और गन्दे उपन्यासों में, जो मस्तिष्क को नहीं वरन् इन्द्रियों को प्रसन्न करते हैं, समय नहीं नष्ट करतीं। जो हम पढ़ती हैं और जैसी किताबें हम पढ़ती हैं उन सब का हमारे मस्तिष्क हमारे स्वभाव, हमारे शरीर और

हमारे चरित्र पर भारी प्रभाव पड़ता है। अङ्गरेज़ी में एक कहावत है* एक मनुष्य किन पुस्तकों को पढ़ता है इससे वह जाना जाता है। इसका अर्थ यही है कि जैसी पुस्तकें वह पढ़ेगा वैसे ही उसके विचार होंगे और वैसा ही वह होगा। बीबी रानी! इस लिए प्रत्येक बालक और बालिका को सदा अच्छी पुस्तकों को ही पढ़ना चाहिए। अगर गंभीर और मस्तिष्क से कसरत कराने वाली पुस्तकों से किसी समय जी घबराये और मन बहलाने वाली पुस्तकों को पढ़ने की इच्छा हो तो यात्रा, सैर, प्रकृति सम्बन्धी पुस्तकों या अच्छे नाटकों को, जिनसे मानव प्रकृति का ज्ञान होता है, पढ़ना चाहिए।

तुम सोचती हो कि बार-बार और हर पहलू से मैं सहानुभूति पूर्ण हृदय, स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मस्तिष्क की ही दोहाई दे रही हूं किन्तु यह नहीं बतलाती, कि फिर क्या, इसके आगे क्या और यह सब रखते हुए भी कोई कैसे आचरण कर सफलता प्राप्त करे और इन जुज़ों और चीज़ों को किस तरह मिलाकर रामबाण औषधि का रूप दे। मैं तुम्हारी बेसब्री और उत्सुकता को समझती हूं, किन्तु बीबी रानी, किसी पुरुष के मस्तिष्क और आत्मा पर अधिकार प्राप्त करना उतना ही आसान नहीं है जैसा कि चीज़ों को जमा कर, काढ़ा बनाना और पिलाना, किसी के ज्वर को उतार देना या उसके पेट के दर्द को दूर कर देना। मैं बार-बार उपर्युक्त तीनों वस्तुओं का ज़िक्र करती हूं जिसमें तुम अच्छी तरह समझ लो कि इनमें से किसी एक बात से नहीं वरन् तीनों के सम्मिलित सहस्रों रूपों की सहायता से ही सफलता प्राप्त हो सकती है। तुमको ध्यान में रखना चाहिए कि जब पुरुष किसी स्त्री की प्रशंसा करते हुए उसे मन को लुभाने वाली, बरबस हृदय को आकृष्ट करने वाली,

---

*A man is known by the books he reads.

मन को हरने वाली कहते हैं तो वह उस स्त्री के शारीरिक सौन्दर्य की ही चर्चा नहीं करते वरन् उनका ध्यान उसके शारीरिक सौन्दर्य के साथ ही साथ उसके मानसिक सौंदर्य, उसके स्नेहमय, मधुर सहानुभूति से छलकते हुए हृदय के सौंदर्य की ओर अधिक होता है, और ये उसके मस्तिष्क की खूबियों और प्रीति के भाव की प्रशंसा करते रहते हैं। स्त्री भी जब किसी पुरुष के आकर्षण शक्ति की चर्चा करती है तो उसके शारीरिक सौंदर्य या स्वास्थ्य की अपेक्षा उसके मानसिक सौंदर्य और उसके स्वभावगत गुणों की ओर उसका इशारा अधिक होता है। सच्चे स्थायी प्रेम में हमको सदा ध्यान में रखना चाहिए जादू या आकर्षण इन्द्रियगत, या पशु-वृत्ति ही का नहीं होता। पाशाविक और शारीरिक आकर्षणों के सिवाय और भी अनेक बातें पुरुष और स्त्री को एक दूसरे के निकट खींचने के लिए होती हैं।

यह सच है कि प्रेम सी वस्तु जिसे आज दिन लोग निकृष्ट भाषा में जोश या पाशविक कामना भी कहते हैं, दो प्राणियों के जीवन को सुखी बनाने के लिए बहुत आवश्यक है किन्तु जो प्रेम स्थायी होता है उसमें पाशविक वासना और कामना के सिवाय और भी अनेक बातें होती हैं, उदाहरणार्थ दूसरे के चरित्र और व्यक्तित्व के लिए आदर, स्वभाव और प्रकृति का एक समान होना, मानसिक साहचर्य* अपने प्रेम के पात्र की जीवन-यात्रा को अधिक कष्ट-हीन और सुखमय बनाने की लालसा, उसके लिए खुशी से कष्ट सहने की उत्सुकता और उसके सुख के लिए खुशी से संसार के कठिन से कठिन त्याग करने की वान्छा इत्यादि। पुरुष हर एक स्त्री को, जिसके लिए कभी-कभी वह दीवाने हो जाते हैं प्यार ही नहीं करते। प्रेम, त्याग की अपेक्षा करता है,

---

*Intellectual companionship.

प्रेम अपनी स्वार्थमय वासनाओं को कुचल देने का परामर्श देता है और इन सब के ऊपर प्रेम सदा अपने प्रेम के पात्र की भलाई करने और उसकी हित-कामना में लीन रहता है। सच पूछा जाय तो सच्चा प्रेम वास्तव में जीव की परिष्कृति और संस्कृति करता है, वह उसे पवित्र और उच्चादर्शी बनाता है और उसे देवत्व की ओर ले जाता है। संसार में जो बड़े बड़े वीरता तथा अन्य महत्व के काम आज तक हुए हैं, खोज कर देखा जाय तो सब की तह में प्रेम का सोता ही बहता दिखाई देगा। हम लोगों को इसलिए सदा यह ध्यान में रखना चाहिए कि हम लोग भूल कर इन्द्रियों की चपलता या प्रकृति की दुर्बलता से प्रेम की ज्योति को शिथिल, हीन या मन्द न पड़ने दें क्योंकि अगर हम लोगों ने इसे मन्द या हीन किया, या किसी तरह से इसके पवित्र प्रकाश को धुंधला किया तो अपने सुख और उन्नति को पहाड़ी पर ऊपर चढ़ने के एक बड़े सहारे को हम नष्ट कर देंगो। यहीं अगर हम लोगों ने इसे किसी तरह से ज़लील, हीन या गन्दा किया तो जीवन की ज्योति, और ईश्वर का प्रकाश सदा के लिए गन्दा, हीन और तेजहीन हो जायगा और फिर अन्धकारमय-जीवनयात्रा के पथ को प्रकाशित करने वाली ज्योति सदा के लिए हमारी नज़रों के ओट हो जायगी।"

तुम कहती होगी, एक न शुद दो शुद, एक तो तितलौकी दूजे चढ़ी नीम; स्वस्थ मस्तिष्क, स्वस्थ शरीर, सहानुभूति से छलकते हुए हृदय की चर्चा छोड़ मैं प्रेम की महिमा के गीत गाने लगी। कहती होगी अगर प्रेम ही सब कुछ हो सकता था तो इतना उत्सुक बनाने, बेकरार, बेताब करने और इन्तज़ार कराने की ज़रूरत क्या थी? शुरू में ही मैं ने क्यों नहीं कह दिया कि प्रेम करो, प्रेम से विजय प्राप्त हो जायगी किन्तु मेरा कहना यह है कि बीबी रानी, घबराओ नहीं, आख़िर इतनी बेसब्री क्यों है, पति के मस्तिष्क

और हृदय पर अधिकार प्राप्त करना कोई दाल भात का कवर तो नहीं कि बतला दूँ कि दाल भात को मिला कर चट से निगल लो। मैं तुम से पहिले ही कह चुकी हूं कि इसके लिए स्त्री को अपने जीवन का उत्सर्ग करना पड़ता है, अपने को मिटा नहीं बना देना पड़ता है तब कहीं इतनी बड़ी विजय प्राप्त होती है।

तुम्हारी पेशानी पर बलों को मैं देख रही हूं, तुम्हारी मृग-शावक के समान लजीली आंखों के कोनों में अरुणोदय भी मुझको दिखाई दे रहा है, होठों को भी क्रोध से हिलते और यह कहते मैं सुन रही हूं कि फिर वही बेतुकी, पहेली सी, कौतूहलता, उत्सुकता की वृद्धि करने वाली बात, जिसका न सर-पैर है और न कोई अर्थ ही। अच्छा नाराज़ न हो, लो लिखो नुस्खा और जल्दी से बना कर तैयार कर लो; दूल्हा भाई के आते ही उनको पिला देना, वह तुम्हारे हो जाँयगे, मगर, याद रखना मैं आज उनको भी लिख रही हूं कि तुम से सावधान रहें और तुमको दूध की धोई, निरी गुड़िया और मिश्री की डली ही न समझें।

शीला! तुमको मालूम है कि तुम क्या हो, और जीवन का ध्येय और उद्देश्य क्या है? एक अङ्गरेज़ लेखक ने लिखा है—

*स्त्री मातृभाव की मूर्ति है, माता यशोदा का प्रतिरूप है, वह आत्म-त्याग बालरक्षा और असीम दयालुता की प्रतिमा है।" किन्तु मेरा कहना है कि पूर्ण स्त्री वह है जिस की तेजमयी रचना मनुष्य को चैतन्य रखती है, सुख पहुँचाती है और अपना आज्ञाकारी बनाती है, साथ ही पूर्ण स्त्री वह देवी है जिसकी आत्मा स्वर्गीय-आलोक की झलक से प्रशान्त और निर्मल है।

---

*Woman stands for the maternal spirit, the representation of young Madonna, self sarificing, portecting and exquisitely benign.

कवियों ने स्त्री की महत्ता के बड़े-बड़े सुन्दर चित्र चित्रित किये हैं और मुझको आशा है कि तुमने वह सब पढ़ा भी होगा। वर्ड्सवर्थ कवि ने लिखा है:—

*"उच्च कुलीन-भाव परिपोषित,
पूर्ण सुशील भली नारी।
आज्ञा और चेतावन देकर,
होती सौम्य सौख्यकारी।

इस पर भी वह शांत-प्रभामय,
होती है सुन्दर आत्मा।
रखकर दिव्यालोक लोक में,
रहती मानो देवात्मा"।

उपर्युक्त पंक्तियों में वर्ड्सवर्थ नाम के अङ्गरेजी कवि ने स्त्री का बहुत मधुर रूप चित्रित किया है। यह सब है किन्तु यह हमारे अभाग्य की बात है कि स्त्रियाँ जो वास्तव में प्रकृति की सब से बहुमूल्य वस्तु हैं, जिन पर सृष्टि अवलंबित है और जिनके बिना सृष्टि एक पग आगे नहीं बढ़ सकती अपने जीवन के उद्देश्य को ही भूल बैठी हैं। अगर हम स्त्रियाँ अपने जीवन के उद्देश्य को भले प्रकार जानें और उसकी सिद्धि के अर्थ पूर्ण रूप से प्रयत्न करें तो पुरुष सहज ही में हमारा गुलाम बना रहेगा। तुम पूछोगी कि अच्छा यह उद्देश्य क्या है और मैं तुम को अधिक बेचैन न कर एक छोटे से महा-साधारण किन्तु महा-कठिन शब्द में बतला देती हूं कि स्त्रियों के जीवन का उद्देश्य और संसार के एक

---

*"A perfect woman, nobly planned.
To warn, to comfort, to command.
And yet a spirit, still and bright.
With something of an angle's light".

नहीं समस्त पुरुषों पर अधिकार प्राप्त करने का महा-मन्त्र बड़े मोटे मोटे अक्षरों में **सेवा** है।

बीबी रानी, सेवा में ही मेवा है और विविध प्रकार की सेवाओं की ही सहायता से हम जीव-पुरुष पर अधिकार प्राप्त कर सकती हैं। यह पढ़ कर, मुझ को कोसने लगी होगी, कहती होगी वही दकियानूसी ख्याल; इतनी ही सी बात थी तो इसे बतलाने में इतना नख़रा काहे को था? आदि काल से ही पुरुष-राज में स्त्रियाँ भेड़, बकरी, बरतन भाड़ा, सुख की एक सामग्री ही तो समझी गईं, एकमात्र पुरुषों की सेवा ही के लिए तो उनका जन्म माना गया, आज बीबी जी बड़ी नई और रहस्य की बात सिखाने चलीं तो हेर फेर कर वही जो सृष्टि के आरंभ से ही हम सुनती आई हैं। सेवा, सेवा, बड़े मोटे मोटे अक्षरों में सेवा।※ मैं समझी थी कि स्वतंत्रता का उपदेश देंगी, कुछ आज़ादी के लेक्चर सुनायेंगी, कहेंगी विवाह की प्रथा ख़राब है, स्त्रियों को स्वतंत्र जीविका उपार्जन कर पुरुष से श्रेष्ठ या उसके बराबर की बन कर, उसकी नौकरी करने को नहीं, एक बराबर वाले की भांति एक पट्टीदारिन की भांति, एक बराबर वाले मित्र की भांति विवाह करना चाहिए, सो सेवा का पाठ पढ़ाया जा रहा है। सेवा का अर्थ स्वतंत्रता तो नहीं, गुलामी है?

जहां तक समझती हूं मैंने तुम्हारे विचारों को ठीक ठीक किताब की भांति पढ़ लिया है; किन्तु, बीबी रानी, एक मिनट सब्र करो और सोचो। मैं तुम से इतना ही कहती हूँ कि अगर इस तरह की दलीलें तुम इस तरह से पेश कर सकती हो तो तुम स्त्रीत्व के महत्व और रहस्य को नहीं जानतीं। सेवा से मेरा अर्थ

※"स्त्री प्रेम है, सेवा है, त्याग है, प्रेम उसका सौन्दर्य है, सेवा उसकी शोभा है और त्याग उसकी शक्ति है"

गुलामी या दासता नहीं है। हृदय-हीन सेवा में रत, अनादृत स्त्रियों के संबन्ध में तो कवि की यह उक्ति ही

"अपनी बरबादी से करते हैं, जहां को शाद हम।
बागे आलम में हैं मिस्ले नगहते बरबाद हम॥"

मुझको उपयुक्त प्रतीत होती है। सेवा का अर्थ मेरी राय में दासता नहीं वरन् परमार्थ से प्रेरित किसी महत् उद्देश्य की सफलता के लिए जीवन का उत्सर्ग है। तुम पूछोगी ऐसा ऊँचा उद्देश्य कौन सा है? मेरा उत्तर इतना ही है कि वर्तमान काल के स्त्रीत्व और भविष्य के बच्चों की सेवा से बढ़ कर कौन सा उद्देश्य हो सकता है? यह तो निराशा-जनक रीति से बेतुकी, बेसिर पैर की बात नहीं है, यह तो पहेली के समान कुतूहलता की वृद्धि करने वाली नहीं है?

तुम्हीं बतलाओ (Physically) "शारीरिक जड़ रूप से स्त्री होने का अर्थ क्या है? हम क्या करती हैं, सवाल यह नहीं है? किन्तु क्या प्रकृति का अर्थ यह साफ़-साफ़ नहीं है कि स्त्रीत्व का अर्थ मातृत्व है, और मातृत्व यदि सेवा का सर्वश्रेष्ठ रूप नहीं है तो है क्या? यह भी सोचो कि मानसिक रूप से स्त्री होने का अर्थ क्या है? गृहस्थी का प्रवन्ध, बाल बच्चों की सेवा, भोजन का प्रबन्ध, वसन का प्रबन्ध और कहाँ तक गिनाऊँ कितने प्रबन्ध। एक शब्द में यह सेवा नहीं तो क्या है? अब यह भी बतलाओ (Spiritually) आध्यात्मिक रूप से स्त्री होने का अर्थ क्या है? तनिक भी सोचो तो इसका भी वही अर्थ, अपने को मिटा कर भी दूसरों की सेवा करना। मैं तुमसे सच कहती हूं वही स्त्रियाँ संसार में असन्तुष्ट हैं, और दुखी हैं जिन्हों ने अपने को जाना नहीं, जिन्हों ने अपने को पहचाना नहीं और जो अपने उद्देश्य से दूर हो गई हैं"। एक प्रसिद्ध लेखिका का कहना है कि "जिस तरह से ईश्वर ने प्रत्येक पुरुष के लिये एक ध्येय रखा है ठीक

उसी तरह से प्रकृति का प्रत्येक स्त्री के लिए एक ध्येय है और जो स्त्री यह नहीं समझती कि ईश्वर का वह उद्देश्य और प्रबन्ध केवल सेवा है, वह स्त्री संसार में कभी सुखी नहीं हो सकती"

तुम कहोगी, बीबीजी, माना, सेवा मेवा है, सेवा स्त्रियों के जीवन का उद्देश्य है और सेवा से ही उनको मुक्ति मिल सकती है, मगर इस सेवा के द्वारा ही अगर पुरुष मस्तिष्क और हृदय पर अधिकार मिल सकता होता तो हमारी इतनी बहिनें दुखी क्यों होतीं ? आज लाखों ही हमारी बहिनें दिन रात सेवा में पिसी जा रहीं हैं, उन्हों ने सेवा करते-करते अपने शरीर को ही नहीं अपने को भी मिटा दिया है पर फिर भी तुम से छिपा नहीं कि अपने पतियों के हृदय और मस्तिष्क पर अधिकार उन्होंने प्राप्त नहीं किया, हाँ, यह जरूर है कि जो पति मनुष्य हैं, राक्षस नहीं, वह उनको दया की दृष्टि से देखते हैं, उनकी रोटी, कपड़े, रहने-सहने का प्रबन्ध अच्छा कर देते हैं। क्या तुम्हारी राय में पुरुष के हृदय और मस्तिष्क पर अधिकार प्राप्त करने का उद्देश्य इतना ही है और क्या इतने ही और इसके ही लिए दुनिया भर की झंझटों और परिश्रमों को हमको उठाना चाहिए ? रोटी कपड़ा तो हमारी बहिनें पढ़ लिख कर, कला-कौशल द्वारा या नौकरी कर भी पा सकती हैं ? यह तो बड़ी बात नहीं, अपना नाश कर, रूप बेच कर भी बहुत सी यह प्राप्त कर लेती हैं ।

यदि तुम यह सब सोचती हो तो फिर मैं यही कहूंगी कि तुम्हारे मिजाज में जल्दी बहुत है, नए खून का जोश अधिक है और अभी तक तुमने समझने की कोशिश तनिक भी नहीं की। बीबी रानी ! सेवा का अर्थ दासता या गुलामी निकृष्ट श्रेणी की नहीं है । सेवा एक दासी जो बरतन मलती है वह भी करती है, सेवा एक कहार, जो पानी का ग्लास देता, नहलाता और कपड़े पहिनाता है, वह भी करता है । सेवा एक बहिन भी करती है,

सेवा एक डाक्टर भी करता है, सेवा ही महात्मा जी और मालवीय जी भी करते हैं, सेवा ही पिता पुत्र की और सच्चा राजा प्रजा की करता है, पुजारी भक्त अपने इष्टदेव की मूर्ति की सेवा ही करता है और सेवा का ही एक सर्वश्रेष्ठ रूप माता प्रदर्शित करती है। बीबी रानी, जैसा मैं ऊपर लिख चुकी हूँ, सेवा का काम सहज नहीं बहुत कठिन है। धर्मराज युधिष्ठिर ने जिस समय राजसूय यज्ञ किया था भगवान कृष्ण ने मेहमानों के पैर धोने की सेवा का भार अपने ऊपर लिया था। सेवा के लिए बुद्धि चाहिए, विवेक चाहिए, बल चाहिए और चाहिए सबसे अधिक पवित्र स्नेह-पूर्ण हृदय। तुम भूली न होगी कि मैं शुरू से ही स्वस्थ शरीर, स्वस्थ मस्तिष्क और सहानुभूति से छलकते हुए हृदय की बात कह रही हूं।

सुनो, मैं तुमको बतला चुकी हूं, सच्चा प्रेम अपने प्रियतम के लिए हर तरह से त्याग करने और कष्ट सहने को तैयार रहता है। तुम से मैं यह भी बतला देना चाहती हूं कि सुखमय वैवाहिक जीवन केवल उन पति और पत्नियों को पारितोषिक स्वरूप मिलता है, जो एक दूसरे के साथ पूर्ण सहानुभूति रखते हैं, जो एक दूसरे की इच्छाओं और कामनाओं की पूर्ति के लिए अथक प्रयत्न करते हैं, जो एक दूसरे की कमियों को सदा दया की दृष्टि से देखते हैं, जो दूसरे की गलतियों को सदा क्षमा कर दिया करते हैं और जो भूल कर भी चिड़चिड़ापन और क्रोध प्रदर्शित नहीं करते। प्रेमी के हृदय* का अभी तुमको पता न होगा, प्रेम में मत्त व्यक्ति पागल के समान होता है, वह सदा अपने हृदय से

*मुबारक ने प्रेमी के हृदय की भावनाओं का बड़ा ही सुन्दर चित्र खींचा है। उन्होंने एक प्रेमी के मुख से ईश्वर से यह प्रार्थना कराई है:—

पूछा करता है "मेरा प्रियतम भी क्या इसी सितारे या नक्षत्र को इस समय देख रहा है, क्या वह भी इसी पुस्तक को पढ़ता है, क्या इसके पढ़ने पर उसके हृदय में भी वे ही भाव जोश मारते हैं जो मेरे हृदय में तूफान पैदा कर रहे हैं।" इसका अर्थ यही है कि सफल वैवाहिक-जीवन में स्वभाव, मज़ाक आकांक्षाएँ, जज़बात तथा भावनाएँ एक ही समान होनी चाहिए। दृष्टि कोण में साधारण भेद का रहना नितान्त आवश्यक है किन्तु प्रधान बातों में, जिनका जीवन से घना सम्बन्ध है, मतैक्य ही होना चाहिये और दोनों के जीवन सम्बन्धी साधारण विचार और दृष्टिकोण साधारणतः एक समान होने चाहिए। एक दूसरे के कामों से पूर्ण सहानुभूति, परस्पर सहायता और सहयोग भी वैवाहिक जीवन को सफल और सुखी बनाने में

"पंचत्वं तनुरेतु भूत निवहाः स्वांशेविशन्तु ध्रुवम्
धातारं प्रणिपत्यनम्यशिरसा याचेमेकंवरम्
तद्वापीषुपयः तदीय मुकरे ज्योत्स्ना तदीयांङ्गणैः
व्योम्निर्व्योम्नि तदीय वर्त्मसु धरा तत्ताल वृन्तेनिलः"

"सब का मरना एक दिन निश्चित है। मरने पर शरीर के पाँचों तत्व अलग अलग अपने अपने तत्वों में मिल जायेंगे। मेरी प्रार्थना आप से यही है कि आप कृपा कर ऐसा प्रबन्ध कर दें कि मेरे शरीर के तत्व इस तरह से तत्वों में लीन हों कि जल तत्व उसके उस तलाब के जल में मिल जाय, जिसमें वह स्नान करती है, अग्नि तत्व उस शीशे में जिसमें वह अपना मुँह देखती है लीन हो जाय, आकाश तत्व उसके आँगन के आकाश तत्व में मिल जाय, पृथ्वी तत्व उस पृथ्वी में लीन हो जाय जहां वह चहलकदमी करती है, और मेरा वायुतत्व उस पंखे के वायु में लीन हो जाय जिसे वह झलती है। प्रेमी इस तरह से मिट कर भी प्रियतमा की सेवा ही करने की लालसा रखता है

बड़ा काम करते हैं। सब से महत्व की बात है दोनों का एक दूसरे में पूर्ण विश्वास और दोनों में पूरा समझौता, पूर्ण समति और सहानुभूति।

तुम कहोगी इन बातों से और स्वस्थ मस्तिष्क, स्वस्थ शरीर या सहानुभूति पूर्ण हृदय से क्या सम्बन्ध है। मेरा कहना यह है कि यही तीनों वस्तुएँ हैं जिनकी सहायता से वैवाहिक-जीवन को सफल बनाने के लिए जितनी बातें ऊपर मैंने लिखी हैं सब हो सकती हैं। स्वस्थ मस्तिष्क बड़ा अस्त्र है। सब से पहिले जड़ शरीर जिसकी सहायता से आरम्भ में हम किसी को आकृष्ट करती हैं उसको अधिक से अधिक सुन्दर बनाने में यह हमारी सहायता करता है। दूसरे शरीर का आकर्षण थोड़े काल का होता है, शरीर और रूप जब अपनी आभा को खोना शुरू करते हैं तो मस्तिष्क उनकी आकर्षण शक्ति को दीर्घजीवी करने में सहायक होता है और सबसे महत्व की बात यह है कि रूप केवल मछली के लिए कांटा स्वरूप है, वह मछली रूपी पुरुष को एक बार अटका मात्र लेता है; मछली कांटे के ढीले होने पर या तड़फड़ाने पर किसी समय हाथ से बाहर हो सकती है, मस्तिष्क मछली को सदा के लिए अपने अधिकार में कर लेने में सहायक होता है। मस्तिष्क की सहायता से हम दूसरे के मस्तिष्क और हृदय पर स्थायी कब्ज़ा जमा सकती हैं और फिर वह कभी भी हमारे अधिकार से दूर नहीं हो सकता, क्योंकि मस्तिष्क की सहायता से हम उस पर (Social and moral conquest) सामाजिक और नैतिक दोनों विजय प्राप्त कर सकती हैं। यही नहीं मस्तिष्क की सहायता से हम पति से मानसिक सहानुभूति रख उसे हर समय हाथ में रख सकती हैं।

किसी की सच्ची सहचरी और साथिन बनने के लिए यह परम आवश्यक है कि हम जीवन के प्रत्येक विभाग में उसका साथ दे-

सकें, और उसकी कठिनाइयों और सुख दुख में पूर्ण रूप से हिस्सा बँटा सकें। तुम्हीं सोचो वैवाहिक जीवन को अधिक से अधिक सुखदायी बनाने के लिये क्या उपर्युक्त बातें नितान्त रूप से आवश्यक नहीं हैं और क्या हम दूसरे के जीवन के प्रत्येक विभाग में, उसके प्रत्येक सुख दुःख और कठिनाई में बिना स्वस्थ मस्तिष्क, स्वस्थ शरीर और सहानुभूति-पूर्ण-हृदय के हिस्सा बँटा सकती हैं ?

इस सम्बन्ध में जो कुछ मुझको कहना था मैं कह चुकी, और अब इन तीनों अस्त्रों के प्रयोग की क्रिया साधारण रूप से तुमको मैं बतला देना चाहती हूं। सब से पहली बात यह है कि तुम दूल्हा भाई से प्रेम करो, मैं समझती हूं कि तुम प्रेम करती भी हो, किन्तु अगर न करती हो तो तुम इस कल्पना में सदा अपने को लीन रखो कि तुम उनसे प्रेम करती हो और इस तरह से सदा उनके सुख दुःख को अपना सुख दुःख समझो, सदा उनकी भलाई करने में, सदा उनको साधारण स्थिति से ऊपर उठाने में, सदा उनको श्रेष्ठतर जीव बनाने में और सदा उनको प्रसन्न रखने में प्रयत्नशील रहो। घर को सदा इस तरह हँसती हुई दीवारों का घर बनाये रहो कि बाहर से आने पर, वह अपनी सारी झंझटों को, और दिन भर के काविश और कोफ़्त को भूल जांय। यही नहीं घर में उनको इतना सुख दो कि कहीं बाहर रहें, कितनी ही झंझटों में रहें, वह घर पर पहुँचने को सदा उत्सुक रहें, इस आशा से कि वहां पहुँचते ही सब दुःखों का अन्त हो जायगा, हम को समस्त झंझटों से छुटकारा मिल जायगा और हम स्वर्ग में हो जांयगे। इसका गुर यह है कि उनके आने पर हँसी खुशी की बातें करो, अपनी झंझटों का बखान न करो, नोन तेल लकड़ी की बातें न सुनाओ, न बच्चों या और ही किसी की शिकायत करो, न गृहस्थी का रोना रोओ और न कोई चित्त

को चोट पहुँचाने वाली या फिक्र पैदा करने वाली बातें कहो। तुम को उनके घर पहुँचने पर उनको हँसाना और खिलाना ही चाहिए, उनकी दिन भर के सुख दुःख की बातों को जान कर उनके सुख की बातों में सुख और खुशी प्रकट करनी चाहिये, यह आशा प्रकट करनी चाहिए कि नित्य ही वह इसी तरह से सुखी और सफल होंगे, दुःख की बातों में तुमको सहानुभूति प्रकट करनी चाहिए, उनके दुःख को कम करने की कोशिश करनी चाहिए, यह आशा दिलानी चाहिए कि ईश्वर कृपालु है, वह इस कठिनाई को दूर कर देगा और भविष्य में ऐसे दुःख सामने न आवेंगे। तुमको इस तरह से सदा उन से सच्ची सहानुभूति प्रकट करनी चाहिए कि अपने सुख की बातों को तुमको सुनाने में उनको सुख मिले और वह यह भी समझें कि दुःख की बातों को तुम को सुनाने में उनका दुःख का बोझ हलका हो जाता है और उनका दुःख तुम कम कर देती हो, बँटा लेती हो और दूसरे दिन की जीवन यात्रा के लिए तुम उनको प्रोत्साहन दे अधिक पुष्ट और उपयुक्त बना देती हो। तुम उनको सदा प्रसन्न रख कर सदा उन्नति के पथ पर आगे चलने के लिए प्रोत्साहित करती रह सकती हो।

बीबी रानी, अभी दूल्हा भाई के पढ़ने के दिन हैं, तुमको यह सदा ध्यान में रखना चाहिए कि पढ़ने और परीक्षाओं के पास करने ही में उनका हित है। "वात्स्यायन" ने लिखा है:—

*"ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्याध्ययन करना चाहिए और पढ़ने के पहिले काम वासना में लिप्त न होना चाहिए।"

"कन्दर्पचूड़ामणि" में इसी सम्बन्ध में लिखा हुआ है:—

---

*"ब्रह्मचर्य मे वत्वा विद्याग्रहणात्;
यावत् विद्या न गृह्यते तावत् कामं न सेवेत्"

†जो मनुष्य विद्यादि अर्थ उपार्जन के पूर्व ही काम के सेवन में लीन होता में उसका अर्थ क्षीण हो जाता है अर्थात् वह अर्थ की सिद्धि नहीं कर सकता, इसका फल यह होगा कि वह काम तथा धर्म की सिद्धि भी नहीं कर सकेगा। इसलिए पहले अर्थ के सम्पादन में ही मनुष्यों को तत्पर होना चाहिए। यह भी कहा गया है:—

*"विद्या धर्मयुक्त होनी चाहिए। बिना धर्म के विद्या का बोध नहीं हो सकता।"

इस लिए तुमको इसकी भी फिक्र होनी चाहिए कि उनका ध्यान पढ़ने लिखने में ही अधिक रहे। साथ बैठ गए, अपनी किताब कोई उठा ली, कह दिया आप अपना पाठ पढ़िए, मैं अपना पढ़ती हूं, देखें अपना सबक कौन पहले तैयार कर लेता है। कभी उनकी किताबों को स्वयं पढ़ कर उनको सुनाया करो, कहा करो लो मैं पढ़ती हूं, आप सुनिये और समझते जाइये। कभी उनसे कहा करो अपने पाठ्य-विषय के इतिहास की कोई कथा या अपनी अन्य पुस्तकों की ही कोई कथा तुमको सुनाया करें, तुम उनको याद रख सकती हो और कभी कभी उनके ही सम्बन्ध में उनसे प्रश्न पूछ सकती हो। अगर उनके अध्यापक ने उनको कुछ विशेष महत्व की बातें याद रखने को बतलाई या लिखाई हैं तो उनको तुम उन की कापी में साफ़ लिख कर रख दे सकती हो।

---

†"केवल कामवशत्वे प्रक्षीणार्था न चाप्नुयात्कामम्
धर्मंवेतितदर्जन लक्षण निरतो भवेल्लोकः"

*धर्मंभवन्तु विद्या येन बिना ता न जायते बोधः
सन्तुतर्थोह हेतोरस्यो द्योधोयतः शास्त्रात्"

जीवन के बहुत ही सुखद घण्टे अक्सर वह हुआ करते हैं जो साथ खेलने में बीते हों। खेल कौन सा है यह महत्व की बात नहीं हैं, महत्व की बात यह है कि तुम और दूल्हा भाई उस खेल में थोड़ी देर के लिए संसार को भूल कर तल्लीन हो सकते हो। दूल्हा भाई को गाने बजाने का शौक है, तुम इसमें भी उनके साथ सम्मिलित हो सकती हो। तुम उनसे बाजा बजाना सीख सकती हो, और उनकी ही बताई हुई चीज़ों को उनको सबक की भाँति सुना सकती हो और अपने को तथा उनको प्रसन्न कर सकती हो। थके माँदे आये हैं तो मीठी मीठी, मनहर बातें कर उनके श्रम को हर सकती हो। अगर उनके सर में दर्द है, तो तुम माता के हृदय से एक लेडी डाक्टर या नर्स का रूप धारण कर सकती हो, अगर उनको परेशानी है, तो तुम उसको सहानुभूति से छलकते हुए हृदय से जानने की कोशिश कर, उसको दूर करने की चेष्टा कर सकती हो। कहाँ तक तुम को गिनाऊँ, सहस्रों ही बातें हैं किन्तु तत्व और रहस्य सब का यही है कि उन की प्रत्येक सुख दुःख की बात में तुम दिलचस्पी लो, उस में हिस्सा बँटाओ, उन को हर समय यह अनुभव कराती रहो कि तुम उनकी हर बात में शरीक हो, उनकी भलाई और सुख के लिए तुम्हारा अस्तित्व है, तुम उनके हृदय में सद्भावों को जागृत करने वाली और उन पर सदा संरक्षा का हाथ रखने वाली देवदूती हो और तुम्हीं उनकी लक्ष्मी और गृह की देवी हो।

तुम इस तरह से उनकी हित-चिन्ता में लीन रहो कि तुमसे संसार की अपनी समस्त बातों को पूर्ण विश्वास के साथ वह एक सच्ची सहचरी समझ कर कहते रहें। किसी भी जीव और मानव-पति के हृदय और मस्तिष्क पर स्थायी अधिकार अथवा विजय प्राप्त करने का रहस्य इतना ही है और मुझ को आशा है कि तुम सहानुभूति से छलकते हुए हृदय, स्वस्थ मस्तिष्क और

स्वस्थ शरीर के इसी प्रकार के सहस्रों ही (Permutations and Combinations) जोड़ तोड़ और विभिन्न विभेदों से दूल्हा भाई के हृदय और मस्तिष्क पर पूर्ण रूप से विजय प्राप्त करने में सफल होगी। याद रखो तुम को अपने जीवन में साबित यह करना है कि तुम पत्नी तो हो ही किन्तु इसके साथ ही साथ तुम माता भी हो, सहचरी भी हो, सहयात्री भी हो, उनकी पुजारिन, साथ ही उनकी इष्ट देवी भी हो, उनके ही लिए तुम्हारा जीवन है, उनकी भलाई, और उनकी और उनके बच्चों की सेवा ही तुम्हारे जीवन का ध्येय और उद्देश्य है। बीबी रानी, सहानुभूति से छलकते हुए हृदय और बुद्धि की सहायता से तनिक यह सब कर देखो। पत्थल भी पिघल कर अपने अंगों में पानी की तरह भीन जायगा, दूल्हा भाई का तो कहना ही क्या है, वह तो मनुष्य हैं, हृदय रखते हैं, शिक्षित हैं और बड़े बाप के बेटे हैं।

अब तुम स्वयं देख लो कि जो कुछ मैंने लिखा है उसमें एक भी ऐसी बात नहीं जो एक साधारण स्त्री सहज बुद्धि और साधारण मस्तिष्क के सहारे ही न कर सके किन्तु अगर तुम ज़रा सूक्ष्म दृष्टि से इन सब बातों पर विचार करो तो तुम को मालूम होगा कि इन सब बातों से केवल पति के हृदय और मस्तिष्क पर अधिकार ही प्राप्त नहीं होगा वरन् इनसे स्त्री के जीवन के उद्देश्य, सर्वश्रेष्ट सेवा के रूप की सिद्धि होगी और जितनी सफलता तुम इस कर्तव्य-पालन में प्राप्त करोगी वही होगी तुम्हारी भेट वर्तमान स्त्रीत्व और भावी सन्तानों के विकास के खजाने में।

अब सोचो, यह सब दासता है, गुलामी है, स्वतंत्रता का ह्रास है या यही है स्त्री-जीवन का उद्देश्य, उसका आदर्श और उसका सर्वश्रेष्ठ विकास ?

तुम्हारी—शान्ति

प्रेम की ग्रन्थि

शान्ति कुटी
शिमला
३१-८-२७

वैवाहिक जीवन को सुखमय बनाने और पति को अपना सच्चा साथी, स्थायी प्रेमी और वास्तव में अपना सच्चा सखा और संरक्षक बनाने के लिए जो बातें आवश्यक थीं उन सब को अपनी बुद्धि के अनुसार मैं तुम को लिख चुकी हूँ, मेरा विश्वास है कि मेरे कथनानुसार आचरण करने पर कोई भी स्त्री जो मानवी है, राक्षसी और एक दम कुरूपा नहीं अपने पति को सदा अपना बनाये रहने में सफलता प्राप्त कर लेगी, किन्तु प्रकृति या ईश्वर एक दो बातों के भरोसे नहीं रहा करता और टेनीसन* ने यह एक तथ्य बात ही कही है कि अपने इष्ट की सिद्धि के लिए ईश्वर के पास अनेकों उपाय होते हैं। अगर जो कुछ मैं लिख चुकी हूं उससे भी पति अपने प्रेम में न बँधे तो उसके लिए प्रकृति का एक दूसरा ही प्रबन्ध है। उस प्रबन्ध का नाम है प्रेम की ग्रन्थि या बच्चा।

माता होना पूर्ण स्त्रीत्व, स्त्री जीवन का पूर्ण विकास है। एक लेखक के शब्दों में स्त्री-जीवन में दो सर्वश्रेष्ठ मुसक्यान हैं, प्रथम जब वह अपने प्रेमी के प्रेम को नीरवता के साथ स्वीकार करती है, और ज़बान से कुछ न कह कर केवल होठों को सुखमय मन्द मुसक्यान से कुसुमित कर अपने प्रेमी को अपने सर्वस्व

*एक प्रसिद्ध अङ्गरेज़ कवि।

दान और चेरी होने का विश्वास दिला देती है, दूसरी मुस-क्यान उस की होठों पर उस समय खेलती दिखाई देती है जब बच्चे के होने पर, वह प्रथम प्रथम उसे देखती है और बिना कुछ कहे हुए ही उसे अपने असीम प्रेम और आजन्म स्वार्थ-विहीन सेवा का विश्वास दिला देती है। यह बच्चा पति और पत्नी के प्रेम का विकास और साथ ही उन के प्रेम की ग्रन्थि या बन्धन होता है। दोनों ही अपने बच्चे की सेवा में अपने हज़ारों मतभेदों के रहते हुए भी एक हो सकते हैं, और दिन दिन एक दूसरे के अधिक निकट हो सकते हैं। चतुर स्त्री को इस लिए चाहिए कि वह पति को बच्चे के प्रेम से बाँधे, इस तरह से कि अगर वह उससे भागना चाहे भी तो बच्चे के प्रेम से वह इस तरह बँधा रहे कि भाग न सके। बहुत लोगों का कहना है, कि माता होने पर स्त्री का सौन्दर्य और यौवन उतार की सीढ़ियों पर तेज़ी से ढुलकने लगता है किन्तु मेरा ख्याल यह है कि सुतवती होने पर, और सौर से बाहर होने पर स्त्री का सौन्दर्य और यौवन, मानसिक और शारीरिक दोनों ही, पूर्ण विकास को प्राप्त होते हैं और माता होने पर पहिले की अपेक्षा उसका सौन्दर्य अधिक हो जाता है। जो हो पुत्रप्रसव स्त्रियों के लिए परम प्रसन्नता और साथ ही अत्यधिक कष्ट का भी काल होता है। माता होने पर अक्सर स्त्री अपने पति के प्रेम से, अपनी ही भूलों के कारण दूर भी हो जाती है। वह हज़ारों तरीकों से पति को अपने से दूर कर देती है। चतुर स्त्री को इसलिए चाहिए कि वह सदा इस बात का ध्यान रखे कि माता होने से पति की पत्नी, प्रियतमा और सहचरी होने का कर्तव्य उसका कहीं चला नहीं जाता। उसे इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिए कि जो बातें पति को अपने वशीभूत रखने के लिए वह पहिले करती थी, उनमें वह और भी वृद्धि करे और अपने शरीर, आत्मा और

मस्तिष्क को पहिले की अपेक्षा अधिक आकर्षक, लुभावना, उपयोगी और मनहर बनाने की वह सदा चेष्टा करती रहे। हमारी बहुत सी बहिने यह भूल ही जाती हैं कि अपने बच्चों तथा पति के प्रति उनका यह कर्तव्य है कि वे सदा खुश खुर्रम, चुस्त और तेज बनी रहें और अधिक से अधिक अपने को उपयोगी, आकर्षक और मनहर बनाये रहें। ज्यों ज्यों स्त्री वयस्का होती जाती है उसके पास यौवन और शारीरिक सौंदर्य की शक्ति और पूँजी कम होती जाती है, इसलिए अधिक से अधिक उसे अपनी आत्मा और सौंदर्य को आकर्षक बनाने की हर समय फिक्र रखनी चाहिए। उसको इस समय में विशेष रूप से वात्स्यायन के इस उपदेश को—"समानाश्चस्त्रियः कौशलेनोज्वलतया पाकेन मानेन तथोपचारैरतिशयीत" अपने बराबर की सखी सहेलियों की अपेक्षा वह सदा साफ सुन्दर, शीलवती, बुद्धिमती और पतिभक्ता दिखाई दे"—कभी नहीं भूलना चाहिए। वह सुन्दरी न हो तो कोई चिन्ता नहीं, प्रत्येक स्त्री में एक अवस्था प्राप्त होने पर शारीरिक सौंदर्य नहीं रह जाता किन्तु यह सब होते हुए भी कोई भी स्त्री अपने पति की आंखों में अपने को सदा आकर्षक बनाये रह सकती है अगर वह उन बातों का ख्याल रखे जिनका पिछले पत्रों में मैं जिक्र कर चुकी हूं।

बहुत सी हमारी बहिनें माता होते ही यह समझ लेती हैं कि उनके जीवन के उद्देश्य की पूर्ति हो गई और वह पति की सेवा❀ और अपने सौंदर्य को रक्षा से विमुख हो जाती हैं या उस ओर से लापरवाह और तटस्थ सी हो जाती हैं। इसके कारण धीरे-धीरे वह पति को खो बैठती हैं और नतीजा कुछ दिनों बाद यह

❀"पेड़ काट के पल्लव सींचा" की नीति की भांति ही यह मूर्खतामय है।

होता है कि पति उनसे दूर हो जाता है और वह अपने बच्चे की भी जैसी चाहिए वैसी सेवा नहीं कर सकतीं। मैं तुम से इस लिए बहुत जोरों से यह कहती हूं और इसकी तुम गांठ बाँध लेना कि दूल्हा भाई को जीवन में यह समझने का अवसर न देना कि "नास्ति पुत्र समं रिपु:" पुत्र के समान शत्रु कोई नहीं, पैदा होते ही उसने मेरी पत्नी और सहचरी को ही मुझ से हर लिया। तुम सदा ध्यान में रखना कि पति के अपना रहने पर ही तुम अपनी आत्मा के टुकड़े की अच्छी से अच्छी सेवा कर सकती हो और उसके लिए अपनी और उसकी अवस्था को देखते हुए अच्छा से अच्छा भविष्य-निर्माण कर सकती हो।

हम सब को एक मार्के की बात को और भी ध्यान में रखना चाहिए और वह यह है कि शास्त्रों में स्त्रियों की सर्वश्रेष्ठ प्रशंसा जब की गई है तो पग-पग पर उनको पतिव्रता बताया गया है, शिशुव्रता या शिशुरता या शिशुभक्ता की उपाधि से कभी और कहीं भी उनकी प्रशंसा नहीं की गई।

उपर्युक्त बातों के कहने से मेरा तात्पर्य यह नहीं है कि बच्चे की सेवा श्रेष्ठ से श्रेष्ठ और जीवन देकर भी न की जाय, बच्चा ही घर का उजियाला, प्रकाश और प्रदीप है, उसकी सेवा माता का सर्वश्रेष्ठ धर्म तथा कर्तव्य है, पुत्र से बढ़ कर इस संसार में इहलोक और परलोक में भी सुख देने वाला कोई दूसरा नहीं किन्तु यह सब होते हुए भी मेरा कहना यही है कि प्रत्येक माता को यह ध्यान में रखना चाहिए कि माता होने के पहिले वह पत्नी है और माता होने से वह पत्नी के कर्तव्य को तिलाञ्जलि नहीं दे सकती और अगर वह ऐसी भूल करेगी तो वह संसार में सुखी जीवन वहन नहीं कर सकेगी।

पति भी खुश रहे, उसकी भी सर्व-श्रेष्ठ सेवा होती रहे, साथ ही अपनी आत्मा और हृदय का टुकड़ा बच्चा भी अच्छी तरह से

पलता रहे, यह समस्या चतुर स्त्री के लिये तनिक भी कठिन नहीं। पति अगर लायक हो तो कहना ही क्या, पत्नी की कठिनाइयों को वह स्वयं देखा करेगा, और बच्चे के पालन-पोषण में वह हिस्सा बंटाने लगेगा, स्वयं भी बच्चे में लीन हो जायगा, नहीं तो माता को चाहिए कि पति की अनुपस्थिति में वह बच्चे का भार अपने ऊपर रखे, और उसकी मौजूदगी में वह उसकी सेवा में लीन हो और बच्चे का भार सहारे के साथ पति के काँधों पर रखे रहे। मैंने अनेक स्त्रियों को देखा है जो माता होने पर सब से पहिले गन्दी रहना सीख जाती हैं, माता होने से मानों गन्दी रहने का उनको पट्टा मिल जाता है। वे कहती हैं, बच्चे के पीछे कपड़े साफ़ बचने ही नहीं पाते। यही नहीं अपनी मूर्खता से प्रबन्ध-शक्ति की कमी से और समय का ठीक-ठीक उपयोग और विभाग न रखने के कारण, सारा समय उनका बच्चे और रसोई में बीत जाता है, पति की सेवा उनके लिए इस समय में केवल किसी तरह भोजन बना देने का अर्थ रखती है। बच्चे को भी हँसता हुआ बच्चा वे नहीं बनाये रह सकतीं। शयनागर में इस तरह पहुँचती हैं मानो शयनागार नहीं वह सौरगृह है। इन सब बातों का नतीजा यह होता है कि पतिदेव घर और पत्नी से विमुख हो जाते हैं।

शिशु पालन भी एक कला है और शिशु का भविष्य बहुत कुछ उसी समय निश्चित हो जाता है जब वह मा की गोद में खेलता रहता है या जब वह पलने पर पड़ा हुआ माता की लोरियों को सुनते-सुनते निन्नी करने लगता है! "वात्स्यायन" ने तो लिखा है कि "बालक्रीडकानि" बच्चों को खिलाने की कला भी स्त्री को जाननी चाहिए। किन्तु इन बातों के सम्बन्ध में मैं कुछ लिखना नहीं चाहती, इस विषय की पुस्तकों को पढ़ने से, तथा अपनी विद्या और बुद्धि के सहारे चतुर माता सब कुछ जान और सीख सकती है। मैं शिशु-पालन के सम्बन्ध में केवल दो बातों की ओर

तुम्हारा ध्यान आकृष्ट कर देना चाहती हूं। माता को, बच्चे को नौ मास तक, बाद नहीं, स्वयं अपना दूध पिलाना चाहिए। संसार भर के अन्य लाभों के साथ ही साथ सब से बड़ा लाभ इस से जो होता है वह यह है कि बच्चे को दुग्ध पिलाने से जननेन्द्रिय, जो प्रसव काल के समय अपनी असली अवस्था को खो देती है, फिरो पूर्ववत् ही हो जाती है, साथ ही दूध पिलाने से माता को वही सुख अनुभव होता है जो पति के संसर्ग से और इस तरह से स्वास्थ्य-रक्षा के लिए वह कुछ दिनों तक पति के संसर्ग की मात्रा को एक दम कम कर सकती है। इसके सिवाय जब तक माता बच्चे को दूध पिलाती रहती हैं साधारणतः उसका रजोधर्म बन्द रहता है (यद्यपि इस नियम का अपवाद भी है) और इस कारण से शीघ्र ही गर्भ-स्थिति की संभावना नहीं रहती। शीघ्र-शीघ्र गर्भ स्थिति, जब कि माता को काफ़ी पुष्ट होने का अवसर नहीं मिलता, माता के लिए, उसके पत्नी रूप के लिए, और गृहस्थी और बच्चों के लिए भी विष है। दूध पिलाने के सम्बन्ध में इतना और बीबी रानी याद रखना कि दूध सदा बैठे हुए पिलाना, लेटी हुई या सोई हुई भूल कर भी नहीं। यह अपने और बच्चे दोनों ही के लिए हानिकर होता है।

दूध पिलाने के सम्बन्ध में एक बात और भी प्रत्येक माता को ध्यान में रखनी चाहिए। हर वक्त, जरा बच्चा रोया, उसे चुप करा देने के लिए या बिना किसी निर्दिष्ट नियम के बच्चे को दूध पिला देना ठीक नहीं हुआ करता। वयस-प्राप्त बालक और पुरुष भी बिना किसी नियम के हर वक्त खाते रहने से स्वास्थ्य को ख़राब कर लेते हैं फिर बच्चा तो बच्चा ही होता है। इसलिए चतुर माता को दूध पिलाने के लिए समय निश्चित रखना चाहिये और ठीक समय पर ही बच्चे को दूध पिलाना चाहिये। कुछ लोगों का कहना है कि बच्चे को नियम से दिन रात में छः

बार अर्थात् प्रत्येक चार घंटे पर दूध पिलाना चाहिए। बच्चे के दो मास का होने पर जाँचा हुआ गाय का पवित्र दूध भी कुछ-कुछ पिलाने लगना चाहिए। बच्चे की अवस्था के साथ गाय के दुग्ध में कितना पानी मिलाना चाहिये यह बदलता रहता है। चतुर माता को यह सब पुस्तकों से जान लेना चाहिये। बहुत सी मूर्खा माताएं बच्चे को चुप रखने, उसे सुलाये रहने और गृहस्थी के कामों के लिए समय निकालने की इच्छा से उसे थोड़ी-थोड़ी अफ़ीम दे दिया करतीं हैं। यह बहुत ही हानिकर प्रथा है बच्चे के लिए आगे चल कर यह बहुत हानिकर सिद्ध होती है, इसलिए तुम भूल कर कभी ऐसा न करना। किन्तु यह सब करते हुए तुम इस बात को सदा ध्यान में रखना कि पति-देव के घर आने के समय तुम्हारा घर, पहिले सा ही साफ-सुथरा, हँसता हुआ दिखाई दे, तुम भी साफ सुथरी रहो, मकान भी हँसता हुआ सा रहे, बच्चा भी साफ सुथरा, चाँद के टुकड़ा सा प्रकाश फैलाता बैठा या लेटा रहे, और तुम पति-देव की सेवा उसी तरह करो जिसकी चर्चा मैं पहिले कर चुकी हूँ। सफ़ाई के सम्बन्ध में कितना ही लिखा जाय अधिक नहीं हो सकता और फिर शरीर की पवित्रता, मन की पवित्रता और हृदय की पवित्रता तो स्त्री के हाथ में ज़बरदस्त मनमोहनी बूटी है।

एक बात और कह कर इस पत्र को समाप्त करूँगी। माता होने पर शीघ्र ही पति का संसर्ग अहितकर होता है। पतिदेव और प्रत्येक माता को इस साधारण सी बात को ध्यान में रखना चाहिए कि बच्चे के पैदा होने पर स्त्री के अङ्ग पहिले से ही नहीं रह जाते, प्रसव काल की वेदना और कष्ट से अक्सर स्त्रियों को घाव वगैरह भी हो जाया करते हैं, स्त्री कमज़ोर भी बहुत हो जाती हैं, इन सब कारणों से पति-देव का धर्म है कि और कुछ नहीं तो

कम से कम तीन मास और अच्छा तो यह है कि चार मास तक वह पूर्ण ब्रह्मचर्य से रहें।

बच्चों के सम्बन्ध में एक बात और कह देना चाहती हूँ और वह यह है कि यह समझना कि बच्चा बहुत छोटा है, कुछ समझ नहीं सकता, बिलकुल गलत है। कोई भी बच्चा, कितना ही बच्चा क्यों न हो, श्रेष्ठ मे श्रेष्ठ आदर्श को समझ लेने के लिए छोटा नहीं हुआ करता। बड़ा से बड़ा आदर्श बच्चे के सामने रखा जा सकता है, और उसके अनुसरण के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है, केवल अगर आदर्श उस रूप में उसके सामने उपस्थित किया जाय जिसे वह समझ सकता है। यह नियम कपड़े से लेकर जीवन के श्रेष्ठ से श्रेष्ठ नियम के सम्बन्ध में एक समान ही लागू है। "एक बच्चे को खेलने को अगर साफ सुथरा अच्छा कपड़ा पहिना हुआ गुड्डा दिया जाय और उसे यह बराबर समझाया जाता रहे कि उसके कपड़े को वह गन्दा न करे, और गन्दा होते ही उसका कपड़ा बदल दिया जाया करे तो कुछ ही समय में बच्चा उसी तरह से साफ सुथरे कपड़े पहिनने की इच्छा करने लगेगा और धीरे धीरे गन्दे कपड़ों और गन्दगी से उसे घृणा हो जायगी।" माता पिता को यह भी सदा ध्यान में रखना चाहिए कि वे कम से कम उसके सामने सदा उसी तरह से उठे बैठें और आचरण करें जिस तरह से कि बच्चे को आचरण करते वह सदा देखना चाहते हैं। इन सब बातों में (Example is better than precept) शिक्षा की अपेक्षा उसी के अनुसार आचरण करना अधिक फलप्रद होता है, और मैं आशा करती हूँ कि तुम लोग इस ओर सदा ध्यान रखोगे।

एक बात अन्त में लिखने के लिए मैंने बचा रखी थी और वह यह है कि दूल्हा भाई को तुम इस बात को सदा ध्यान में रखने के लिए कहती रहना कि तुम्हारे साथ वह सदा आदर और प्रेम के

साथ बोलें, विशेष कर बच्चों के सामने इस बात को जरूर ध्यान में रखें। बच्चों में बचपन ही से इस भाव को भर देना चाहिये कि कोई भी स्त्री हो उसके प्रति आदर प्रदर्शित करना पुरुष का कर्तव्य ही नहीं धर्म है। मैं इस बात को बड़े महत्व की समझती हूं क्योंकि मेरा यह विश्वास है कि अगर पुरुष-समाज स्त्रियों का आदर हृदय से करना सीख जाय तो संसार के बहुत से कष्ट आप से आप दूर हो जायँगे। तुम स्त्री हो और स्त्री समाज के प्रति तुम्हारा यह कर्तव्य है कि तुम अपने बच्चों को सदा स्त्रियों का आदर करना सिखाओ और उनके हृदय-पटल पर यह अमिट अक्षरों में अङ्कित कर दो कि *यत्र "नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।"

एक बात और, और केवल एक बात और बच्चों के सम्बन्ध में ध्यान में रखना, उनको सदा (Curious) अनुसन्धानेच्छु अन्वेषणाशक्त, बारीकबीं, चौकस, भेदिया और खोजू बनने को उत्साहित करना और प्रश्न पूछते रहने के लिए उनको सदा प्रोत्साहन प्रदान करना। बच्चों के सम्बन्ध में यह भी याद रखना कि अगर तुम उनकी बढ़ाई करती रहोगी और अच्छे आदर्श उन के सामने रखती रहोगी तो बच्चे सदा अच्छे होंगे और अच्छे बनने का प्रयत्न करते रहेंगे। एक रहस्य की बात यह भी है कि अगर तुम अपने बच्चों का आदर करोगी और उनकी प्रशंसा करोगी तो तुम देखोगी कि दूसरे भी उनका आदर और उनकी प्रशंसा करेंगे।

तुम्हारी
शान्ति

---

*जहां नारियों का आदर किया जाता है वहां देवता वास करते हैं, अर्थात् वहां देवताओं की सदा कृपा रहती है।

लड़का या लड़की

शान्ति कुटी
शिमला
१-६-२७

"अपनी ही यह खता है, हमने है खूब जांचा।
लड़के ढले हैं वैसे, जैसा बना था सांचा ।।"
—अकबर

शीला,

मानव मस्तिष्क ने, तुम से छिपा नहीं, संसार में क्या-क्या किया है। इस ने पृथ्वी, जल, वायु, और आकाश सब पर विजय प्राप्त की है। इसने प्रकृति को अपने वशीभूत करने का हर तरह से और हर प्रकार का आयोजन किया है। रेल, तार, बिना तार के तार, ग्रामोफ़ोन, रेडियो, सिनेमा, वायुयान* जिस ओर नज़र उठाओ मानव-मस्तिष्क की विजय के चिन्ह तुम को दिखाई देंगे। जो जल, थल, और आकाश में अपनी विजय पताका उड़ा रहा है वह अपने ही लड़के और लड़कियों के सम्बन्ध में विवश कैसे रह सकता था ? हम सब आज तक सुनती आई थीं कि लड़के या लड़की का होना ईश्वर की कृपा पर निर्भर है। संसार में एक दृष्टि से सभी कुछ ईश्वर की कृपा पर निर्भर है किन्तु तुम को यह सुन कर आश्चर्य होगा कि मानव-मस्तिष्क ने यह सिद्ध कर दिया है

---

*एक वैज्ञानिक का यह दावा है कि सन् १९३० तक मनुष्य आकाश में नकली परों की सहायता से पक्षियों की भांति उड़ने लगेंगे।

कि लड़का या लड़की पैदा करना सर्वथा पति और पत्नी के अधीन है और वे अपनी इच्छा के अनुसार जब चाहें लड़का और जब चाहें लड़की पैदा कर सकते हैं। इस विषयों के परम पंडित हमारे प्राचीन आचार्यों ने भी, जिन के ज्ञान के सामने आज भी पश्चिमीय विशेषज्ञ अपना सर झुकाते हैं, इस सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा है; किन्तु आज दिन के जर्मनी और अमरीका के डाक्टरों ने तो इस सम्बन्ध में कमाल ही कर दिया है। अङ्गरेज़ी में इस विषय की कितनी ही पुस्तकें प्रकाशित हो गई हैं। कुछ ही काल हुआ जर्मनी मेंस्वभावतः यूरोपीय महाभारत के बाद पुरुषों की जन-संख्या बहुत कम हो गई थी। बिना पुरुषों की बहुतायत के कोई जाति या राष्ट्र बढ़ नहीं सकता, शत्रुओं का मानमर्दन करना तो दूर रहा। डाक्टरों ने एक उपाय निश्चित किया। उस उपाय से २००० दम्पतियों ने काम लिया और समाचार पत्र में पढ़ा है कि एक हज़ार नौ सौ निन्यानवे दम्पतियों को पुत्र उत्पन्न हुआ और एक को कन्या। जैसा कि मैं ऊपर लिख चुकी हूं भारत के ऋषियों ने भी इस सम्बन्ध में बहुतकुछ अनुभव प्राप्त किया था और मैं तुमसे इतना ही कहना चाहती हूँ कि इसके लिए न किसी दवा की ज़रूरत है, न साधु सन्तों या देवताओं की कृपा की।

पुत्र की माता बनने के लिए हमारी कितनी ही बहिनें पागल रहा करती हैं, मंदिरों और मठों की वह फेरी लगाया करती हैं और सिवा बदनामी*और हानि† के वे कुछ नहीं पातीं। कुछ

---

*"पूत मांगे गई, भतार लेती आई" की देश में एक फूहर कहावत भी है।

†२० जनवरी १९२८ को अम्बाला के मजिस्ट्रेट मि० कीलन की अदालत में इन्द्रसिंह नामक एक मनुष्य पेश किया गया। इस मनुष्य पर अभियोग यह लगाया गया था कि अम्बाला के निकटवर्ती एक

औषधियों के विज्ञापन-दाता भी पुत्र पैदा होने की दवा दिया करते हैं, कहते हैं गर्भ-स्थिति होने पर उस औषधि के सेवन से गर्भ से पुत्र ही उत्पन्न होगा। कुछ लोगों का ख्याल यह है कि गर्भ स्थित होने पर बराबर यह सोचती रहने से कि पुत्र हो, पुत्र हो और बालकों की विशेषताओं के चिन्तन से पुत्र पैदा हो जाता

गांव से वह एक विवाहिता युवती को भगा लाया था। इस मामले में युवती ने इस प्रकार बयान किया था।

"मेरे कोई सन्तान न थी। इन्द्रसिंह मेरे सामने साधु का भेष धरे हुए आया और उसने मुझको और मेरी सास को यह विश्वास दिलाया कि यदि मैं अम्बाला के पागेट पार्क के खजुरिया पीर की जाकर पूजा करूँ तो मेरे एक लड़का होगा। साधु की बात मान कर मैं, मेरे पति और मेरी सास खजुरिया पीर की पूजा को गईं। मार्ग में भेषधारी साधु ने कहा कि अगर पूजा के समय कोई दूसरी स्त्री साथ होगी तो पीर की पूजा से कोई लाभ न होगा। यह कह कर उसने मेरी सास को वापिस भिजवा दिया और कुछ दूर चल कर मेरे पति को पूजा के लिए आवश्यक कोई चीज लेने गांव वापिस भेज दिया। इस प्रकार इन्द्रसिंह अकेला रह गया और मुझे छुरा दिखा कर अम्बाला छावनी चलने की धमकी देने लगा। वहाँ पहुँच कर उसने मुझे दो मुसलमान दर्जियों की सहायता से एक कमरे में बन्द कर दिया और फिर मेरी बेइज्जती की। तीन दिन बाद वह मुझे एक बन्द तांगे में चौधरी छजिया की मस्जिद में मुसलमान बनाने के लिए ले गया। इन्द्रसिंह के एक मुसलमान साथी के साथ मेरी शादी करना तय हुआ, परन्तु शादी होने के पहिले ही मुझे मेरा पति, जो मेरी तलाश में छावनी में घूम रहा था, दिखाई दिया। उसे देख कर मैं चिल्लाई और इसी तरह मैं बच आई और इन्द्रसिंह गिरफ्तार किया गया।"

है किन्तु यह सब गलत है। मैं तुमसे यह भी कहना चाहती हूं कि पुत्र देने वाले साधु महन्तों की भांति यह पुत्र देने वाले वैद्य भी ठग ही हैं। तुम इसे वेद-वाक्य ही समझना कि जिस समय गर्भाधान होता है उसी समय यह तय हो जाता है कि गर्भ पुत्र का है या कन्या का और संसार की कोई भी ताकत उसमें किसी तरह का परिवर्तन नहीं कर सकती। मैं तुमको यह भी बतला देना चाहती हूं कि गर्भ पुत्र का हो या कन्या का यह सर्वथा पति-पत्नी के आधीन है और इसके विरुद्ध कोई कुछ कहे तुम कभी मत विश्वास करना।

गर्भवती माता के रहन-सहन और आचरण का गर्भ के बच्चे की प्रकृति पर प्रभाव ज़रूर पड़ता है, किन्तु एक बार गर्भ-स्थित होने पर पुत्र को कन्या, कन्या को पुत्र नहीं बना सकती।

तुम ने सुना होगा कि बड़ों का कहना है कि बच्चे की शिक्षा माता के उदर से ही आरम्भ होती है। यह बात बिलकुल ठीक है। गर्भवती माता जो कुछ करती है, जो पढ़ती लिखती है, जैसे आचरण करती है सब का प्रभाव बच्चे पर पड़ता है। तुम ने अभिमन्यु की कथा पढ़ी ही है। अर्जुन ने गर्भवती सुभद्रा का दिल बहलाने के लिए एक दिन रात्रि में व्यूह की रचना समझाई थी, सुभद्रा कथा सुनते सुनते सो गई थी। अभिमन्यु गर्भ में था, और जो सुभद्रा ने सुना था उसने भी सुन लिया और उसी की सहायता से महाभारत के युद्ध में द्रोणाचार्य के रचे हुए व्यूह को उसने तोड़ा। यूरोप के सब से बड़े सैनिक नेपोलियन के सम्बन्ध में भी एक ऐसी ही कथा प्रसिद्ध है। जिस समय नेपोलियन माता के गर्भ में था, नेपोलियन के पिता चार्ल्स नेपोलियन विदेशी आक्रमण-कारियों से स्वदेश की रक्षा करने के हेतु वकालत छोड़ सेना में सम्मिलित हो गए। आक्रमण कारी फ्रेंच सेना विजय पर विजय प्राप्त करती, ग़रीब कारसिकनों को एक किले से दूसरे किले

में खदेड़ती, बढ़ती जाती थी। नेपोलियन का पिता भी छोटी सी सेना के साथ ही साथ भागता फिर रहा था। नेपोलियन की माता लतीशिया भी अपने पति के साथ ही एक जगह से दूसरी जगह बराबर भाग रही थी और इसी समय में १५ अगस्त १७६६ को नेपोलियन का जन्म हुआ। यह प्रत्यक्ष है कि माता-पिता की मानसिक और शारीरिक स्थिति का बच्चे पर पूरा असर पड़ा। माता लतीशिया, साहसी स्त्री थी, वह सदा घोड़े पर सवार पति के पीछे रहती थी, वह स्वयं सैनिकों की कवायद वगैरह देखती थी, और मेरा कहना यह भी है कि आक्रमणकारी सेना के भय से एक किले से दूसरे किले में सदा भागती रहने पर सब से मधुर कामना उसके हृदय की यही रही होगी कि कोई ऐसा सेनानी होता जो आक्रमणकारी सेना को हराता और देश की रक्षा करता। एक साधारण वकील के घर में जन्म लेकर नेपोलियन के इतने बड़े सेनानी होने और फ्राँस का सम्राट् बन जाने की बात इसी तरह से समझ में आ जाती है। महाभारत की धृतराष्ट्र, पांडु और विदुर के जन्म की कथा हमको यह भी बतलाती है कि गर्भाधान के समय माता के आचरण का प्रभाव सन्तान की प्रकृति और शरीर पर भी पड़ता है। तात्पर्य यह है कि गर्भ के बच्चे के रूप और प्रकृति को गर्भवती माता जैसे चाहे बना सकती है। वह हँसने वाली और बराबर खुश रहने वाली होगी तो बच्चा भी सदा हँसने वाला पैदा होगा, वह चिड़-चिड़ी रहेगी, बच्चा रोने वाला और चिड़-चिड़ी प्रकृति का होगा। यही नहीं जो आदर्श गर्भवती माता अपने सामने रखेगी और जिसका वह अनुसरण करेगी बच्चा भी उसी आदर्श का पुजारी और पथानुयायी होगा। अगर कोई माता चाहे कि उसका पुत्र महात्मा गांधी के समान हो तो गर्भवती होने के काल में महात्मा जी के चित्र को सदा अपने सामने उसे रखना चाहिए, चित्र

कागज़ी ही नहीं, उनके रूप का ही नहीं, वरन् उनके असली रूप आत्मा और चरित्र का। हर समय महात्मा जी के चरित्र का चिन्तन, उनका गुण-कीर्तन, आज कल जो वह अपनी आत्म-कथा लिख रहे हैं, उसका पठन और मनन, उनके आदर्शों का अनुसरण और उनके नित्य के जीवन क्रम का अनुकरण यह सब सहज ही में उसकी कामना की सिद्धि में सहायक होगा। गर्भवती स्त्री को इस लिए सदा प्रसन्नमुख, साफ़-सुथरी, पवित्रात्मा ही बनी रहनी चाहिए, साथ ही उसको आदर्श महापुरुषों के जीवन-चरित्र और आत्मकथा पढ़नी चाहिए। हमको यह याद रखना चाहिए कि बच्चे की प्रकृति हम जैसी चाहें बना सकती हैं, गर्भ-स्थित होने के पहिले हम यह भी कर सकती हैं कि लड़का हो या लड़की किन्तु एक बार गर्भ-स्थित हो जाने पर लड़के को लड़की बना देना या लड़की को लड़का बना देना असम्भव है और इसलिए तुम इस सम्बन्ध में देव-देवियों या साधु महन्तों की अपेक्षा अपनी ही बुद्धि और मस्तिष्क की पूजा करना अधिक लाभकर समझना।

गर्भवती की चर्चा आगई है इसलिए गर्भवती माताओं के कर्तव्य* के सम्बन्ध में भी कुछ लिख देना चाहती हूं। गर्भवती

---

*आचार्यों का कहना है कि "गर्भवती स्त्री को चाहिए कि वह प्रथम दिन से प्रसन्न चित्त, पवित्र और अलंकृत हो कर सुन्दर वस्त्र पहिन शान्ति कर्म और मंगलजनक कार्य करे, एवं देवता, ब्राह्मण और गुरु के प्रति श्रद्धान्वित बने। मलिन, विकृत और हीन शरीर को कदापि न छूये। दुर्गन्धि-ग्रहण, दूषितद्रव्य दर्शन और उत्तेजक-वाक्य परित्याग करे। शुष्क, बासी और देर से पचने वाला भोजन न करे। टहलने के लिए बाहर जाना, शून्य घर में रहना, श्मशान में जाना, वृक्ष पर चढ़ना, क्रोध और भय करना और बोझ उठाना तथा ज़ोर से बोलना इन सब को उसे छोड़ देना चाहिए। ऐसा

स्त्री को किन नियमों का पालन करना चाहिए, कैसे रहना चाहिए ,क्या खाना चाहिए गर्भवती माता की दिनचर्या क्या हो, इस बारे में इस सम्बन्ध की पुस्तकों से बहुत कुछ

तेल कदापि सेवन न करना चाहिए जिससे गर्भ नष्ट हो, साथ ही शरीर को किसी प्रकार का कष्ट नहीं देना चाहिए। जो अधिक ऊँचा न हो अथवा जिस से किसी प्रकार की बाधा न पहुँचे ऐसी शैया और मुलायम बिछौनों को व्यवहार में लाना उत्तम है। तृप्ति-जनक, द्रव, मधुर, रस-प्रचुर, स्निग्ध, दीपनीय और सुसंस्कृत अन्न खाना चाहिए। विशेषतः गर्भवती स्त्री को प्रथम, द्वितीय और तृतीय मास के प्रायः मधुर और शीतल चीजों को ही खाना चाहिये। तृतीय मास में साठी चावल का भात दूध के साथ, चतुर्थ मास में दधि के साथ और पञ्चम मास में घी के साथ खाना चाहिए। चतुर्थ मास में दूध और मक्खन के साथ तृप्तिकर अन्न, पञ्चम मास में दूध और घी अन्न, छठे मास में गोक्षुरक सिद्ध क्वाथ घी के साथ सेवन करना लाभदायक है। सप्तम मास में पृश्निपर्णी आदि सिद्ध कर के घी के साथ खाना चाहिए। ऐसा करने से गर्भ परिपुष्ट होता है। अष्टम मास में बेर के जल के साथ बला, अतिबला, शतपुष्प, तिलकुटा, दूध, तैल, नमक, मदनफल, मधु और घी मिला हुआ अन्न भोजन करना चाहिए। इससे पुराने मल की शुद्धि और वायु का अनुलोमन होता है। इसके बाद दूध, मधुर और कषाय द्रव्य सिद्ध कर के तेल के साथ शरीर में लगाने से वायु सरल होती है और उपद्रव शून्य होकर के प्रसव कष्ट हीन होता है।"

काश्यप मुनि का मत है—

"गर्भिणी को हाथी; घोड़े, पहाड़ तथा अट्टालिका आदि पर चढ़ना, व्यायाम करना, जोर से चलना, शकट का चढ़ना, शोक, भय, देर से पचने वाला भोजन, मैथुन, दिन में सोना, रात में

जाना जा सकता है और प्रत्येक माता को गर्भवती होने के पहिले उन नियमों को जान लेना चाहिये। इस सम्बन्ध की बातें अगर लिखना भी चाहूं तो यह पत्र न होकर पुस्तक हो जायगी। मैं इस लिए केवल दो चार इस सम्बन्ध की आवश्यक बातों को बता कर ही सन्तोष करूँगी। सब से

जागना ये सब बातें छोड़ देनी चाहिए। स्कन्द पुराण में लिखा है कि गर्भिणी स्त्री अपने पति की आयु की बृद्धि करती है। इसी से उसको हरिद्रा, कुंकुम, सिन्दूर काजल, कंचुकी, ताम्बूल, सुन्दर गहने, बाल संवारना, चोटी बांधना और हाथ तथा कान में गहने पहिनना छोड़ना उचित नहीं। बृहस्पति ने बतलाया है कि गर्भिणी को छठे तथा आठवें महीने में खासकर आषाढ़ मास में यात्रा न करनी चाहिए। "मुहूर्त दीपिका" और "काल-विधान" में लिखा है कि क्षौर कर्म, शावानुगमन, युद्धादि स्थल को गमन, बहुत दूर जाने, समुद्र यात्रा करने से पति की आयु कम होती है।

गर्भिणी जो जो भोग करना चाहती हो उसे न देने से उसे गर्भ की पीड़ा उठती है और अभिलाषा पूर्ण हो जाने से वह गुणवान पुत्र को जन्म देती है। इच्छा के अनुसार खाने को न मिलने से गर्भिणी अपने आप चौंक पड़ा करती है। गर्भिणी की जिस इन्द्रिय की इच्छा पूरी नहीं होती सन्तान की उसी इन्द्रिय में पीड़ा उठा करती है। राज-दर्शन की इच्छा होने से सन्तान भाग्यवान और धनवान होती है। वस्त्र भूषण की इच्छा होने से सन्तान मनोहर और सुन्दर वस्त्र-प्रिय होती है। आश्रम देखने की इच्छा होने से सन्तान धर्म-प्रिय और संयतचित्त होती है। देवप्रतिमादि की इच्छा होने से धर्म परायण।... देवता ब्राह्मणादि में भक्ति तथा श्रद्धा होने से शुद्धाचरणी तथा दूसरे के साथ हित-साधन में निरत रहने से अति गुणवान प्रसव करती है। इसके विपरीत करने से सन्तान गुणहीन होती है"।

पहिले गर्भवती स्त्री को यह जानना चाहिए कि गर्भवती होने पर प्रथम तीन मास में अधिकतर स्त्रियों का जी मचलाया करता है, उलटी की आशङ्का हर समय होती रहती है। तुमको यह जानना चाहिए कि प्रसवकाल की वेदना को कम करने के लिए यह प्रकृति का प्रबन्ध है, या यूँ समझ लो कि माता बच्चे को पैदा कर सकने में समर्थ हो इसीलिए उसका जी हर समय मचलाया करता है। मतली के कारण धीरे धीरे जननेन्द्रिय और गर्भाशय ढीला और बड़ा हो जाता है। एक बात और बतला दूँ उलटी होने से प्रायः जो कुछ भोजन किया जाता है निकल जाया करता है। हमारी सखी सहेलियाँ ऐसे समय में उपदेश किया करती हैं कि अब दो जीवों के लिए भोजन किया करो, जो कुछ निकले उसकी पूर्ति होती रहे और तुम्हारा शरीर भी कमज़ोर न होने पाये। यह बिलकुल गलत और हानिकर सलाह है और इसे तुम कभी मत मानना। चार मास में बच्चा करीब पाव भर का ही वजन में होता है, इससे यह प्रत्यक्ष है कि उसके पोषण में अधिक अन्न की आवश्यकता नहीं होती। माता को भूख कम लगती है, इसका कारण यही रहता है कि उसकी तबीयत ठीक नहीं रहा करती। वह चलती फिरती* कम है और इसलिए भी सूक्ष्म मात्रा में ही उसे अन्न की ज़रूरत होती है। गर्भ के प्रथम तीन-चार मास में, कम से कम आवश्यकता के अनुसार, खाना ही अच्छा होता है। जैसा कि मैं किसी पत्र में लिख चुकी हूं, सुबह दूध पीना, फल खाना इस काल में अधिक लाभकर होता है। हाँ, इस समय में

---

*गर्भवती स्त्री को दिन में भोजन के बाद एक घंटा जरूर लेट लेना चाहिए, साथ ही उसे बच्चा होने के दिन तक बराबर चलती फिरती और गृहस्थी का साधारण काम. जो वह करती रही हो, करती रहना चाहिए।

इमको मिठाई, मिर्चा, गर्म मसाले की चीज़ों को नहीं खाना चाहिए।

जो प्रथम बार ही माता होने वाली हो उस स्त्री को यह भी चाहिए कि गर्भवती होने पर प्रथम तीन मास वह बहुत ही साव-धानी से रहे। अच्छा तो यह है कि प्रत्येक मास वह एक चतुर लेडी डाक्टर को बुलाकर गर्भाशय की परीक्षा करा लिया करे और मास में एक बार मूत्र की भी परीक्षा किसी डाक्टर के पास भेज कर करा लिया करे। तनिक सी भी कोई गड़बड़ मालूम होने पर तुरन्त ही उसे लेडी डाक्टर की शरण लेनी चाहिए। मतली अगर तीन मास के बाद भी जारी रहे तो भी उसे डाक्टर की शरण लेनी चाहिए। तुमको यह भी मालूम होना चाहिए कि इतना ही नहीं है, कि तुम जैसा चाहो अपनी इच्छानुसार पुत्र या कन्या को उत्पन्न करो, और अपनी इच्छानुसार ही उसकी प्रकृति बना दो, तुम साधारण रीति से बच्चे के पैदा होने के समय का भी अन्दाजा लगा सकती हो। रजोधर्म जिस मास में बन्द हुआ हो, उस मास की पहिली तारीख से नौ मास और एक सप्ताह बाद बच्चा साधारण रीति से पैदा होना चाहिए। मोटे तौर से गर्भाधान के २७५ दिन बाद बच्चे का जन्म होता है। एक हिसाब यह भी है कि पिछले रजो-दर्शन के दिन से २८० दिन जोड़ लिए जायँ या पिछले रजोदर्शन के बाद स्नान के दिन से २७६ दिन*। तुमको यह भी मालूम होना

---

*प्रसवकाल जानने का एक उपाय यह भी है कि पिछले रजोदर्शन का अङ्गरेजी तारीख़ में सात दिन जोड़ दिये जांय और उस दिन से पीछे की तरफ़ तीन मास जोड़ लिये जांय, प्रसव की तिथि मालूम हो जायगी, शर्त इतनी है कि पिछले तीन मास में अगर फरवरी का मास पड़ता हो तो सात दिन के बजाय नौ दिन जोड़ने चाहिएँ। उदाहरणार्थ

चाहिए कि गर्भ-स्थित से ६ सप्ताह या अधिक से अधिक आठ सप्ताह में बच्चे के सब अङ्ग, निस्सन्देह ही सूक्ष्म रूप में तैयार हो जाते हैं। इसका अर्थ यह है कि माता को जिस समय यह निश्चित होता है कि वह गर्भवती है बच्चे के अंग प्रत्यङ्ग उस समय तक तैयार हो चुके होते हैं। गर्भवती स्त्री को लघुशंका की बारबार आवश्यकता प्रतीत होती है यह प्राकृतिक है किन्तु यदि लघुशंका करते समय उसे पीड़ा, कष्ट या जलन प्रतीत हो या उसे रक्त दिखाई दे तो उसे एक चतुर लेडी डाक्टर से तुरन्त सलाह लेनी चाहिए। गर्भवती स्त्री और उसके पति को एक बात को और भी ध्यान में रखना चाहिए। गर्भ-स्थित होने पर अच्छा तो यह है कि दोनों ब्रह्मचर्य का पूर्ण रूप से पालन करें, किन्तु मानव प्रकृति को देखते हुए यदि यह असम्भव हो तो पति-देव को यह ख्याल रखना चाहिए कि पाँच मास का गर्भ हो जाने पर पति का संसर्ग सर्वथा हानिकर होता है। गर्भ रहने के प्रथम और द्वितीय मास में भी पति का संसर्ग हानिकर होता है, इसलिए पति-देव को इस काल में भी अति सावधान रहना चाहिए। गर्भवती स्त्री के सम्बन्ध में और कुछ मैं कहना नहीं चाहती, हां इतना जरूर कह देना चाहती हूं कि एक गर्भवती स्त्री को शरीर और

मान लो कि पिछला रजोदर्शन दसवीं अप्रैल को हुआ था, नौ दिन जोड़ने से उन्नीस अप्रैल की तिथि निकली, तीन मास घटाने से उन्नीस जनवरी प्रसव की तिथि हुई। इसी के एक दो दिन इधर या उधर प्रसव ज़रूर होगा। बिलकुल निश्चित समय कदाचित प्रकृति के प्रबन्ध से सहसा इसीलिए नहीं मालूम होता कि पहिले ही से माता उस दिन भय से भरी हुई न रहे। प्रसव काल जानने का एक उपाय और भी है और वह यह कि पिछले रजोदर्शन की तारीख़ में आठ दिन और जोड़ दे और इस दिन से नौ मास आगे गिन ले।

मस्तिष्क से सदा स्वस्थ और प्रसन्न रहना चाहिए। माता के स्वास्थ्य का बच्चे के स्वास्थ्य पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।

एक बात और है, प्रसव-वेदना वास्तव में स्त्री प्रसव-काल में मृत्यु के निकट पहुँच कर ही वापस आती है। यह कष्ट अधिकतर हमारे स्वास्थ्य की हीन दशा और हमारे वर्तमान रहन-सहन के कारण होता है। ग्रामों में अक्सर ऐसी स्त्रियाँ देखी गई हैं जो बच्चा होने के दिन तक अपनी साधारण दिनचर्या के अनुसार ही काम करती रहती हैं। यह भी देखा गया है कि जंगलों में लकड़ी लेने घास काटने वह गई हैं, और अकेले में वहीं उनको बच्चा हो गया, और बच्चे को झाबे में सर पर रख वह घर आ गईं। हम स्वास्थ्य-विहीन माता-पिता की सन्तानों को यह गौरव नहीं प्राप्त हो सकता किन्तु विज्ञान और मानव-मस्तिष्क ने इस संबन्ध में भी बड़ा काम किया है।

हमारे देश में हमारा राज्य नहीं, हम गुलाम जाति की हैं, हमारे सुख-दुख की चिन्ता दूसरों को वैसी ही नहीं हो सकती जैसी अपने को होती, इसीलिये और इसलिए भी कि हम में शिक्षा का अभाव है, हम आन्दोलन नहीं कर सकतीं, हमारे कष्टों को दूर करने के लिए तथा हमारी सहायता के लिए वैसे ही आयोजन नहीं हैं जैसे कि पश्चिमीय देशों में वहाँ के निवासियों के सुख और आराम के लिए हैं। पश्चिमीय देशों में प्रायः हर शहरों में (Maternity homes) सूतिका गृह और (Clinics) क्लिनिक्स हैं। इनमें गर्भवती स्त्रियाँ बच्चा होने के महीनों पहिले जाकर रह सकती हैं। वहां उनके नियमानुसार और सुख से रहने का पूरा प्रबन्ध रहता है। यही नहीं प्रसव-काल की वेदना को एकदम दूर कर देने का भी वहां आयोजन रहता है। इस प्रबन्ध का नाम है (Twilight sleep) "ट्वाईलाइट स्लीप" जिसे मैं सुख-निदिया के नाम पुकारती हूँ। दवा के प्रयोग से स्त्री बच्चा होने के

समय एक दम अज्ञात दशा में सोती रहती है, बच्चा कब हुआ इसका उसे पता भी नहीं चलता, बच्चा हो जाने के बाद, दाइयां उसका नारा वारा काटने और उसे साफ़ करने, नहला देने और कपड़े पहिना देने के बाद, माता की सुख-निंदिया को भंग कर देती हैं और तब वह बच्चे को देख करमा आनन्द में लीन हो जाती है। शहर की म्युनिस्पैलिटियां चाहें तो इस का प्रबन्ध कर सकती हैं नहीं तो दानियों और धर्मिष्ठों के इस देश में लक्ष्मी के कृपा-पात्र दानी लोग भी अपने अपने शहरों में इसका प्रबन्ध, कर हम ग़रीबों के गरीब नेवाज़ बन सकते हैं।

हमारे ऋषिगण इस प्रकार की विधियों को "सुख-प्रसव-विधि" के नाम से पुकारा करते थे। "कामसूत्र", "अनङ्ग रङ्ग" तथा "रतिरहस्य" में भी कुछ ऐसी विधियों का वर्णन है। मैं तुम्हारे कौतूहल की शान्ति के लिए केवल निम्नलिखत—

"मातुलुङ्गम् मधूकोत्थम् चूर्णम् मधुघृतान्वितम् पीत्वा सूते सुखम् नारी शीघ्र मेव न संशयः गृहधूमम् समादाय पिवेत् पर्युषिताम्भसा या सा सूते सूखेनैव शीघ्रमेव वराङ्गना रविवारे गृहीतस्य गुञ्जा मूलस्य बन्धनात् नील सूत्रैः कटौ मूर्ध्नि जायते प्रसवो द्रुतम्"

(अनङ्ग रङ्ग)

"सरुदनतया शिखिशिखया पुत्रञ्जाती कुमारिके मिलते गुह्ये निधाय धत्ते सुख सूतम्मूढ़-गर्भाऽपि"

(रति रहस्य)

सुख-प्रसव-विधियों को उद्धृत कर देती हूं। इनका अर्थ मैं तुमको नहीं बतलाती क्यों कि जब तक हमारे आधुनिक विद्वान् इनके सम्बन्ध में खोजपूर्वक् ज्ञान न् प्राप्त करें और इनकी सत्यता को प्रमाणित न करें, इनका प्रयोग कैसे किया जा सकता है? मेरे कहने का अर्थ यह नहीं है कि विधियाँ गलत हैं, किन्तु इन

विधियों में कठिनाई यह है कि एक दो औषधियां जो कही गई हैं सहज में इस समय मिलती नहीं।

यह सब तो विपयान्तर की चर्चा थी किन्तु गर्भ में लड़के और लड़कियों की ही बात है, इसीलिए उपर्युक्त बातों का उल्लेख मैंने ज़रूरी समझा। अब तुमको लड़का या लड़की के सम्बन्ध की बातें बतला देना चाहिती हूं। हमारे ऋषियों का कहना है कि रजस्वला होने के बाद पन्द्रह दिनों तक में अगर गर्भाधान ताख़ तिथियों में होगा तो कन्या होगी और अगर जूस तिथियों में तो गर्भ से लड़का पैदा होगा। इन लोगों की राय में रजोधर्म के प्रथम पन्द्रह दिन छोड़कर बाकी के पन्द्रह दिनों में अगर पति-संसर्ग हो तो गर्भ-स्थिति की सम्भावना बहुत कम रहती है। इसी कारण से जो लोग बच्चे नहीं चाहते वे रजोधर्म के प्रथम पन्द्रह दिवस में संसर्ग बचाते हैं। किन्तु इस सम्बन्ध में हमारे प्राचीन विद्वानों में और कुछ आधुनिक विद्वानों में बड़ा मतभेद है, साथ ही, इन आधुनिक विद्वानों में और बहुत से विज्ञान के महारथियों में इस सम्बन्ध में बहुत मतभेद है। एक बात और है हमारे ऋषियों के मत में एक स्त्री का काम चन्द्रमा की कला के साथ अंगों में घूमता रहता है, आज एक अङ्ग में है तो कल दूसरे अङ्ग में होगा, परसों तीसरे में किन्तु कठिनाई इसमें यह है कि हम पड़ीवा या प्रतिपदा किसको मानें। अगर प्रतिपदा तिथि को ही काम की भी प्रतिपदा समझ लें तो संसार भर की समस्त स्त्रियों के प्रत्येक दिन एक ही अङ्ग में काम होगा और एक समान ही वह आचरण करेंगी। यह एक व्यर्थ की बात है और ऐसा होता नहीं यह प्रत्यक्ष सिद्ध बात है क्योंकि संसार की समस्त स्त्रियां एक ही भाव से एक ही आकांक्षा से एक समय में प्रेरित नहीं होतीं। हो भी कैसे सकती हैं जब कि वह एक ही जीव नहीं हैं, जब कि एक दूसरे से सब भिन्न हैं और जब कि अपने अपने प्रवाह में सब ही बहती रहती

हैं। कुछ लोगों का कहना है कि स्त्री के प्रत्येक रजोदर्शन के दिन को प्रतिपदा समझना* चाहिये। और काम की क्रिया के लिए तदनुसार दुईज, तीज दूसरे तीसरे दिन को समझना चाहिये। इस सम्बन्ध के अनेक मत प्रचलित हैं, क्या ठीक है कौन जाने किन्तु "रति रहस्य" "कामसूत्र" में जिस तरह से इसका प्रयोग;† वर्णित हैं उसमें सत्यता बहुत कुछ है।

इसी के साथ ही साथ ऋषियों का मत यह भी है कि स्त्री की काम-वासना घटती बढ़ती रहती है। रजोधर्म के स्नान के बाद वह पराकाष्ठा की होती है फिर मास भर वह घटती बढ़ती रहती है, किसी दिन कम और किसी दिन ज्यादह। इस सम्बन्ध के कुछ आधुनिक विशेषज्ञों का मत भी यही है और इस मत के एक ज़बर्दस्त प्रवर्तक और समर्थक श्रीहेवलाक इलिस हैं। इस मत के आधुनिक समर्थकों और प्राचीन ऋषियों के मत में सब से बड़ा फर्क यही है कि ऋषिगण की राय में रजोधर्म के पन्द्रह दिन बाद, अन्तिम दिनों को छोड़ कर, स्त्री की काम-वासना प्रायः एक दम कम हो जाती है, इन लोगों का कदाचित् मत यह भी है कि इस काल में गर्भाशय का द्वार बन्द हो जाता है और गर्भ-स्थिति की सम्भावना नहीं रहती। पश्चिमीय विशेषज्ञ इस बात को नहीं मानते, उनकी राय में रजोधर्म के मास के अन्तिम भाग में भी स्त्री की कामवासना घटती बढ़ती रहती है और एक दिन तो वह वैसी ही प्रखर होती है जैसी कि रजोदर्शन के बाद। मैं

---

*हरिहरस्तु शृङ्गार दीपिकायां शुक्ल पक्षादि वैलक्षण्येनाह "रजोदर्शन मारभ्य आपंचदशवासरम्। शुक्ल पक्ष इति ख्यातः कृष्ण पक्षस्ततोऽपरः"

†"मनोरमा के पत्र" नाम की पुस्तक के परिशिष्ट-भाग में इस प्रयोग का वर्णन है।

इस संबन्ध की बहस के सम्बन्ध में विश्वास के साथ विस्तार की बातों को कह नहीं सकती क्योंकि मुझको ठीक ठीक यह स्मरण नहीं है किन्तु मतभेद प्राय: इसी प्रकार का है। एक ओर तो यह प्राचीन और आधुनिक विशेषज्ञ हैं दूसरी ओर कुछ प्राणि-शास्त्र-विशारद हैं जो कहते हैं कि स्त्री की कामवासना किसी क्रम से घटती बढ़ती रहती है इसका न कोई वैज्ञानिक सुबूत अभी तक मिला है और न मिल सकता है और ऐसी दशा में हम लोग ऐसे किसी सिद्धान्त को ठीक नहीं मान सकते। मेरी समझ में ठीक क्या है इसको प्रत्येक स्त्री, अवश्य ही, सहज में नहीं, किन्तु अधिक विवेचन और अपनी दशा पर अच्छा विचार करने से, जान सकती है। तुम कहोगी कि आखिर इन बातों से लड़के लड़की के पैदा होने से सम्बन्ध ही क्या है, किन्तु अगर इन बातों को तुम कुछ भी समझती होतीं तो तुमको इतना जरूर ही मालूम होता कि गर्भ-स्थिति तभी हो सकती है जब स्त्री की वासना पूर्ण रूप से जागृत हुई हो और उसे तृप्ति भी लाभ हुई हो। अस्तु। इन बातों से विशेष सम्बन्ध मुझको नहीं, इस समय मुझको तो तुमको केवल यही बतलाना है कि इच्छा के अनुसार लड़का या लड़की कोई कैसे उत्पन्न कर सकता है। इस संबन्ध में जो प्राचीन ऋषियों के सिद्धान्त❀ हैं उनका जिक्र मैं ऊपर कर चुकी हूं। दो एक ऋषियों ने दूसरे उपाय भी बताये हैं किन्तु जब तक अनुसन्धान

❀"रजो-दर्शन के प्रथम दिन से सोलह रात तक ऋतु काल कहलाता है, इसी के बीच गर्भाधान किया जाता है। जूस रात्रि को गर्भाधान करने से पुत्र और ताख में कन्या उत्पन्न होती है। चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या, पूर्णिमा, रविवार और संक्रान्ति दिवस को गर्भाधान करना मना है। फिर ज्येष्ठा, मूल, मघा, अश्लेषा, रेवती, कृतिका, अश्विनी, उत्तराषाढ़, उत्तर भाद्रपद और उत्तर फाल्गुनी

और जाँच द्वारा उनके सम्बन्ध में यह निश्चित न हो जाय कि वे ठीक ही हैं उनका जिक्र मैं जरूरी नहीं समझती। अपना राज होता तो खोज करने वाले विद्वान जरूर ही छान बीन, जांच पड़ताल कर कुछ निश्चय करते, और बातें भी कुछ मालूम होतीं, अभी तो दशा कुछ और ही है। हमारा सारा भंडार संस्कृत भाषा में है और हमारे बच्चे संस्कृत पढ़ते ही नहीं। मेरी समझ में ही नहीं आता कि जो जाति इस तरह अपने साहित्य ही नहीं भंडार से भी दूर हो वह उन्नति सहसा कैसे कर सकेगी ?

आधुनिक समय में पिछली शताब्दी के अन्त तक प्राय: ५०० से अधिक सिद्धान्त इस सम्बन्ध के प्रचलित थे। (Metaphysicians) आत्म-विद्या विशारदों का कहना है कि जीव में प्राकृतिक स्त्रीत्व तथा पुन्सत्व रहता है, स्त्री-जीव सदा स्त्री-जीव रहेगा, पुरुप-जीव, पुरुष जीव। कुछ लोगों का कहना है कि

नक्षत्र में भी गर्भाधान न करना चाहिए। हस्त, श्रवण, पुनर्वसु और मृगसिरा कई नक्षत्रों को पुङ्गनक्षत्र कहते हैं। वह गर्भाधान कार्य के लिए शुभ हैं। इसके लिए रवि, मङ्गल और बृहस्पतिवार तथा बृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, धन और मीन लग्न अच्छे कहे गये हैं।"

रजोदर्शन के स्नान के बाद ६, ८, १२, १४ अर्थात् जूस रात्रियों में गर्भाधान होने से गर्भ से पुत्र उत्पन्न होगा, और ताख रात्रियों में गर्भाधान होने से कन्या। चौथी, ग्यारहवीं, तेरहवीं रात्रि गर्भाधान के लिए सदा निषिद्ध हैं। यह भी कहा गया है कि गर्भाधान उस समय होना चाहिए, जब पुरुष का दाहिना स्वर चलता हो, अर्थात् जब उसकी नासिका के दाहिने छिद्र से श्वास आता जाता हो; यह भी नियम है कि रजोदर्शन के जितने ही अधिक दिनों बाद गर्भाधान होगा पुत्र-प्रसव की उतनी ही संभावना अधिक होगी।

(Natural Tendencies) प्राकृतिक-झुकाव या स्वभाव के कारण, जीव, स्त्री या पुरुष-जीव होता है। डाक्टरों के दो डिम्बधारों (ovaries) ओवरीज़ के सिद्धान्त की चर्चा मैंने आगे की है। (Biologists) जीव-शास्त्र-वेत्ताओं या प्राणिशात्र विशारदों का सिद्धान्त कुछ और ही है। उनका कहना है कि माता-पिता के स्वास्थ्य, उनके रहन-सहन, उनके भोजन वसन, उनकी आयु तथा अन्य कितनी ही आनुषङ्गिक बातों का प्रभाव सन्तान के स्त्री या पुरुप होने पर पड़ता है। दूसरे कुछ लोगों का कहना है कि यदि माता की प्रजनन-शक्ति विशेष रूप से या पूर्ण रूप से विकसित होगी तो गर्भ से पुत्र होगा नहीं तो कन्या। इनका कहना यह भी है कि यदि माता की प्रजनन-शक्ति वृद्धि-प्राप्त होगी तो गर्भ से पुत्र तो होगा ही, किन्तु इसी के साथ उसका रूप माता के समान होगा, अन्यथा कन्या होगी और वह पिता के समान होगी। कुछ लोगों का कहना यह भी है कि लड़का या लड़की होना माता-पिता की श्रेष्ठता पर निर्भर है, जो श्रेष्ठ होगा उसके विपरीत सन्तान होगी अर्थात् सन्तान कमज़ोर के अनुकूल होगी, यदि पिता हीन है तो पुत्र होगा, यदि माता कमज़ोर है तो कन्या होगी। इन सब सिद्धांतों के सम्बन्ध में कुछ भी निश्चित रूप से कह सकना मेरे लिए बहुत कठिन है, फिर भी, मैंने इनको गिना दिया है जिससे तुम सब बातों को सुन रखो।

आधुनिक समय में इस सम्बन्ध के दो सिद्धान्त महत्व के समझे जा रहे हैं, और जहाँ तक मुझको मालूम है दोनों ही सिद्धान्त अनुभव से एक हद तक सिद्ध भी किये जा चुके हैं। जो जर्मनी में युद्ध के बाद काम में लाया गया वह तो यह है कि रजोदर्शन के अट्ठाइसवें दिन या दूसरे रजोदर्शन आरम्भ होने के दो दिन पहले, जिस दिन स्त्री की कामवासना बहुत ही प्रखर

होती है, जो गर्भ स्थित होगा उससे सदा पुत्र ही पैदा होगा❀। रजोदर्शन, जैसा कि मैं रजोदर्शन की चर्चा करते हुए लिख चुकी हूँ, एक ही समय पर सब स्त्रियों को नहीं हुआ करता। इक्कीसवें दिन, तीसवें दिन और अधिक दिनों पर भी यह अकसर होता है, इसलिए रजोदर्शन के बाद अट्ठाइसवां दिन गिनना हर स्त्री के लिए उपयोगी नहीं हो सकता। पुत्र की कामना रखने वाली स्त्री को इसलिए चाहिए कि वह रजोदर्शन आरम्भ होने के दो या तीन दिन पहिले जिस दिन उसकी कामवासना अन्य सब दिनों की अपेक्षा अधिक प्रखर प्रतीत होती हो पति से गर्भाधान स्वीकार करे। उसकी कामना सिद्ध होगी यह मेरा विश्वास है।

दूसरा सिद्धान्त दो "ओवरीज़" डिम्बधारों का है, किन्तु इसमें कठिनाई यह है कि एक बच्चे के हो लेने पर ही इसका उपयोग सफलता के साथ किया जा सकता है। सिद्धान्त यह है कि स्त्री के जननेन्द्रिय में डिम्बधार, "ओवरीज़", होती हैं, एक दाहिनी ओर, दूसरी बाईं ओर। एक मास दाहिनी और दूसरे मास बाईं (ovary) ओवरी काम करती रहती है। जिस समय दाहिनी (ovary) ओवरी काम कर रही है उस समय यदि गर्भ स्थित होगा तो लड़का होगा और अगर बाईं (ovary) ओवरी के काम करने के समय में गर्भ-स्थिति होगी तो लड़की पैदा होगी। कौन सी (ovary) ओवरी किस समय काम कर रही है इसका जानना बहुत कठिन है और इस

❀कुछ स्त्रियों का अनुभव यह है कि रजोदर्शन के सोलहवें दिन यदि गर्भ-स्थिति हो तो पुत्र ही पैदा होगा। यह भी एक रहस्य की बात है कि सोलहवें दिन के बच्चे को चेचक जीवन भर कभी नहीं निकलती चेचक अधिक तक उन बच्चों को निकलती है जो रजोदर्शन के शुरू के दिनों की औलाद होते हैं।

प्रयोग में सब से बड़ी कठिनाई यही है, किन्तु यह कठिनाई इस तरह से दूर हो जाती है। मान लो कि तुम्हारे एक लड़का मौजूद है। लड़के के जन्म दिन से २७५ दिन पीछे गिनने से तुमको अन्दाजन लड़के के गर्भ में आने का दिवस मालूम हो जायगा। इस दिवस के मालूम होने पर तुम यह विश्वास के साथ जान सकती हो कि उस दिन तुम्हारी दाहिनी (ovary) ओवरी काम कर रही थी, उस काल से बराबर एक-एक मास का हिसाब बाँट कर तुम दो चार वर्ष के बाद भी किसी दिन जान सकती हो कि तुम्हारी कौन सी (ovary) ओवरी उस दिन काम कर रही है और यह मालूम हो जाने पर तुम सहज में ही पुत्र या कन्या की माता बन सकती हो। किन्तु सब कुछ होने पर भी इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में पूर्ण विश्वास मेरा इसलिए नहीं है क्योंकि यह असम्भव नहीं कि जिस दिन पहिले लड़का गर्भ में आया हो वह दिन दाहिनी (ovary) ओवरी के काम करने का अन्तिम दिन रहा हो; ऐसी दशा में उस दिन से एक मास दाहिनी (ovary) ओवरी का कार्य-काल गिनने से सब हिसाब गलत हो सकता है। इस सिद्धान्त का सच्चा प्रयोग इसलिए वही कर सकते हैं जो सदा इस बात की खोज में रहें और जिनके एक दो से अधिक बच्चे हो चुके हों। मेरे एक मित्र को शुरू शुरू में तीन चार कन्याएँ लगातार हुईं, आखिर में उसने इस सिद्धांत की सहायता ली और फिर बराबर उसको पुत्र ही उत्पन्न हुये, किन्तु इस प्रयोग को सभी लोग साधारण रीति से काम में नहीं ला सकते। दूसरे अब कुछ वैज्ञानिकों और प्राणिशास्त्र-विशारदों ने यह फैसला कर दिया है कि यह सिद्धान्त बिलकुल गलत है और इसमें तनिक भी तथ्य नहीं है यद्यपि इस सिद्धान्त के प्रचारक का अब भी दावा है कि उनका सिद्धान्त बिलकुल ठीक है। मैं इसीलिए इस सम्बन्ध के जितने सिद्धान्त आज तक प्रचलित हैं उनमें

जर्मन सिद्धांत को, जिसकी चर्चा मैं ऊपर कर चुकी हूं, सहज और सच्चा समझती हूं। हाँ, स्त्रियाँ अगर इतना भी न जान सकें कि रजोदर्शन के तीन दिन पहिले, दो दिन पहिले या एक दिन पहिले किस दिन उनकी वासना अत्यधिक प्रखर होती है तो फिर कोई उनकी क्या सहायता कर सकता है ? कुछ लोगों का ख्याल यह भी है कि अगर गर्भ-स्थिति अंधेरे पाख में होगी तो लड़का और अगर उजियाले पाख में होगी तो लड़की पैदा होगी किन्तु अभी यह मत पूर्णरूप से सिद्ध नहीं किया जा सका है।

विशेष अब इस सम्बन्ध में मुझको कुछ नहीं कहना है, पर अन्त में फिर तुमको याद करा देना चाहती हूं कि पुत्र हो या कन्या और यह कि बच्चे की प्रकृति कैसी हो, उसके आदर्श कैसे हों, यह ईश्वर, देवी या देवताओं के अधीन न हो कर सर्वथा पिता और विशेष कर माता के ही अधीन है। हाँ, व्रत और उपवास से लाभ जरूर होता है। नमस्कार।

तुम्हारी
शान्ति

सन्तान-निग्रह

शान्ति कुटी
शिमला
२-६-२७

शीला,

तुम्हारा पत्र मिला, तुम्हारे नये बाबू जी तुमको स्कूल भेजने का प्रबन्ध सोच रहे हैं, घरवालों में इस सम्बन्ध में बहस शुरू हो गई है, कुछ बड़ी बूढ़ियाँ भी इस पर राज़ी हैं कि घर की कोई बहू या बेटी पढ़ लिख जाय और घर में तुम्हारे पठन-पाठन का अच्छा प्रबन्ध हो गया है यह सब सुन बड़ी खुशी हुई। अगर हम स्त्रियों में शिक्षा का प्रचार हो जाय, हम भी पढ़ लिख कर संसार के कामों में समझदारी से भाग ले सकें तो इससे बढ़ कर और बात हो ही क्या सकती है? शरीर स्वस्थ रहे और मस्तिष्क पवित्र विचारों से परिपूर्ण हो तो फिर संसार में और चाहिए ही क्या? विद्या और बल से संसार में सब कुछ प्राप्त हो सकता है। अस्तु। आज, बोबी रानी, तुमको सन्तान-निग्रह के सम्बन्ध में कुछ लिखने बैठी हूं। तुमको मैं यह लिख चुकी हूं कि लड़का या लड़की पैदा करना, साथ ही उसकी प्रकृति कैसी हो यह सब माता और पिता के अधीन है। आज तुमको यह बतलाना चाहती हूं कि यही सब नहीं माता पिता के अधीन यह भी है कि जब चाहें तब ही वे संतान पैदा करें। तुम से छिपा नहीं कि बच्चों से प्यारी संसार में कोई वस्तु नहीं। पिता का नाम और माता का प्रतिबिम्ब बच्चे ही संसार में अनन्तकाल तक बनाये रहते हैं। बच्चों के लिए माता-पिता सहस्रों ही कष्ट उठाते हैं, उनके सुख के लिए अपने सुखों में

काट छाँट करते हैं, बच्चों को अधिक से अधिक सुख मिले, संसार में वह यश और कीर्ति-लाभ करें और अधिक से अधिक आराम के साथ रहें, यह प्रत्येक माता-पिता की कामना होती है और होनी चाहिए भी, किन्तु अक्सर अपनी ग़रीबी के कारण, अपने अज्ञान के कारण और सुअवसरों के न मिलने से माता-पिताओं की कामना सफल नहीं हुआ करती। हम गुलाम जाति की हैं, देश हमारा परतंत्र है, गुलामी के साथ ही साथ हमारे देश में ग़रीबी का, जो गुलामी का एक दूसरा नाम मात्र है, साम्राज्य है। व्यापार, कला-कौशल सब ही की यहाँ कमी है। अधिकतर लोग नौकरी कर किसी तरह जीवन-निर्वाह करते हैं। आवश्यकताएँ कितनी बढ़ गई हैं और महँगी* कितनी है यह सब तुम से छिपा नहीं। जिस चीज़ की ओर देखो आग लगी हुई है। कठिनाई से एक मध्यम श्रेणी का मनुष्य अपनी पत्नी और माता के साथ रह कर, सौ रुपया मासिक में आराम के साथ गुज़र कर सकता है। अब यदि इसी समय में दो-चार बच्चे भी हुए तो बड़ी कठिनाई का सामना हो जाता है। "नेस्ती में बरखुरदारी अच्छी नहीं होती।" खाना तो, पेट यूँ ही रखा नहीं जा सकता, किसी तरह मिल ही जाता है किन्तु अन्य सब जीवन की आवश्यक बातों में कमी की जाती है। बच्चे जैसे रक्खे जाने चाहिये, नहीं रक्खे जा सकते, उनके पढ़ाने का भी समुचित प्रबन्ध नहीं किया जा सकता और बच्चों का जीवन इस कारण से जैसा श्रेष्ठ बनाया जा सकता है, नहीं बनाया जा सकता! माता पिता का स्वास्थ्य भी अपने आवश्यक सुखों में काट छांट करने से ख़राब हो जाया करता है। इसलिए

*इसी देश में पचास वर्ष पहिले ३५ सेर का गेहूँ, ३२ सेर का आटा, ३२ सेर का अच्छा चावल, पांच सेर का घी, सोलह सेर की चीनी ढाई, तीन सेर की मिठाई मिलती थी।

आवश्यक यह है कि जितनी लंबी चादर हो उतना ही पैर पसारा जाय। बच्चे उतने ही हों जिनका हम पालन-पोषण श्रेष्ठ से श्रेष्ठ कर सकती हों। *शेर का एक ही भला। ऐसे अनेक पुत्रों से लाभ ही क्या जिनके लिये बाद में पछताना और कहना पड़े—होते ही क्यों न मर गये जो कफन भी थोड़ा लगता। और फिर बहुत से कुपूतों से लाभ ही क्या? "एक लख पूत सवा लख नाती, रावण के घर दिया न बाती"। यह क्या कि बच्चे हर साल होते जा रहे हैं किन्तु किसी के भी सुख से जीवन वहन करने का हम प्रबन्ध नहीं कर सकतीं। हम लोगों को यह भी समझना चाहिए कि बच्चों को, जिनको हम सुख से पाल नहीं सकतीं, पैदा करना ही पाप है। इसके सिवाय अगर पैदावार कम नहीं की जाँय और बच्चे हर साल एक पत्नी के ही निरन्तर पैदा होते रहें, तो एक जोड़े के बाल बच्चे कुछ ही समय में इतने हो जांयगे कि उनकी लाखों में गिनती हो। इस वृद्धि का फल यह होता है कि प्रकृति को प्रबन्ध करना पड़ता है और हीन और कमज़ोर बच्चे मरते रहते हैं। अगर माता पिता इस लिए खुद ही प्रबन्ध करें और बहुतों को नहीं थोड़े हृष्ट पुष्टों को ही जन्म दें तो मृत्यु की संख्या कम होगी। न कमज़ोर और हीन बच्चे पैदा होंगे और न उनकी मृत्यु ही होगी। यह सब न भी हो तब भी सन्तान-निग्रह की नितान्त आवश्यकता है इसलिए कि स्त्री अपने जीवन के उद्देश्य की सिद्धि कर सके। हर साल बच्चा देती रहने से उस में इतनी शक्ति ही शेष नहीं रह सकती कि वह अपने जीवन के उद्देश्य सिद्धि कर सके या अपने पृथक अस्तित्व को उपयोगी बना सके। इसके सिवा मेरी राय यह भी है कि वैवाहिक जीवन आरम्भ करने के कम से कम आरम्भिक पांच वर्ष में पति और पत्नी, पिता और माता का रूप

*"शेर पूत एकै भलो, सौ सियार के नाहिं"।

न धारण करें। उपर्युक्त इन सभी कारणों से सन्तान निग्रह के उपायों का ज्ञान और व्यवहार आवश्यक है। तुम कहोगी, इस में माता पिता क्या कर सकते हैं, अपनी प्रकृति से वह विवश होते हैं, और गर्भाधान हो जाता है। मेरा जवाब यह है कि जब बच्चों के पालन-पोषण का प्रबन्ध नहीं हो सकता तो माता पिता तनिक कष्ट उठाएँ और ब्रह्मचर्य से रहें। यह क्या कि उन की कमजोरी का फल बेचारे बच्चे भोगें ? बीबी रानी, मेरा कहना यह भी है कि मानव-मस्तिष्क ने माता पिताओं को यह बहाना न रह जाय इसी लिए, साथ ही इसलिए कि जब उनकी आय इतनी हो जाय कि बच्चे के समुचित पालन का भार वह उठा सकें तब ही बच्चा पैदा करें, और इसलिए भी कि जितने बच्चों के पालन-पोषण का समुचित प्रबन्ध किया जा सके, उतने ही बच्चे हों, सन्तान-निग्रह के उपाय ढ़ूँढ़ निकाले हैं। इसके सिद्धान्तों के अनुसार आचरण करने से जब पति पत्नी चाहेंगे प्रायः तभी गर्भ-स्थिति हो सकती है, और जब तक वह बच्चे न चाहें बच्चे नहीं हो सकते।

इस सिद्धान्त की शिक्षा युवकों और युवतियों को दी जाय या नहीं इस सम्बन्ध में बहुत मतभेद है। कुछ लोग इस तरह की किसी भी शिक्षा के बहुत विरुद्ध हैं। इन लोगों का कहना है कि इस तरह की शिक्षा के प्रचार से हित होने की अपेक्षा अधिकतर हानि होने की संभावना है। इन लोगों का कहना यह भी है कि गर्भस्थिति न हो इसका सब से हानि-विहीन, हितकर, साथ ही आत्मोन्नति करने वाला और प्राकृतिक नियम यह होना चाहिए कि पति-पत्नी ब्रह्मचर्य से रहें। प्रातः स्मरणीय महात्मा जी का यही मत है। वे अन्य उपायों के, विशेष कर (mechanical) यांत्रिक के, जिनसे गर्भस्थिति रोकी जा सकती है, बहुत विरुद्ध हैं। मेरा कहना यह है कि इस में सन्देह नहीं कि महात्मा जी जो कहते हैं वह सर्वथा उचित, सर्वश्रेष्ठ और माननीय है। प्राचीन

काल में पति संसर्ग केवल गर्भाधान के लिए होता था, और गर्भाधान के सिवा उसका कोई अन्य उद्देश्य ही नहीं था। प्राचीन भारतीय आर्य-प्रथा यही थी। भविष्य के लिए भी यही प्रथा जारी की जाय। संसार का कल्याण इसी में है किन्तु हमारी वर्तमान सभ्यता, तथा हमारे रहन-सहन और जन्म से ही हीन स्वास्थ्य रहने के कारण वर्तमान समय में मानव-समाज में काम की वासना अधिक हो गई है। मेरा कहना तो यह भी है कि वर्तमान काल में काम की प्रखरता हमारी सभ्यता और हमारी कमज़ोरी की देन है। बलियों को न कमज़ोरों की भांति काम सताता है और न उनमें इतनी कामवासना ही होती है। प्रकृति का नियम भी कामवासना की अधिकता के विरुद्ध है। जानवरों में भी ऋतुविशेष में ही काम की वासना होती है और उसी समय गर्भाधान भी होता है। कुछ जीवशास्त्र-विशारदों का कहना है कि सृष्टि के आरंभकाल में पशुओं के समान ही मनुष्यों में भी समय विशेष में ही काम जागृत होता था किन्तु दूसरों का कहना है कि मनुष्य सृष्टि का सरताज है, उसे बुद्धि है, इस लिए अच्छे बुरे के ज्ञान के साथ सभी बातों की भांति कामवासना की तृप्ति के सम्बन्ध में भी उसे स्वतंत्रता मिली है, इस आशा से कि वह अपना हित अहित सोच कर ही काम करेगा। जो हो, दोनों कथनों का निष्कर्ष यही है कि चतुर नर-नारियों को अपनी काम की प्रवृत्ति को नियमित करना चाहिए। सभी नशों की भांति यह काम की वासना भी है, जितना इसमें मनुष्य लीन होगा, उतनी इसकी आवश्यकता अधिक प्रतीत होगी, जितना इससे मनुष्य दूर रहेगा इसकी आवश्यकता भी उतनी ही कम प्रतीती होगी। इसलिये अगर कोई संयम से रह सके, और सन्तान की कामना न होने पर ब्रह्मचर्य का पालन कर सके तो सर्वश्रेष्ठ बात है किन्तु इस मार्ग में दो विकट कठिनाइयां हैं। प्रथम तो यह

कि मानव-प्रकृति और अपने स्वास्थ्य की हीन दशा को देखते हुए काम की प्रवृत्ति का दमन या काम पर विजय प्राप्त करना मेरी समझ में आज ही, सहज संभव नहीं, विशेष कर युवावस्था में। दूसरे मेरा ख्याल यह भी है (यद्यपि कुछ विशेषज्ञ इसको नहीं मानते) कि आरंभ से ही काम की प्रवृत्ति नियमित नहीं की गई तो एक दम से पूर्ण ब्रह्मचर्य से भी स्वास्थ्य को हानि पहुँचने की संभावना है। मैं कह नहीं सकती किन्तु मेरा ख्याल यह है कि काम की बार-बार प्रवृत्ति जागृत होने पर उसको बार-बार दमन करने से प्राय: (Nervous breakdown) पराकाष्ठा की कमज़ोरी तथा मज्जातन्तु संबन्धी बीमारी और "न्यूरसथेनिया" की बीमारी हो जाती है; स्वास्थ्य भी एक दम ऐसा करने से अक्सर बिगड़ते देखा गया है। किन्तु यह सब हो या नहीं मेरा कहना यह है कि अगर कोई अपनी काम की प्रवृत्ति का दमन नहीं कर सकता तो वह इसके लिए भी क्यों विवश किया जाय कि बच्चों का, जिनका समुचित पालन वह नहीं कर सकता, नम्बर वह बढ़ाता रहे। मेरी समझ में सन्तान-निग्रह में कोई पाप या अधर्म नहीं है और अगर हो भी तो वह उस पाप से तो ज़रूर ही छोटा है जो उन बच्चों को धरती पर लाने से होना चाहिए जिनकी समुचित देख-रेख, सुख और शिक्षा का हम पूरा प्रबन्ध नहीं कर सकते।

सन्तान-निग्रह या गर्भ-स्थिति को रोकने के विरुद्ध तीन प्रधान बातें कही जाती हैं। पहली यह है कि इसकी कृपा से काम की वासना की अधिक से अधिक तृप्ति की चेष्टा की जायगी, दूसरी बात यह है कि इससे पाप और व्यभिचार की बहुत वृद्धि होगी, कुमारी युवतियाँ और विधवाएँ भी पापाचार में पड़ जायंगी और तीसरी बात यह कही जाती है कि इससे बच्चों की पैदावार कम हो जायगी, और अधिकतर वैवाहिक-जीवन बच्चों से विहीन होंगे।

सब से पहिले मैं अन्तिम बात ही को लेती हूँ। मैं यह नहीं मानती की बच्चों की इस कारण से पैदावार कम हो जायगी, क्यों कि सन्तान-निग्रह से मेरा यह तात्पर्य ही नहीं है कि बच्चे पैदा ही न किये जायँ, दूसरे अगर भारत में जन संख्या इतनी तेज़ी से न भी बढ़े तो देश या समाज को क्या हानि पहुंच सकती है ?* गुलामों की संख्या बढ़ाना कोई पुण्य का काम तो नहीं, तीसरे हम लोगों को यह ध्यान में रखना चाहिए कि संख्या चाहे कम हो, किन्तु जो सन्तान होगी, वह अधिक हृष्ट-पुष्ट और आज की अपेक्षा अधिक दीर्घ-जीवी, योग्य और सुखी होगी। यह बात कि काम-वासना की अधिकाधिक तृप्ति की चेष्टा की जायगी मेरी समझ में ठीक नहीं है, क्योंकि भारत में इसी समय में जितना इसका आधिक्य है, उसमें अधिकता और सम्भव नहीं है। व्यभिचार और पापाचार की बृद्धि होगी इस बात में कुछ तथ्य ज़रूर है और इस सम्बन्ध में विचार करना भी आवश्यक है । यह कहना कि कुमारी युवतियाँ और विधवाएँ इसी कारण से पवित्र-जीवन धारण करती हैं क्योंकि उनको गर्भ-स्थिति का भय रहता है, मेरी समझ में हमारी पवित्र कुमारियों और धर्म-प्राण विधवाओं के साथ बड़ा अन्याय होगा और अगर बात यही है तो भारत को ऋषियों और देवताओं की

---

*"गुणिगण गणनारम्भे
न पतति कठनी सुसंभवा यस्य
तेनाम्बा यदि सुतनी
वद वन्ध्या कीदृशी भवति" ?

गुणियों की गणना के शुरू में ही जिस पुत्र की गिनती न आये अगर उस पुत्र को जनने से कोई स्त्री माता कही जा सकती है तो बतलाओ बांझ फिर किसे कहते हैं और वह कैसी होती है ?

भूमि कहना केवल उसका उपहास करना है। मैं यह जरूर मानती हूं कि गर्भ न रहे ऐसा उपाय मालूम होने से पापियों में पापाचार की वृद्धि जरूर होगी, किन्तु हम लोगों को यह स्वीकार करना चाहिए कि जो पाप में रत हैं या पापजीवी हैं, उनको इसके न मालूम होने से कोई हानि नहीं है; उनको जो करना है वह करती ही हैं इस समय भी; हां, जो पाप से दूर हैं उन की चिन्ता आवश्यक है। मैं यह नहीं कहती कि कुछ भली स्त्रियां इस भय के दूर होने पर नहीं बिगड़ेंगी किन्तु मेरा कहना यह है कि इन कुछ थोड़ी सी स्त्रियों को बचाये रहने के लिए लाखों विवाहिता स्त्रियों और कुटुम्बों को दुःख उठाने दिया जाय यह कहाँ का न्याय है ? इसके सिवाय सन्तान-निग्रह के उपायों के सदुपयोग से कितने ही वैवाहिक जीवन सुखमय होंगे और कितने ही अन्धकारमय गृहों में प्रकाश फैल जायगा। मैं इन्हीं कारणों से सन्तान-निग्रह के पक्ष में हूँ, और उसके उपायों के प्रचार को भी हितकर समझती हूं।

आज कल एक कठिनाई और उपस्थित हो गई है, इस संबंध के सैकड़ों ग्रंथ प्रकाशित हो गये हैं, कितने ही धन कमाने वाले सन्तान-निग्रह के साधनों के विज्ञापन समाचार पत्रों में छपा रहे हैं। इन साधनों में कठिनाई से दो एक अच्छे और अधिकतर बहुत ही हानिकर हैं। हम इन साधनों को जानने और प्राप्त करने से जन समाज को रोक नहीं सकते ऐसी दशा में यह और भी आवश्यक हो गया है कि उपायों को व्यवहार में लाने-वाले कम से कम धोखों और हानिकर साधनों के अज्ञान में उपयोग से बचाये जायं। इन साधनों की कुछ विशेष स्थितियों में तो नितान्त आवश्यकता है और इसलिए भी इनका ज्ञान नितान्त आवश्यक है। किन्तु यह सब होते हुये भी हम लोगों को यह सदा ध्यान में रखना चाहिए कि

प्रचलित प्रयोगों में सौ में से निन्यानबे हानिकर और सुखमय वैवाहिक जीवन और स्वास्थ्य के लिए विष हैं। मैं इस विषय में अधिक नहीं कहना चाहती; हां, इतना जरूर कह देना चाहती हूँ कि अधूरे पंडित लेखकों की बातों पर कभी विश्वास मत करना, एक दो छोटी मोटी पुस्तकों को पढ़ कर यह उपदेश देने बैठ जाते हैं, वे इतना भी नहीं सोचते कि जिस पुस्तक को उन्होंने पढ़ा है, स्वभावत: उस पुस्तक का लेखक अपने उपाय को सर्वोत्तम सिद्ध करने की चेष्टा करेगा। कोई उपाय वास्तव में सर्वश्रेष्ठ है या नहीं यह तो तभी जाना जा सकता है जब हम यह भी जानें कि दूसरे विशेषज्ञों की उसके सम्बन्ध में राय क्या है।

सन्तान-निग्रह का ज़िक्र कदाचित मैं तुमसे कभी न करती किन्तु तुम किसी समय भूल न कर जाओ इसीलिए यह सब लिखना मैंने ज़रूरी समझा। अपने आचार्यों ने भी इस सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा है और प्राय: उनके बताये हुए उपायों से (यद्यपि उनसे सफलता प्राप्त होना एक दम निश्चित नहीं क्योंकि उनका सम्बन्ध मनुष्य की बुद्धि और कुशलता से है और पश्चिमीय उपायों की भांति वह यांत्रिक नहीं हैं कि कोई भी मूर्ख उनका उपयोग कर सके) हानि किसी तरह की भी नहीं पहुँच सकती। तुम सोचती होगी कि सब कुछ तो मैं बक गई किन्तु मैंने यह नहीं बताया कि आखिर फिर करना क्या चाहिए और अन्त में सर्व-श्रेष्ठ उपाय कौन सा है? मेरा सूक्ष्म में जवाब इतना ही है कि समस्त साधनों में सर्वश्रेष्ठ उपाय संयम है, इसके बाद नंबर उन उपायों का है जिनको हमारे आचार्यों ने बताये हैं, तीसरी श्रेणी के यूरोपीय उपायों में स्त्री के स्वार्थ की दृष्टि से, सर्वश्रेष्ठ उपाय वह है जिसमें स्त्री को कुछ भी न करना पड़े और सारा आयोजन पुरुष के ही अधीन हो। चौथा नम्बर उस उपाय का है जिससे स्त्री पूर्णरूप से अपने ही ऊपर निर्भर रहती है यद्यपि

पूर्ण सफलता लाभ करने की दृष्टि से सब से अच्छा उपाय वह है जिसमें पति और पत्नी दोनों ही रक्षा का आयोजन करते हैं।

एक बहुत ही आवश्यक बात इन साधनों के सम्बन्ध में मैं और बतला देना चाहती हूँ और वह यह है कि एक विशेषज्ञ की राय में (Artificial preventive measures are untrustworthy and dangerous to health) यह सब साधन विश्वसनीय नहीं और हानिकर हैं और इसलिए बिना अपनी लेडी डाक्टर की सलाह के तुम अपनी ओर से कभी कुछ भी न करना। साधन जो आज कल बाजारों में प्रचलित हैं और जो साधारण रूप से बिका करते हैं, सब ही अच्छे नहीं हैं। एक ही साधन के कई बनाने वाले हैं, कोई उसी को अच्छा और कोई बुरा बनाते हैं। साथ ही अपने हाथों से उनका उपयोग, बिना उनके प्रयोग को अच्छी तरह जाने हुए, और बिना कई बार लेडी डाक्टर की सहायता के ठीक नहीं होता और हानिकारक भी हो सकता है। बड़ी ही सावधानी की इस सम्बन्ध में आवश्यकता होती है, इस लिए जहाँ तक इनका प्रयोग कम किया जाय वही अच्छा है, साथही अगर हम अधिकतर ब्रह्मचर्य से काम लें तो यह सर्व-श्रेष्ठ होगा। परहेज सबसे बड़ी दवा है। इन साधनों की एक विचित्रता यह भी है कि "किसी को बैगन बावले किसी को बैगन पथ्य।" वही साधन एक के अनुकूल होता है और दूसरे के नहीं।

अब आज और कुछ नहीं लिखूँगी, आज दिन मैं तुमको पत्र नहीं लिख सकी थी, काम बहुत था, इसलिए रात्रि में लिखने बैठी क्योंकि तुमको मैंने वचन दिया था कि नित्य तुमको पत्र लिखूंगी। तुम कहोगी, तो क्या हुआ था, नहीं समय था तो न लिखतीं, दूसरे ही दिन लिख देतीं किन्तु यह मेरे नियम के विरुद्ध है। मैं सहसा किसी बात के लिए वचन नहीं दिया करती, वचन देने

के पहले खूब सोच विचार कर लिया करती हूं, किन्तु एक बार वचन दे देने पर जीवन रहते मैं उसके पालन करने की चेष्टा करती हूँ। ग्यारह बज चुके हैं नींद आँखों में छाई हुई है, इसलिए बस अब गुट नाइट !

तुम्हारी
शान्ति

बच्चों को बचाओ

शान्ति कुटी
शिमला
३-६-२७

शीला बहिन,

बच्चों के सम्बन्ध की चर्चा कभी पूरी नहीं हो सकती जब तक मैं सौर-गृह और दाइयों के सम्बन्ध में भी कुछ न लिख दूँ। तुमको मालूम है कि आज कल कितने बच्चे होते ही मर जाते हैं और कितनी माताएँ बच्चा पैदा करने में मर जाती हैं या उसी समय की भूलों से प्रसूत की बीमारी की शिकार हो इस संसार से कुछ दिनों बाद नाता तोड़ देती हैं। यह सब केवल इस कारण से होता है क्योंकि बच्चे के पैदा होने पर उसकी और गर्भवती दशा में उसकी माता की जैसी चाहिए देख रेख नहीं होती। दुनिया बदल गई, हमारा राज गया, मुसलमान आए, वह भी हमसे ही हो गए और अङ्गरेजों का राज जम गया। हमारी हीन दशा के साथ ही साथ हमारा स्वास्थ्य भी हर तरह खराब हो गया किन्तु जच्चेखाने और सोअर के कायदे अब भी हजार* वर्ष वाले ही

---

*आश्चर्य की बात है कि धनवन्तरि जो "सूतिकागारविधि," सूतिकागृह के सामान, प्रसव-काल के चिन्ह; प्रसववेदना में कर्तव्य-कर्म प्रसव के उपरान्त कर्म, कुमार के कर्म, नालुवाछेदन-विधि, जातकर्म, विधि रक्षा, आदि का बहुत विस्तृत वर्णन कर गये हैं किन्तु समय की गति और अविद्या के कारण, आज हम सब कुछ भूल गई हैं। तमाशा तो यह है कि नवजात बच्चे को विषम भाग में शहद और घृत चटाना,

बने हुए हैं। वही घर की कोई अँधियारी, कम से कम हवादार कोठरी, वही उपलों का धुआं, दाई भी जो आती है, वह भी हज़ार वर्ष की पुरानी। आश्चर्य है कि हम यह कभी नहीं सोचतीं कि जब हम, हमारे मर्द लोग, हमारा देश, सब ही सब बातों में नीचे गिरे हैं तो हमारी दाइयाँ कैसे वैसी ही निपुण और अपने काम में होशियार बनी रह सकती हैं। इसके सिवा जब विज्ञान और बुद्धि के युग ने अधिक कष्ट-हीन, अधिक लाभकर ही नहीं स्वास्थ्यकर आयोजन हमारे सुख के लिए उपस्थित कर दिये हैं तो फिर क्या वजह है कि हम दस हज़ार वर्ष पुरानी बातों के ही भरोसे रहें। हमारा इस समय में पुराने जच्चेखाने और सोअर के कायदों को बरतना ठीक वैसा ही है जैसा इस रेल और तार के युग में किसी का यह कहना कि हम तो रेल से लाभ न उठाकर कलकत्ता, बंबई या मद्रास बैलगाड़ी या नाव पर जांयगे, या कि अगर कोई ख़बर अपने किसी मित्र को भेजनी है तो पोस्ट-आफ़िस और तारघर का उपयोग न कर हम अपना एक विश्वासी आदमी पत्र लेकर उसके पास पैदल भेजेंगे। सोअर के नियमों के संबन्ध में मुझको कुछ विशेष नहीं कहना है किन्तु इनको मैं कितना महत्व का समझती हूं यह तुम इसी से समझ सकती हो कि एक पत्र ही इस सम्बन्ध में तुम को लिख रही हूँ। पिछले किसी पत्र में बच्चों की देख-रेख के सम्बन्ध की दो चार बातें मैं ने लिखी थीं, चाहती तो उनके साथ ही आज की बातों को भी लिख देती किन्तु उससे मुझको सन्तोष न होता, साथ ही वैसा करने से मैं यह कभी न समझ सकती कि मैंने अपने कर्तव्य का समुचित पालन किया है। आज

जो बहुत ही आवश्यक है और जो बालक की जीवन रक्षा के निमित्त नितान्त आवश्यक है, भी अब नहीं होता या होता भी है तो उपयुक्त समय पर नहीं।

कल की तालिका मुझ को ठीक ठीक इस समय याद नहीं किन्तु जहां तक मैं समझती हूँ पैदा होने वाले बच्चों में प्राय: एक पंचमांश पैदा होते ही या दो चार दस दिन बाद मर जाते हैं। जिस जाति के दुधमुंहे बालक यूँ टीड़ी दल के समान मरते हों वह जाति संसार में क्या उन्नति कर सकती है ? तुम को यह सुन कर आश्चर्य होगा कि हमारे देश में प्रत्येक वर्ष एक वर्ष की आयु तक मरने वाले बच्चों की संख्या प्राय: बीस लाख है। इस संख्या में उन बच्चों की गणना नहीं है जो बेचारे मरे पैदा ही होते हैं। कुछ लोगों की राय है कि इनकी संख्या भी प्राय: उपर्युक्त संख्या के बराबर ही होती है। इस तरह से प्राय: भारत में पैदा होने वालों बच्चों का पंचमांश जाया हो जाता है। ये बच्चे अपनी जान से तो जाते ही हैं किन्तु इतने ही से हमको छुट्टी नहीं मिल जाती। हम को रोना यह भी है कि इनकी मृत्यु का प्रभाव उन बचे हुए चार हिस्से बच्चों के भी जीवन पर, जीवन भर रहता है। यही नहीं इन बच्चों के साथ ही साथ इनकी माताओं का भी स्वास्थ्य सदा के लिए खराब हो जाता है। कितनों ही को प्रसूत की बीमारी हो जाती है, कितनों ही को क्षयी हो जाता है और कितनों ही के अंगों की बनावट ऐसी बिगड़ जाती है कि जीवन में वह माता बनने के योग्य ही नहीं रह जातीं। एक बच्चे के जनने के कष्ट से ही हमारी बहिनें सदा के लिए खीस बा देती हैं और फिर उनका जीवन एक भार सा हो जाता है और कभी वह सुखी नहीं रहतीं। हजारों नहीं तो समस्त भारत में सैकड़ों माताएँ नित्य प्रसव-काल के समय में मृत्यु को शिकार होती हैं। यह सब क्यों होता है ? केवल इस लिए कि स्वास्थ्य के साधारण नियमों को हम नहीं जानतीं, क्योंकि हम को चतुर दाइयां नसीब नहीं होतीं, और क्योंकि हमारे जच्चेखाने और सौरगृह के नियम हजारों वर्ष के पुराने हैं और हम उनमें आवश्यक सुधार नहीं करतीं।

बच्चों और उनकी माताओं की इस अत्यधिक संख्या में मृत्यु का कारण प्रथमतः माताओं का हीन स्वास्थ्य और गर्भवती दशा में उनका नियम से न रहना है और दूसरा प्रधान कारण हमारे सौरगृह के नियम, हमारी दाइयां और चतुर दाइयों का आभव है।

सब से पहिले गर्भवती स्त्रियों के स्वास्थ्य पर हम को दृष्टि रखनी चाहिए, इसके साथ ही साथ हम को सौरगृह के नियमों को, जिनमें लाखों वर्ष की काई जम गई है, बदलना चाहिए और सौरगृह को अधिक से अधिक साफ़, सुथरा, हवादार और सुहावना बनाना चाहिए। सौरगृह ऐसा होना चाहिए कि प्रकृति की बहुमूल्य देन पवित्र वायु और सूर्य के प्रकाश से ग़रीब माता वंचित न हो जाय। पवित्र-वायु रक्त को शुद्ध रखने में सब से अधिक सहायक है। यह अन्धेर की बात है कि हम पवित्र वायु और सूर्य के प्रकाश के मूल्य को नहीं जानतीं। केवल इन दो की सहायता से ही कोई भी प्राणी सदा स्वस्थ और सुखी रह सकता है। "हम पवित्रता की बड़ी फिक्र रखती हैं, हम किसी का जूठा पानी कभी नहीं पियेंगी, अपना ही पिया हुआ, रखा हुआ, पानी दुबारा नहीं पियेंगी, जूठे ग्लास को बिना साफ़ कराये काम में नहीं लयेंगी, हम बँधे हुए पानी के तालाब में नहाना या उसका पानी पीना अच्छा नहीं समझतीं क्योंकि उसका पानी बहता-पानी नहीं है, क्योंकि उसमें बराबर पवित्र पानी की धार आती नहीं रहती, क्योंकि उसका पानी बाहर नहीं जाता रहता किन्तु हम बन्द कमरों में, उठना, बैठना, रहना और सोना पसन्द करती हैं। हम यह भूल ही जाती हैं कि एक साधारण बंद कमरे की वायु एक घण्टे में ही ख़राब हो जाती है। हम जो ख़राब श्वास नाक के द्वारा बाहर निकालती हैं, वही उस कमरे में भरी होती है और हम उसी अपवित्र वायु को बार बार श्वास के

द्वारा शरीर में भरती हैं। यह ज़हर होता है। हम यह भी नहीं जानतीं कि घण्टे भर में हम नौ सौ साठ बार श्वास लेती हैं और इस लिए जब तक कमरे में पवित्र वायु के आने और जाने के लिए खिड़की या कोई द्वार आमने सामने बराबर हर समय खुला न रहे, हम अपवित्र वायु के रूप में ज़हर को श्वास के साथ शरीर में भरती रहती हैं।" सौरगृह यूँ ही छोटा हुआ करता है और हवादार नहीं होता, दूसरे एक छोटे से कमरे या कोठरी में उस समय अनेक स्त्रियाँ मौजूद होती हैं। सब की बाहर निकाली हुई ज़हरीली श्वास से कमरा भरा होता है और यह सब बच्चे तथा जच्चा के लिए बहुत हानिकर होता है। इस लिए इन बातों की फ़िक्र रखना नितान्त आवश्यक है किन्तु इन सब से अधिक आवश्यकता हम को प्रसव-काल के समय में सहायता देने वाली चतुर दाइयों, डाक्टरनियों और डाक्टरों की है।

हमारी पुरानी दाइयाँ बिलकुल समय के प्रतिकूल हैं। मैं यह नहीं कहती कि उनमें से कुछ अपने काम में उतनी ही निपुण और प्रवीण नहीं हैं जितनी कि आजकाल की शिक्षिता, निपुण दाइयाँ किन्तु हमारी पुरानी दाइयों के साथ सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि सफ़ाई और स्वास्थ्य के आरम्भिक नियमों को भी वे भूल गई हैं। ख़ुद साफ़ रहना तो वे जानती ही नहीं, साथ ही उनके औज़ार भी साफ़ नहीं होते। कभी चाकू, कभी हँसिया, ऐसी चीज़ों से वह बच्चे का नारा काट दिया करती हैं। यह अक्सर सौरगृह की ज़मीन पर रख दिये जाते हैं। घर पर वह कैसे पड़े रहे इनको उनको फिक्र नहीं होती ज़मीन पर पड़े रहने की दशा में उनमें विषैले कीटाणु घुस गये इसकी उनको चिन्ता नहीं होता। नारा काटने के पहिले, वह धोकर साफ़ कर लिए जायं इसको भी फिक्र वे नहीं करतीं। यह तो भला दूर की बातें हैं, प्रसवकाल में सहायता देने के पहिले वे अपने हाथों को भी

साफ़ कर लेना अपना धर्म नहीं समझतीं और इन सब बातों का नतीजा भयावह होता है और फलतः इन दाइयों की मूर्खता से भारत के लाखों लाल मरते जा रहे हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि चतुर दाइयों के अभाव को दूर करने की फ़िक्र कुछ हमारे देश में होने लगी है किन्तु फिर भी पर्याप्त संख्या में दाइयों का मिल सकना अभी भी कठिन ही है।

जहां तक मालूम है भारत में प्रत्येक वर्ष में एक करोड़ बच्चे पैदा होते हैं। बहस के लिए मान लो कि कम से कम सैकड़ा पीछे चार का प्रसव अति कष्ट के साथ होता है और इनके प्रसव में सहायता देने के लिए चतुर लेडी डाक्टर या डाक्टर की जरूरत पड़ती है हिसाब से चार लाख शिशुओं के जन्म के समय लेडी डाक्टर की नितान्त आवश्यकता पड़ती है। हमारे अभाग्य से हमारे देश में इतनी लेडी डाक्टर हैं ही नहीं कि वर्ष में चार लाख शिशुओं के जन्म के समय में जहाँ उनकी नितान्त आवश्यकता होती है वहाँ भी वे उपस्थित हो सकें। एक और रोना यह है, दूसरी ओर अपनी मूर्खतावश जो शिक्षिता दाइयाँ मिल भी सकती हैं, हम उनका भी उपयोग नहीं करतीं, हमारी वही पुरानी बाबा आदम के समय की दाइयाँ चली जा रही हैं, बच्चे लाखों की संख्या में मरते जा रहे हैं किन्तु हम ऐसी हैं कि हमारे जूँ नही रेंगती, और हम इसी में खुश हैं कि "होइ है वही जो राम रचि राखा" सब से अन्धेर की बात तो यह है कि जच्चा अछूत समझी जाती है। जहाँ तक मैं समझती हूं इसका प्रधान कारण हमारी दाइयाँ ही हैं। दाइयाँ अछूत जाति की होती हैं, वे नित्य प्रति जच्चा को छूती हैं, फिर नाउन भी रोज़ जच्चा को छूती है, साथ ही वह न कपड़े बदलती है और न स्नानादि करती है, इसी कारण से कदाचित् जच्चा भी अछूत हो जाती है। अगर शिक्षा-प्राप्त उच्च-जाति की दाइयों से काम लिया जाने लगे तो कदाचित् माता का अछूत-

पन भी जाता रहे। हम लोगों में यह भी देखा गया है कि जच्चा के कपड़े बड़े गन्दे रहते हैं, उसका बिस्तर भी गन्दा रहता है। हम लोगों को यह जानना चाहिए कि गन्दगी सब बीमारियों की जड़ है और जो स्वस्थ रहना चाहता हो, उसे गन्दगी और गन्दे कपड़ों से सदा दूर रहना चाहिए। बच्चा भी इसी तरह गन्दा रखा जाता है। उसे साफ़ सुथरे अच्छे कपड़े भी नहीं पहनाये जाते, कभी कभी वह ज़मीन पर ही पड़ा रह जाता है, इन सब बातों का फल यह होता है कि उसे ठंड लग जाती है और अक्सर वह जमुँहा तथा निमोनिया की बीमारी का शिकार हो जाता है। मेरे यह सब कहने का तात्पर्य इतना ही है कि बच्चे और उसकी माता की भलाई के लिए नितान्त आवश्यक है कि हम सौरगृह के नियमों में क्रान्ति करें, सौरगृह के नियमों और क़ायदों को हम एक दम उलट पुलट करदें, माता और बच्चे के स्वास्थ्य के लिए हम अधिक से अधिक सफ़ाई की ओर ध्यान दें और पुरानी बाबा आदम के समय की दाइयों का भरोसा छोड़ शिक्षा प्राप्त, निपुण, उच्च श्रेणी की दाइयों का उपयोग करें। हमने तुमको किसी पत्र में लिखा था कि गर्भ के प्रथम मास से ही आवश्यकता होने पर किसी चतुर लेडी डाक्टर की सहायता लेनी चाहिए, मेरी समझ में यह अच्छा होगा कि वही लेडी डाक्टर जो जच्चा को गर्भवती दशा से देखती रही है, प्रसव-काल के समय सहायता देने को भी उपस्थित रहे। एक बात और कह दूँ, अक्सर, माताएँ बच्चे को दूध नहीं पिला सकतीं और बच्चे को ऊपर का दूध पिलाया जाता है। यह दुग्ध कभी जांचा नहीं जाता, इसकी फिक्र नहीं की जाती कि वह गाय का ही पवित्र दुग्ध है। कभी कभी दूध ठंढा रखा हुआ ही पिला दिया जाता है। यह भी अनेक बीमारियों की जड़ होता है।

ऊपर लिखी हुई सब बातें बच्चे तथा माता दोनों ही के लिए बहुत आवश्यक हैं और मैं आशा करती हूँ कि तुम खुद और

तुम्हारे घर वाले इन बातों पर सदा ध्यान रखेंगे। मैं इस सम्बन्ध में अधिक नहीं लिखना चाहती, इस विषय की अधिक जानकारी के लिए तुम इस विषय की पुस्तकों को पढ़ लो किन्तु अगर इतना समय न ख़र्च करना चाहती हो तो जो कुछ मैं ने लिख दिया है अगर उसी पर ध्यान रखो तो भी काम कुछ बन ही जायगा।

तुम्हारी
शान्ति

बच्चों के जन्म और मृत्यु की तालिका

इङ्गलैण्ड वेल्स और भारत में

इङ्गलैण्ड वेल्स में।

वर्ष	जन्म,	मृत्यु	जीवित बच्चे
१६१०	२५	१३	१२
१६११	२४	१४.५	६.५
१६१२	२४	१३	११
१६१३	२४	१४	१०
१६१४	२४	१४	१०

भारत में—

वर्ष	जन्म,	मृत्यु	जीवित बच्चे
१६१०	४०	३३	७
१६११	३६	३२	७
१६१२	३६	३०	६
१६१३	३६	२६	१०
१६१४	४०	३०	१०

यह साफ़ प्रकट है कि जितने अधिक बच्चे पैदा होंगे उतनी ही अधिक संख्या में उनकी मृत्यु होगी।

मित्रों का चुनाव

शान्ति कुटी
शिमला
४-६--२७

बीबी रानी,

आज तुमको तुम्हारे मित्र कैसे होने चाहिएँ, इस सम्बन्ध में कुछ लिखना चाहती हूँ। तुम कहोगी कि पत्नी-जीवन के अच्छा होने और मित्रों के चुनाव से सम्बन्ध ही क्या है? किन्तु, शीला, मेरा कहना यह है कि मित्रों के उपयुक्त चुनाव और पत्नी-जीवन की सफलता में भी एक घना सम्बन्ध है। तुमको याद होगा कि पिछले किसी पत्र में पुस्तकों के सम्बन्ध की बातें करती हुई मैंने लिखा था कि पुरुष किन पुस्तकों को पढ़ता है इससे जाना जाता है, आज तुम से यह कहना चाहती हूँ कि ठीक उसी तरह से मनुष्य अपने मित्रों से भी जाना जाता है। किसी के सम्बन्ध में तुम मुझको बतला दो कि उस की मित्रता किन लोगों से अधिक है, किन के पास उठना बैठना उसे अधिक रुचिकर और प्रिय है और मैं तुमको बतला दूँगी कि वह मनुष्य कैसा है और उसका स्वभाव कैसा है। हम लोगों में एक मशहूर कहावत है कि 'बाँस के पास बाँस ही पैदा हो सकता है"। जो जैसा होता है अपने अनुकूल ही वह साथी पसन्द करता है*। एक

"*कुनद हमजिन्स बा हमजिन्स परवाज; कबूतर बा कबूतर बाज़ बा बाज़" की एक फारसी कहावत भी है।

"साथ खुटाई ना करे, न मूरख से प्रीत
चातुर तो बैरी भला, मूरख भला न मीत"

बालक या बालिका अगर खराब लोगों में उठती बैठती रहे, वैसी ही खराब हो जायगी किन्तु वही बालक या बालिका अगर भले लोगों में उठा बैठा करे तो अगर खराब भी हो तो अच्छी हो जायगी। इसलिए किन के बीच तुम उठती बैठती हो, वह कैसे हैं या कैसी हैं इस पर तुम सदा ध्यान रखना।

मैं तुमको यह भी बतला देना चाहती हूँ कि अगर तुम रद्दी, हीन पुस्तकों या बालक तथा बालिकाओं को अपना मित्र बनाओगी तो तुम्हारे लिए अपने शारीरिक सौन्दर्य या मस्तिष्क के स्वास्थ्य को कायम रखना असंभव हो जायगा। तुमको मैं लिख चुकी हूँ कि मस्तिष्क का प्रभाव हमारे शरीर, हमारे स्वास्थ्य और हमारे अङ्ग प्रत्यङ्ग पर पड़ता है। गन्दी पुस्तकों* तथा हीन मित्रों के साथ उठने बैठने से, मस्तिष्क में गन्दे, हानिकर और हीन विचार ही चक्कर मारा करते हैं और इसका नतीजा यह होता है कि मुख पर से स्वास्थ्य की ज्योति उड़ जाती है, गन्दे विचारों के कारण रात्रि में अक्सर अच्छी नींद नहीं आती, साथ ही दिन भी आलस्य में कटता है, आँखों का प्रकाश और तेज जाता रहता है और आँखों के नीचे गढ़े पड़ जाते हैं। जीव मनुष्य पर कब्ज़ा करने के सम्बन्ध की चर्चा में मैं लिख चुकी हूं कि स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मस्तिष्क की सब से अधिक आवश्यकता है, इसलिए पत्नी-जीवन ही नहीं स्त्री-जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि बहुत अच्छे मित्र चुने जांय। यह सदा स्मरण रखना कि जैसे जिसके विचार हुआ करते हैं वैसा ही वह होता है। विचारों के अच्छे और बुरे होने के

---

*"साधू कहिये सूप को, पाया फेंक हलोर
ओछी कहिये चाळनी, भूसी राखे बटोर"
"ओछे के संघ बैठ के, अपनी हू पत जाय"

अधिक अनुभव मित्र होते हैं और इसीलिए मित्रों का चुनावबहुत सावधानी से करना चाहिए। एक बात और भी स्मरण रखना, मित्र चाहे स्त्री हो या पुरुष तुम से अधिक अवस्था, तुम से प्रधान कारण और तुमसे अधिक ज्ञान वाला या वाली होना चाहिए। सखी सखाओं के चुनाव के सम्बन्ध में इतना और ध्यान में रखना कि उन पुरुषों या स्त्रियों को मित्रता के उपयुक्त कभी न समझना जिनका अधिक समय आलस्य और गप❀ में बीतता हो, जो अपने शरीर के सौंदर्य की रक्षा में और अपने को सवारने में ही अधिक समय नष्ट करती हों, जो अधिक सोती या पड़ी रहना पसन्द करती हों और जो हर समय प्रेम तथा पति-पत्नी के सम्बन्ध की चर्चा में या गन्दे उपन्यासों के पढ़ने में समय काटती हों। जो सखी या सखा तुमको यह समझाने की चेष्टा करे कि उससे तुम्हारी मैत्री गाढ़ी तभी हो सकती है, जब उससे तुम्हारा प्रेम गाढ़ा हो या तुम उससे घनिष्टता बरतो, जब तुम उसके साथ वैसी चर्चा कर सको जो स्वतन्त्रता पूर्वक तुम दुनिया के सामने खुले तौर से नहीं कर सकतीं, जो तुम को यह समझाने की कोशिश करे या कहे कि गुप्त रूप गुप्त से बातों के करने से तुमको कोई क्षति नहीं पहुँच सकती, उस सखी या सखा को "कोटि बैरी सम" समझना, उसे सदा अपने से दूर रखना, उसे सदा दूर से ही नमस्कार करना, और आदर्श-स्त्री-जीवन के वहन करने में तुम उसे सब से बड़ी बाधा समझना। एक बात और याद रखना, जीवन एक तथ्य और गंभीर विषय है, इसलिए तुम सदा गंभीर रहने का अधिक अभ्यास करना। मेरे इस कथन का अर्थ यह नहीं है कि तुम हँसो नहीं, मजाक न कर सको, या फिकरे न कस सको,

❀ "बाकी अच्छा मत कहो, जो तेरे घर थाय
करै बुराई और की अपने तईं बढ़ाय"

तुम में हास्यरस का माद्दा न हो, गंभीर बनने का अर्थ मेरी समझ में यह है कि तुम मीठी मीठी, विवेक-पूर्ण, हृदय में जगह करने वाली बातें कर सको, और तुम कोरी, झूरी, तत्वहीन वाचाल न बनो। एक बात पर और ध्यान रखना। बनावट से सदा दूर भागना, स्त्री का सर्वश्रेष्ठ आकर्षण उसका प्राकृतिक होना, चतुर होना, और निष्कर्ष पर सहज-बुद्धि से पहुँच जाना और उसको मधुर शब्दों में प्रकट कर देना है।

सच्चे मित्र का मिलना ईश्वर की महती कृपा समझनी चाहिए। सच्चा मित्र वही है जो तुम्हारी समस्त विशेषताओं और त्रुटियों को पूर्ण रूप से जानता हुआ भी तुमसे प्रेम करे और हर समय तुम्हारे दुःख सुख को बँटाने को, सदा तुमको ऊपर उठने और श्रेष्ठ जीव बनने में सहायता देने को तैयार रहे। सब से अच्छे मित्र तुम्हारे लिए दूल्हा भाई हो सकते हैं, चाची जी से भी तुम सब बातों में सलाह ले सकती हो। मेरी राय में अपने शुभचिन्तक बड़े बूढ़ों में से किसी को मित्र बना लेना बड़ा हितकर होता है वह अपने अनुभव से, अपने ज्ञान से, सदा ठीक ही सलाह तुमको देगा, और सदा तुम्हारी भलाई की ही चिन्ता करेगा। तुमको सुन कर आश्चर्य होगा कि मैंने अपना सर्वश्रेष्ठ मित्र अपने बाबू जी को पाया है। उनसे सब सुख दुःख की बातें मैं आदर-पूर्वक कह देती हूं और उनकी सलाह मानने से आज तक मुझ को कभी कोई क्षति नहीं पहुँची। अपने बाबू जी की तीन सीख भी तुमको बतला देना चाहती हूं। पहिली यह है कि झूठ कभी मत बोलना, विशेषकर, मुझ से झूठ कभी मत बोलना, दूसरी यह है कि कोई काम ऐसा न करो जिसे अगर तुमको कोई करते देखले या जान ले तो तुमको लज्जा आए, तुम्हारा मान उसकी नज़रों में कम हो जाय और

जिसके करने के लिए तुमको छिपाने की जरूरत हो। तीसरी सीख उनकी यह है—

"श्रूयताम धर्म सर्वस्वं श्रुत्वाचाप्यवधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषाम् न समाचरेत"*॥

जो बात अगर कोई दूसरा तुम्हारे साथ करे तो तुम को दुःख हो, तुम उस बात को कभी भी किसी दूसरे के साथ न करो। जो सखी या सखा इन तीनों सीखों के जरा भी विरुद्ध तुमसे आचरण करने को कहे तुम उसे कभी अपना मित्र या शुभचिन्तक न समझना। अन्त में इतना ही कहना है कि सदा धीमान, श्रीमान, आचारवान्, अपने से बड़े और प्रसिद्धि-प्राप्त पुरुषों या स्त्रियों से मैत्री करना और उनके चरणों में बैठना, क्योंकि अगर यह कुछ भी लाभ तुमको पहुँचाने को न तैयार हों तब भी उनके साथ रहने से तुम पर उनके चरित्र और गुणों के जो अच्छे प्रभाव पड़ सकते हैं उनसे वह तुमको वंचित नहीं कर सकते।

†"सेवितव्यो महा वृक्षो फलच्छाया सनन्वितः।
यदि दैवात फलं नास्ति छाया केन निवार्यते"॥
"रहे समीप बड़ेन के, होत बड़ो हित मेल।
सबही जानत बढ़त है वृक्ष सहारे बेल॥"

"शान्ति पर्व" में लिखा है "सदा विद्वानों का संग, शिष्ट पुरुषों की सेवा, और आत्मा को विनीति करने से सदा के लिए अनवज्ञता प्राप्त होती है। सदा वृद्धों की उपासना करे, सदा उनके

---

* प्राणयथात्मनो भीष्टा भूतानामपिते तथा।
अत्मौपम्येन भूतेषु दयाम कुर्वन्ति साधवः"॥

†बड़े वृक्ष की जो फलता हो और छायादार भी हो सेवा करनी चाहिए, क्योंकि यदि किसी समय वह फले नहीं तब भी अपनी छाया से वह तुमको वंचित नहीं कर सकता।

पीछे बैठकर उनका सत्कार और उनकी सेवा करे और दूसरे के बहुत पूछने पर धर्मयुक्त वचन कहे, ऐसा करने से सहसा किसी को दुखी नहीं होना पड़ेगा।" किन्तु इन सब बातों के साथ यह भी याद रखना—

'दोस्ती और किसी गरज़ के लिए
यह तिजारत है दोस्ती ही नहीं।"

मित्रता बिलकुल स्वार्थ रहित* होनी चाहिये, और सदा इस बात पर तुमको ध्यान रखना चाहिए कि मित्र की जितनी सेवा तुमसे हो सके हो जाय किन्तु तुम्हारी सेवा करने का उसको कभी अवसर न मिले।

अन्त में इतना और कह देना चाहती हूं कि कोई भी मित्रता स्थापित नहीं की जानी चाहिए जो स्वर्ग में भी वैसी ही उपयोगी और सुन्दर न बनी रह सके।

"प्रीति तो ऐसी कीजिये, जैसी रुई कपास।
जीते जी तो संग रहे, मुये पर होवे साथ" ॥

हम सबको यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि सच्चे†मित्र से

---

*वाही नर को जान तू पूरा अपना मीत।
जो राखे बिन लाभ के तुझसे प्रीत पिरीत" ॥

†दास परस्पर प्रेम लख्यो,
　　गुन क्षीर को नीर मिले सरसातु है।
नीर बेचावत आपनो मोल है,
　　जहां जहां जाई के क्षीर बिकातु है ॥
पावक जारन क्षीर लगै,
　　तब नीर जरावत आपने गातु है।
नीर बिना उफनाई कै क्षीर,
　　सु आगि मैं जात मिले ठहरातु है ॥

बहुमूल्य वस्तु संसार में कोई नहीं। स्वार्थमय संसार में सच्चे* मित्र बिरले ही होते हैं और किस्मत से ही किसी को मिल जाते हैं किन्तु जब एक बार किसी को सच्चा मित्र मिल जाय तो उसे जान के साथ ही रखना चाहिए। मित्रता बनाए रखना भी एक कला है। हाँ, यह जरूर है कि विवाह की भांति, मित्रता भी समान श्रेणी, समान शील और समान आकांक्षाओं वालों में ही होनी चाहिए। ऋषि गौतम ने शान्ति पर्व में कहा है-"सदा विचार करके लोगों के साथ मित्रता करे, बहुत समय तक विचार करके किये हुए कार्य का परित्याग करे, बहुत देर तक सोचने के बाद मित्रता करने से वह चिरस्थाई होगी। राग, दर्प, अभिमान, द्रोह, पापकर्म अप्रिय कार्य, और कर्तव्य के अनुष्ठान के विषय में चिर-कारी मनुष्य श्रेष्ठ होता है। सुहृद, वन्धु, और स्त्रियों के अव्यक्त अपराध के विषय में भी चिरकारी मनुष्य श्रेष्ठ होता है। "सहसा करि पछिताय विमूढ़ा"† की कहावत को इसलिए कभी मत बिसारना।

आज का सबक तम्हारे लिये इतना ही है और इसी को याद कर तुम सन्तुष्ट हो जाओ बस, अब नमस्कार।

तुम्हारी—
शान्ति

---

*"यार वही जो भीड़ में काम आवे"।
†"वा नर से मत मिलरे मीता
जो कभी मिरग कभी हो चीता"॥

समाज में व्यवहार

शान्ति कुटी
शिमला
२५-६-२७

"गुरुषु सखिषु भृत्ये बन्धुवर्गे च भतु—
र्व्यपगतमदमाया वर्त्तयेत स्वम् यथार्हम"
(रति रहस्यम्)

शीला,

मित्रों के चुनाव के समान ही दूसरा महत्व का विषय हमारा समाज में व्यवहार है। हम समाज में कैसे, उठती बैठती, बोलती और आचरण करती हैं इन सब पर भी स्त्री-जीवन की सफलता बहुत कुछ निर्भर है। इस सम्बन्ध में तुमको मैं दो हानिकर कहावतों से सावधान कर देना चाहती हूं। पहिली तो यह है कि "जैसा देश वैसा भेष" और दूसरी हानिकर कहावत है मुझको इसकी परवा नहीं कि दूसरे मेरे सम्बन्ध में क्या ख्याल करते हैं या विचार रखते हैं"*। "जैसा देश वैसा भेष" का अर्थ लोग लगाते हैं कि जिन लोगों में, जैसे लोगों में हम उठें बैठें उनके ही समान हम उस समय आचरण भी करें। वे अगर बुरे हैं तो हम उनकी खराब बातों में शरीक रहें। यह बहुत ही गलत बात है। किसी देश या किसी समाज में हम क्यों न हों, हमको सदा अपने भिन्न व्यक्तित्व को, अपने चरित्र को और अपनी विशेषताओं को बनाये रखना चाहिए। साधारण और तत्व-हीन बातों के तिल को पहाड़

---

*"I don't care others think of me".

बनाने की आवश्यकता नहीं है किन्तु हमको भूल कर भी उन बातों को आखों की ओट नहीं करना चाहिए। जिनसे हमारे जीवन, हमारे चरित्र, और हमारे नैतिक नियमों से घना सन्बन्ध है। दूसरी कहावत के सम्बन्ध में मैं इतना ही कह देना चाहती हूँ कि जो पुरुष या स्त्री यह कहती है कि मुझको इसकी परवा नहीं कि दूसरे मेरे सम्बन्ध में क्या विचार रखते हैं या रखेंगे, वह सर्वनाश के पथ पर आधा आगे बढ़ गई हैं और उस का सर्वनाश निकट है। हम में से प्रत्येक को इस लिए इस बात की ज़रूर चिन्ता होनी चाहिए कि दूसरों को हम अपने को बुरा कहने और समझने का अवसर नहीं देतीं साथ ही हम को हर समय इस की फिक्र होनी चाहिए कि दूसरे हमको अच्छी कहते ही नहीं वरन् वास्तव में हम अच्छी हैं भी।

मैंने ऊपर लिखा है कि हम समाज में कैसे उठती, बैठती, बोलती, और आचरण करती हैं इस पर स्त्री-जीवन की सफलता साथ ही अपनी सफलता भी बहुत कुछ निर्भर रहती है। तुम को यह भी मालूम होना चाहिए कि किसी पुरुष, स्त्री या समाज पर जो तुम्हारा पहिला प्रभाव पड़ता है, वह बहुत कुछ तुम्हारे उन के सम्बन्ध को सदा के लिए निश्चित कर देता है। पहिला प्रभाव, पहिला ख्याल प्रायः सदा सर्वोपरि अपनी छाप रखता है इसलिए तुम सदा इस बात पर ध्यान रखना कि पहिला असर जो तुम्हारा दूसरों पर पड़ता है वह सदा अच्छा ही हो। एक बात तुम से खास तौर से कह देना चाहती हूं और वह यह है कि "अति को भलो न बोलनो, अति को भली न चुप।" किसी समाज में या मित्रों के समूह में बैठ कर न एक दम चुप ही रहना अच्छा होता है और न बहुत बक बक करती रहना और अपने को वाचाल सिद्ध कर देना। हम को यह सदा ध्यान में रखना चाहिए "बहुत बोलना मुरखताई"। आवश्यक बातों के सम्बन्ध में आवश्यक

शब्दों में ही अपने विचारों को मिष्ट-भाषा में प्रकट करती रहना सदा अच्छा होता है।

"ओठ जीभ एकत्र करि, बाट सहारे तौलिये।
बैताल कहे विक्रम सुनो, जीभ सहारे बोलिये ।।"

समाज में विविध विषयों पर बात कर सकना भी एक कला है। इसका गुर है अधिक से अधिक जानकारी और ज्ञान किन्तु हम में से प्रत्येक स्त्री को यह ध्यान में रखना चाहिए कि:—

"जैसे चतुर माता बच्चों को अनर्गल बकवास करने से रोके रहती है ठीक उसी तरह से एक युवा स्त्री भी समाज में अपने पास बैठे हुए मनुष्यों को, बिना शब्दों में कुछ कहे हुए, अपने आप तर्ज और तरीकों से ही यह समझा दे कि उसके सम्मान के अर्थ कुछ विषयों के सम्बन्ध में वे उसकी मौजूदगी में मौन धारण किये रहेंगे।" इसके साथ ही साथ एक स्त्री को बाचाल पुरुषों या स्त्रियां के बीच यह भी सिद्ध कर देना चाहिए, निस्सन्देह ही आवश्यकता पड़ने पर, कि बिना मूर्ख होते हुए भी वह पवित्र, निर्दोष, शुद्ध और निष्पाप हो सकती है।

हम स्त्रियों को सदा यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि अपनी बातों से अपनी तर्ज* से, उपमाओं, नीरवता या ईशारों से किसी तरह भी हम पुरुषों या स्त्रियों में काम की वासना को जागृत नहीं करतीं। सब से अधिक हमको सत्य† की उपासना का सदा ख्याल रखना चाहिए और अपने व्यक्तित्व का आदर कराने और अपनी बातों को मान्य कराने की हम में शक्ति होनी चाहिए। यह भी सदा ध्यान में

---

*"सुख कारन सागर तज्यो आन विधायो अङ्ग
मोती नर यूँ कापियां, तू हँसी और के संग"

†यही भला है मीत जी, झूठ कभी न बोल।
बंग न सोना हो सके फिरत सुनहरी झोल"।।

रखना कि दूसरों से अनादर पूर्वक बातें कर तुम उनको अपने साथ आदर सहित बोलने कि शिक्षा ही नहीं देतीं वरन् अपना आदर करने पर उनको विवश करती हो। नम्रता और मिष्टभाषण से तुम्हारा पद सदा ऊँचा होता है और नम्रता और दूसरों का आदर करना सदा तुम को ऊपर उठाता है। किसी भी बात को मुँह से निकालने के पहिले यह भी सदा ध्यान में रखना अच्छा होता है कि तुम क्या कहने जा रही हो, किससे या किन लोगों से कह रही हो किस समय में कह रही हो और कहाँ पर कह रही हो सब से अधिक, हर समय में, समाज में या अकेले में भी तुमको स्त्रियोचित अभिमान, स्त्री की मर्यादा, मान और गौरव और स्त्रियोचित मौन का सदा लिहाज़ रखना चाहिए।

इस सम्बन्ध में कुछ और कहना नहीं चाहती किन्तु यह ज़रूर बतला देना चाहती हूं कि कुटुम्ब केवल समाज का एक सूक्ष्म रूप है और इसलिए जिस तरह से समाज में उसी प्रकार से कुटुम्ब में और कुटुम्बियों से भी व्यवहार करना चाहिए। तुम को यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि तुम्हारी बातों से सदा सत्यता टपकती रहे और जीवन में कभी किसी को यह अवसर न हो कि वह तुमको असत्यवादिनी कह सके। गुरुजनों का तुम सदा आदर करना और सदा याद रखना कि "बेअदब बेनसीब, बाअदब बानसीब"।

*"अभिवादन शीलस्य नित्यम् वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुः यशः तपो बलम्"॥

---

*लघुता में प्रभुता मिले, प्रभुता तें प्रभु दूर।
चींटीं शक्कर खात है, कुंजर के मुख धूर"॥

"शक्कर बिखरी रेत में संतो, कुंजर हाथ न आवे।
मान बड़ाई छोड़ दे बन्दे, चींटी होई चुनि लावे"॥ "कबीर"

बड़ों का आदर करने से आयु, यश, तप और बल की वृद्धि होती है। एक बात और करना अपनी विद्या और लक्ष्मी का कभी अभिमान न करना और कोई बड़ा हो या छोटा, अमीर हो या गरीब सब से नम्रता पूर्वक मिष्ट-भाषा में ही बात चीत करना और कटु शब्द या हृदय को बेधने वाली बात कभी किसी को मत कहना। पुराने लोग कह गये हैं—

"बसीकरण एक मंत्र है परिहर बचन कठोर"

अगर इसके साथ ही साथ, दूसरे के दुख को तुम अपना दुःख समझो और अपनी शक्ति भर, निस्सन्देह ही दूल्हा भाई और अपने गुरुजनों की सम्मति प्राप्त कर, दूसरों के दुःख को दूर करने की चेष्टा में सदा लीन रहो तो यह और भी अच्छा होगा; हाँ, शर्त यही है कि उसके दुःख को दूर करने में तुम अपने पवित्र मंच से अपने को नीचे न गिराओ।

गृह-प्रबन्ध❋ और दास दासियों से कैसे व्यवहार करना चाहिए इस सम्बन्ध में भी हर एक स्त्री को कुछ ज्ञान होना आवश्यक है। ये विषय खासे महत्व के हैं किन्तु इनके सम्बन्ध में मैं तुमको कुछ भी लिखूँगी नहीं। गृह का प्रबन्ध, प्रबन्ध करने से ही कुछ आता है। अगर तुम सब बातों पर सदा ध्यान रखो, और इस बात की फिक्र रखो कि गृह-प्रबन्ध रूपी-मशीन सुचारु रूप से चलती रहे, सब चीज़ें आवश्यकतानुसार अपनी अपनी जगह पर मौजूद रहें और सब का काम अपने समय पर होता रहे तो कुछ ही काल में तुम गृह-प्रबन्ध-काज में दक्ष हो जाओगी।

दास दासियों के सम्बन्ध में इतना ज़रूर कह देना चाहती हूँ कि उनके प्रति भी मानव-व्यवहार ही होना चाहिए, सदा उनसे

❋'गृह-प्रबन्ध-शास्त्र' नामक पुस्तक, अभ्युदय प्रेस, प्रयाग, से मिल सकती है।

मिष्ट भाषण करना चाहिए, किन्तु उनको उनके स्थान पर ही रखना चाहिए। दासियों को सखी बनाना, उनको मुंह चढ़ाना, उनके मुंह लगना कभी भी श्रेयष्कर नहीं। "मुँह लगाई डोमिनी, गावै ताल बेताल"। तुमको यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि दास दासी तुम्हारे पवित्र रहते हैं, साफ़ सुथरे कपड़े सदा पहिने रहते हैं, तुम्हारे घर में आने वालों, तुम्हारे मित्रों और सम्बन्धियों को वह आदर की दृष्टि से देखते हैं और तुम्हारे समान उनका भी वे आदर करते हैं।

दास दासियाँ घर की इज्जत बना सकती हैं और मिनट भर में उसे मिट्टी भी कर सकती हैं। साथ ही दास दासियों के व्यवहार से ही बाहर वालों को घर की सभ्यता का आभास मिलता है। तुम इसलिए इन पर और इनकी बातों पर सदा निगाह रखना।

दूसरों से सम्बन्ध रखने वाली सभी बातों की प्रायः, अपनी योग्यता और बुद्धि के अनुसार, मैंने तुमसे चर्चा कर दी अब तुमको तुमसे सम्बन्ध रखने वाली बातें ही कुछ बतला देनी हैं और उनका ज़िक्र अगले दो पत्रों में कर अपने कर्तव्य-पालन की पूर्ति मैं अपनी समझ में कर चुकूँगी। इस समय इसलिए अब नमस्कार।

तुम्हारी

शान्ति

सतीत्व

शांति कुटी
शिमला
४-६-२७

"प्रियतम छबि नैनन बसी,
पर छबि कहां समाय ।
भरी सराय रहीम लखि,
पथिक आप फिर जाय ॥"

"यह मत जाने बावरी, पाप न पूछे कोय
सांइ के दरबार में, एक दिन लेखा होय"

"पतिहि देवतानार्याः पतिर्बन्धुः पतिर्गुरुः
प्राणैरपि प्रियम् तस्माद्भर्तुः कार्यम् विशेषतः"

प्यारी शीला,

सतीत्व की चर्चा मैंने सब से अन्त केलिए रख छोड़ी थी, इसलिए नहीं कि जितनी बातों के सम्बन्ध में मैं पहिले लिख चुको हूं, उनसे यह किसी दृष्टि से भी कम महत्व की वस्तु है, मैंने इसकी चर्चा को अन्त केलिए रख छोड़ा क्योंकि तुम बड़े बाप की बेटी हो, साथ ही तुम सतीत्व की महिमा और महत्व से भले प्रकार परिचित हो। दूसरे, इस देश में, जिसको सीता, सावित्री, विदुला, सती, और अन्य बड़ी बड़ी महादेवियों ने जन्म लेकर पवित्र किया है, सतीत्व की शिक्षा विशेष रूप से देने की आवश्यकता भी नहीं है। हमारी रगों में पवित्र माताओं और बड़ी बड़ी

देवियों का रक्त बह रहा है, हमारा रक्त आज तक पवित्र चला आया है और हमारा कर्तव्य स्वाभाविक यही है कि अपने पूर्वजों की देन और अपनी पूँजी को हम सदा उसी तरह से पवित्र बनाये रहें। सतियों की कथाओं को तुम ने पढ़ा होगा, यह भी तुमने सुना होगा कि उनके "अमित प्रभाव (को) वेद (ने) नहीं जाना तुमने बड़ी बड़ी पवित्रात्मा संसार की रत्न-स्वरूप पतिव्रताओं के जीवन-चरित्रों को पढ़ा होगा, तुमको यह भी मालूम होगा कि केवल अपनी पवित्रता की शक्ति से संसार में कितने बड़े बड़े आश्चर्य-जनक कार्य उन लोगों ने कर दिखाये हैं।

एक सती देवी ने, सूर्य की आकाश में यात्रा ही रोक दी। सावित्री ने सत्यवान को यम से वापस ले लिया। हज़ारों ही इसी प्रकार की, सतियों के तेज और प्रताप की, बातें हमारे धर्म-ग्रन्थों में भरी पड़ी हैं। सती का महत्व*और आदर कितना है यह तुम इसी से जान सकती हो कि आज भी बिना ऊँच नीच, छूत छात के विचार के, विवाह के समय में धोबिन सुहाग देने आती है। इसकी कथा क्या है तुम जानती ही होगी। सतीत्व का यह महत्व है कि आज हज़ारों वर्ष पहिले मरी हुई धोबिन के सतीत्व के प्रताप से उसकी सन्तान और उसकी बिरादारी वालियाँ ब्राह्मण और क्षत्रिय कन्याओं को सुहाग देने के लिए निमंत्रित की जाती हैं। तुमको इस सम्बन्ध में कुछ भी लिखने की आवश्यकता मैं नहीं समझती; तुम रामायण का नित्य पाठ करती हो, तुमने अनुसूयाजी ने सीता जी को जो शिक्षा दी थी उसे पढ़ा ही होगा, भूल गई हो तो फिर पढ़ लो, याद कर लो, और रात्रि में सोने से पहिले उन शिक्षाओं का स्मरण कर, अपनी परीक्षा कर लिया करो कि उन उच्च-मंच से तुम किसी अंश में नीचे तो

*"नारि पतिव्रत जेहि घर माहीं, तेहि प्रताप निज अमर डराहीं"

नहीं गिरीं ? केवल बदनामी के भय से, ख्याल से कि कोई जानेगा तो मुँह दिखाने लायक न रहेंगी, पवित्र बना रहना, बड़ी बात नहीं है, सतीत्व का अर्थ है मनसा, वाचा, कर्मणा पवित्र रहना। "मन में गांठी पाप की, राम भजे क्या होय", बिना मन शुद्ध हुए बाहरी पवित्रता के आडम्बर से कुछ होता भी नहीं। एक अङ्गरेजी लेखक ने भी "तुलसी" के वचनों को इस प्रकार से कह दिया है:—*पत्नी को मनसा, वाचा कर्मणा पतिव्रता होना चाहिए। वह स्त्री सती और पवित्र नहीं हो सकती जो मनसा और वाचा पवित्र नहीं है किन्तु लोक-लाज के भय से पवित्र बनी हुई है।"

सतियों की महिमा और तेज का वर्णन हमारे सभी धर्म-ग्रन्थों में भरा पड़ा है। किस सती को हम सर्व-श्रेष्ठ मानें मैं तय नहीं कर सकती किन्तु फिर भी मेरा अनुरोध संसार की समस्त स्त्रियों से यही है कि बाल्मीकि वर्णित सीता-चरित्र को वह ज़रूर पढ़ डालें। कुछ न बन पड़े तो "अभ्युदय प्रेस" की छपी हुई "रामायणी कथा" में ही वर्णित सीता-चरित्र को वह पढ़ डालें। सीता के सतीत्व की परीक्षा हुई थी उस समय जब जगज्जननी को रावण हर ले गया था। रावण के प्रलोभन देने पर सीता ने कहा था—"तू वस्त्र से अग्नि पकड़ने की इच्छा करता है, जीभ से तलवार की धार चाटना चाहता है।" लंका पहुँचने पर रावण के फिर कहने सुनने पर सीता ने कहा था—"चाँडाल की क्या सामर्थ्य है कि यज्ञ में ब्राह्मण के मन्त्र से पवित्र की गई और पुष्पमाला और पत्रों से सुशोभित वेदी को वह स्पर्श करे।" यही नहीं

---

*"A wife should be monogamus in thought and looks as well as in deed. No, woman has virtue who is afraid of tranishing her reputation but not her conscience."

अशोक बन में शङ्कुकर्णा, विकटा, चण्डोदरी आदि राक्षसीगण हर तरह से सीता को प्रलोभन और त्रास दे रही थीं किन्तु सीता अचल ही बनी रही। रावण फिर आया और त्रैलोक्य का साम्राज्य वह सीता के चरणों में वारने लगा किन्तु सीता ने जवाब दिया—

"मेरी ओर जिन आँखों से देखता है वह इस समय भी निकल कर पृथ्वी पर क्यों नहीं गिर पड़तीं ? महाराज दशरथ की पुत्रबधू और रामचन्द्र की धर्मपत्नी के प्रति जिस जिह्वा ने यह सब बातें कहीं वह इस समय कट कर ज़मीन पर क्यों नहीं गिर पड़तीं ? तेरे काल रामचन्द्र आते हैं, यह अनुपमेय ऐश्वर्यशालनी लङ्का शीघ्र ही सदा के लिए अन्धकार में विलीन हो जायगी।" सीता के कठिन पतिव्रत और सतीत्व का परिचय एक स्थल पर हमको और मिलता है और वास्तव में यह सब से मधुर तथा हृदय-ग्राही है। हनूमान आते हैं, सीता का उन पर पूर्ण विश्वास हो जाता है और सीता को अपनी पीठ पर चढ़ा कर हनूमान राम के पास ले जाने को तैयार होते हैं। हनूमान कहते हैं—

"मेरी पीठ पर चढ़ आओ मैं आज ही इस दुःख से तुमको छुड़ा दूँगा। तुमको पीठ पर चढ़ा मैं सागर तैर जाऊंगा, मुझ में रावण सहित लङ्का को भी ले जाने की शक्ति है। आज ही राम सहित तुम लक्ष्मण को देख सकोगी। जैसे आया निश्चय वैसे ही तुमको ले चला जाऊँगा।"

यह सब सुन हर्ष-विस्मयसर्वाङ्गी सीता बोलीं—"मैं पति-भक्ता हूं, हे बानरों में श्रेष्ठ, राम से भिन्न मैं किसी अन्य पुरुष का शरीर छूना भी नहीं चाहती। रावण ने बलपूर्वक जब मुझको छू लिया तब मैं विवश और अनाथ थी। यदि राम राक्षसों सहित रावण को मार कर मुझको यहाँ से ले जांय, तो यही कार्य उनके योग्य होगा।"

राम के विरह में सीता स्नान, भोजन नहीं कर रही थीं; प्रत्येक मिनट उनकी ही उनको चिन्ता थी, लंका में अति कष्ट था, राम के दर्शन के लिए उनकी आँखें तरस रही थीं, किन्तु हनूमान की प्रार्थना को उन्होंने स्वीकार नहीं किया। उन्होंने कहा—"मैं पतिव्रता हूँ, जीवन रहते, जीवन की रक्षा के निमित्त भी मैं पर पुरुष का स्पर्श नहीं करूंगी।" उन्होंने कहा—"राम आकर रावण को मारें और मुझको ले जांय यही उनके उपयुक्त कार्य होगा।"

राम के जय-लाभ करने पर जिस समय विभीषण रत्न, वस्त्रादि लेकर सीता के पास आये और उनको राम के पास ले जाने लगे, सीता ने कहा—"अस्नाता द्रष्टुमिच्छामि भर्तारं राक्षसेश्वर" जैसी हूँ बिना कपड़े बदले नहाये धोये ही मैं राम दर्शन करना चाहती हूँ*। राम के लिए इसका अर्थ यह था कि वह देख लें कि जब से यहाँ आई हूँ मैं ने भोजन नहीं किया, स्नान नहीं किया, बसन नहीं बदला, कोई शृङ्गार नहीं किया केवल उनकी याद में ही पागल रही। अपने लिए यह था कि जब पति के दर्शन हो जांय तभी स्नान भी होगा और बसन भी बदले जांयगे नहीं तो जैसी हूं वैसी ही ठीक हूं।

सती का चरित्र यह है, पातिव्रत इसे कहते हैं और भारतीय ललनाओं के लिए ही नहीं, संसार की समस्त स्त्रियों के लिये पत्नी-जीवन और पातिव्रत का आदर्श सीता के समान दूसरा हो नहीं सकता।

---

*'आगते च प्रकृतिस्थाया एवं प्रथमतो दर्शनम्......'

जिस वेष में पति की अनुपस्थिति में रहती रही हो, उसके आने पर प्रथम उसी बेष में उसका दर्शन करे।

—वात्स्यायन

इसके साथ हमको और पतिगण को यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि राम क्या थे ? राम और सीता बनवास के काल में जिस समय अगस्त्य मुनि के आश्रम में थे, सीता स्पर्धा पूर्वक तपस्वियों की कन्याओं से कहा करतीं थीं—"मेरे स्वामी परस्त्री मात्र को माता तुल्य समझते हैं।" यही नहीं हनूमान ने अशोक बन में राम की दशा का वर्णन करते हुए कहा था—

"सीतेति मधुरां वाणीम् व्याहरन प्रतिबुध्यते"।

"न मांस राघवो भुङ्क्ते न चैव मधु सेवते"।

राम न मांस खाते हैं, न मधु सेवन करते हैं, "सीता" "सीता" यह मधुर शब्द कहते हुये ही उठते बैठते हैं और इसी की उनको रटन है।

"उनकी अन्तरात्मा तुमसे इस प्रकार लगी हुई है कि शरीर पर मच्छर के बैठने, या कीड़े मकोड़े सर्पादि के आ जाने पर उनको नहीं हटाते। नित्य तुममें ध्यान लगाये, नित्त शोकाकुल राम और किसी बात की चिन्ता ही नहीं करते। राम कभी सोते नहीं सोते हुये भी "सीते" ऐसा मधुर वाणी से कह जाग उठते पुष्प या अन्य मनोहर वस्तुओं को देखते ही, लम्बा श्वास ले 'हा प्रिये" कह तुमको पुकारने लगते हैं।"

आजकल हमारी कुछ पश्चिमीय शिक्षा और दीक्षा से दीक्षित विदेशी बहिनों को एक प्रश्न बहुत ही पेचोताव में रखता है। हमारी कुछ बहिनें, जो पुरुषों के ही समान स्वतंत्रता और पूर्ण-स्वतंत्रता प्राप्त करना चाहती हैं, कहने लगी हैं कि यह क्या बात है कि पुरुष यदि मार्ग से भ्रष्ट हो जाता है तो कोई ऊँगली नहीं उठाता, किन्तु अगर किसी स्त्री से कहीं भूल से भी चूक बन पड़ती है तो वह हेय और घृण्य समझी जाती है, फौरन बदनाम हो जाती है, उसका मान आदर सब जाता रहता है, और वह, कुल ही नहीं, समाज के लिए भी कलंक समझी जाती है। वह

कहती हैं कि पुरुष के भूल करने पर तो कहना ही क्या, घोर अन्याय और पापाचार करने पर भी समाज दंड नहीं देता किन्तु हम ग़रीब तनिक सी भूल पर समाज से दुग्ध की मक्खी के समान निकाल दी जाती हैं। इसमें सन्देह नहीं कि हमारी बहिनों का पुरुषों को धमकाने और उनको राह पर लाने के लिए यह सब कहना एक दृष्टि से ठीक है, वर्तमान प्रथा, घोर अन्याय है और इस पुरुष-निर्मित-संसार और सभ्यता का एकतर्फा न्याय है। मेरी समझ में स्त्री और पुरुष दोनों के लिए एक समान न्याय होना चाहिए और इसलिए समाज को, पुरुष को भी उसी प्रकार से दंड देना चाहिए जिस प्रकार से वह स्त्री को दंड देता है। किन्तु न्याय हो या अन्याय हम स्त्रियों को यह सदा स्मरण रखना चाहिए, कि जब तक यह संसार है, पुरुषों का साम्राज्य है, और हमको इसी संसार में रहना है, किसी कल्पित-संसार में नहीं, पुरुष निर्मित नियम न्यायानुकूल हो या सर्वथा न्याय का गला घोटने वाला, हम सब को उसी नियम का पालन करना है, और उस नियम की अवहेलना करना सिवा अपनी खराबी करने के और कुछ नहीं है। बुद्धिमत्ता की बात यही है। "किसी स्त्री का यह कहना कि पुरुष ऐसा करते हैं, मेरा भाई ऐसा करता है और इस-लिए मैं भी वैसा ही करूँगी, मूर्खता होगी, प्रथा की पत्थर की दीबार के साथ सर टकराना होगा और सर्वनाश के सेवा इन बातों का उसके लिए और कोई भी नतीजा नहीं होगा।"

मैं तुमसे इस सम्बन्ध में एक बात और भी कह देना चाहती हूँ और वह यह है कि पुरुष-निर्मित न्याय यह हो, सो ही नहीं है, मेरी समझ में प्रकृति की इच्छा, आदेश और नियम भी कुछ ऐसा ही मालूम होता है। अगर प्रकृति के प्रबन्ध पर गौर करो तो यह दिखाई देता है कि पुरुष ने प्रकृति की सहायता प्राप्त करने पर ही ऐसा नियम बना दिया है। एक स्त्री और पुरुष का साथ

होता है। संसर्ग का फल स्त्री वहन करती है। बच्चे को नौ मास पेट में वह धारण करती है। प्रसव-वेदना के कष्ट को वह सहन करती है, बच्चे को वर्ष भर दुग्ध वह पिलाती है, उसके पालन पोषण का समस्त भार उस पर रहता है, और पुरुष को इन कामों से कोई सम्बन्ध नहीं होता, उसे कष्ट भी कोई सहना नहीं पड़ता, साथ ही स्वतंत्र वह घूमता रहता है तुम्हीं सोचो जब प्रकृति का ही यह एक-तर्फा प्रबन्ध है तो फिर पुरुषों का रोना हम क्या रोयें। "मेरी समझ में तो अगर पुरुषों से कुछ कहा जाय तो वह यही कहेंगे—"हमने क्या किया, प्रकृति का ही यह प्रबन्ध है, हां हमने उसके नियम को तनिक और कड़ा बना दिया है"। मेरी समझ में ऐसी दशा में बुद्धिमता यही है कि जिस तरह खुश खुश हम प्रकृति के अन्याय को सहन करती हैं उसी तरह से हमको पुरुष-समाज के इस अन्याय के सामने भी सर ही झुकाना चाहिए। सच पूछो तो सुखी रहने का एक-मात्र उपाय यही है।

मैं तुम को यह भी बतला देना चाहती हूं कि समाज में जो चाहे दिखाई दे और पुरुष अपनी भूल और अन्याय से जो चाहें करें किन्तु ईश्वर और शास्त्र की दृष्टि में पुरुष भी मार्ग से भ्रष्ट होने पर उतना ही दोषी समझा जाता है और उसी प्रकार दंड पाता है।

पुरुष मार्ग से विचलित हो जाते हैं, पाप कर बैठते हैं, इस कारण से भी स्त्री पुरुष से श्रेष्ट समझी जाती है। "बराहमिहर" ने लिखा है:—

"दाम्पत्येव्युत्क्रमे दोषः समः शास्त्रे प्रकीर्तितः
नरा न तम अवक्षन्ते तेमात्र वरम् अङ्गनाः"

यही नहीं मार्ग से विचलित होने वाले पुरुषों के लिये शास्त्र में

दंड का विधान और प्रायश्चित्त भी मौजूद है। एक स्थित में तो यहाँ तक लिखा हुआ है:—

……………तु षणमासान
वेष्टितः खरचर्मणः
दारातिक्रमणे भित्ताम्
देहित्युक्त्वावु शुध्यति ॥

जिस तरह से तुम देखती हो कि गो-हत्या हो जाने पर हत्या करने वाले को यह चिल्ला कर कि मुझ से यह पाप बन पड़ा है भिक्षा माँग कर कुछ दिनों जीवन यापन कर प्रायश्चित करना पड़ता है ठीक उसी तरह से कुछ स्थिस्तियों में पर-स्त्री का साथ करने से पुरुष के लिए भी प्रायश्चित्त का विधान है। "रतिरहस्य" के लेखक का कहना है:—

असंगृहीत भार्या च…… ………यश्चगच्छति
सूतकं शतकं तस्य ब्रह्महत्या दिने दिने"

एक बात और भी कह दूँ इस संसार में ही देख लो। जिस पुरुष के संबन्ध में तनिक भी ऐसा दोष सुना जाता है उसका वही मान नहीं होता जो उस मनुष्य का होता है जो इस संबन्ध में संदेह से भी परे है। आज महात्मा जी और मालवीय जी के सर्वश्रेष्ठ होने में उनके जीवन की पवित्रता सर्वश्रेष्ठ सहायक हो रही है। ऐसी दशा में यह समझना कि पुरुष पाप करने को बरी हैं ठीक नहीं है।

मेरी इस संबन्ध में दलील और है। तुमको याद होगा कि अपने किसी पत्र में मैंने तुमको लिखा है कि मैं विकास की सीढ़ी पर ऊपर चढ़ते हुए जीवों में एक दृष्टि से स्त्री को पुरुष से आगे बढ़ी हुई समझतीं हूं, कदाचित् मैंने यह भी लिखा था कि अगर स्त्री प्रकृति के अति निकट न होती, अगर वह पुरुष से उसकी राय में भी श्रेष्ठ न होती तो प्रकृति ने अपने अस्तित्व और सर्व-

श्रेष्ठ सृष्टि के कार्य को स्त्री के ही अधीन न किया होता। शास्त्रों में स्त्री का एक नाम "अमृत" है, स्त्री पर ही सृष्टि का समस्त भार है, वह सब की माता है, उसके अच्छी या बुरी होने पर समस्त सृष्टि को अच्छा या बुरा होना निर्भर है, मेरी राय में इसी लिए माता को सदा पवित्र और उच्च-मंच पर आसीन रखने के लिए ही प्रकृति ने भी ऐसा ही प्रबन्ध कर दिया है। पिता हीन हो तो विशेष हानि नहीं, माता काम संभाल सकती है माता हीन हो तो काम सारा बिगड़ जायगा। माता सदा श्रेष्ठ, पवित्र और पूज्य रहे, इसी नीयत से पुरुष ही ने नहीं मेरी राय में प्रकृति ने भी प्रारम्भ से ही एक तर्फा न्याय किया है और इसलिए पुरुषों को इस सम्बन्ध में दोषी समझना भूल है।

प्रकृति ने उपर्युक्त सब बातों को सोच कर एकतर्फा प्रबन्ध किया है, साथ ही मैं यह भी समझती हूँ कि सदा हृष्ट-पुष्ट पवित्र आत्मा वाली सन्तानें पैदा हो, मानव समाज सदा विकास की सीढ़ियों पर ऊपर ही चढ़ता जाय और हीन निकम्मी सन्तानों की पैदावार से सृष्टि का काम एक दिन सत्यानाश न हो जाय, इसलिए भी प्राकृति का यह प्रबन्ध है कि स्त्री सदा सती पवित्र और मनुष्य से श्रेष्ठ हो। माताएं निकम्मी होने लगेंगी तो सृष्टि के विकास का काम सहसा एक दिन बन्द हो सकता है, इसके सिवाय, हमारी पुरुष की समता प्राप्त करने की इच्छा रखने वाली बहिनें स्वयं ही यह नहीं कह सकतीं कि हमारी जाति की माताएं, आने वाली सन्तानों की माताएं, किसी तरह से भी अपने पवित्रता के मंच से उतर कर पुरुष-श्रेणी की निम्न-स्थली में आ बैठें क्योंकि इतना तो वह भी जानती ही हैं कि नीचे गिरने से स्त्रियाँ माता के महत्वपूर्ण कर्तव्य का जैसा चाहिए पालन नहीं कर सकेंगी।

अपनी इन बहनों से एक बात और भी कहना चाहती हूं और वह यह कि यदि दूसरे की नाक कटी हुई है तो क्या यह बुद्धिमत्ता है कि हम भी अपनी नाक काट लें और नकटों का पन्थ बढ़ायें। पुरुष पवित्र नहीं हैं, अपवित्र होने पर उनको कोई दोष भी नहीं देता यह तो मेरी समझ में इस बात की दलील न होनी चाहिये कि हम भी अपने जीवन को अपवित्र बना लें।

हम स्त्रियाँ सृष्टि की सर्वश्रेष्ठ और सब से अधिक प्रेम की जीव हैं, हमारा काम सृष्टि को ऊपर उठाना है, हम माताएँ हैं, हमको अपने पवित्र और शुद्ध आचरण से अपनी सन्तानों, पुरुष को, पवित्र-जीवन वहन करने की शिक्षा देनी है, इसलिए हमारा जीवन पवित्र और शुद्ध ही होना चाहिए। पुरुष का एक-तर्फा न्याय सर्वथा अन्याय है किन्तु उस अन्याय को मिटाने का उपाय स्वयं भ्रष्टा होना नहीं हो सकता। मेरी राय में पुरुष को सदाचारी बनाने के लिए आवश्यक यह है कि उसके सामने हम सदा अच्छा आदर्श अपने आचरण से-उपस्थित करें, उसे उस आदर्श-जीवन को वहन करने को उत्साहित और प्रोत्साहित करें, हम अपने आदर्श जीवन के सुख से ऐसी सुखी बनें कि उसी प्रकार से आदर्श-जीवन वहन कर सुखी होने को हमारा बच्चा, पुरुष समाज भी लालायित हो। यही नहीं हम अपने पातिव्रत की महिमा दिखा कर पुरुषों को एक पत्नीव्रत धारण करने को प्रोत्साहित कर सकती हैं, हम अपनी पवित्रता से मार्ग-भ्रष्ट पुरुषों को हेय दृष्टि से देखकर, उनको अपने से सदा दूर रख कर और सार्वजनिक मत को पुष्ट कर पुरुष-समाज को ठीक रास्ते पर लाने का प्रयत्न कर सकती हैं, साथ ही धीरे धीरे हम प्राचीन प्रथा और प्रकृति के इस प्रबन्ध को—पति-पत्नी संसर्ग केवल गर्भाधान के लिए हो साथ ही स्त्री के गर्भ होने पर पति पत्नी दोनों ही पूर्ण ब्रह्मचर्य से रहें—फिर जारी कर पुरुष समाज को सुमार्ग पर ला

सकती हैं। सार्वजनिक मत को पुष्ट करने की बात मैं पहिले कह चुकी हूं, अपने आदर्श और चरित्र को पवित्र बनाये रह कर पुरुष को उसके अनुसरण करने को प्रोत्साहित करने की बात भी मैं कह चुकी हूँ, इनके साथ ही साथ एक तीसरा उपाय और भी है और वह है किसी भी चरित्र- भ्रष्ट पुरुष या किसी भी ऐसे पुरुष का, जिसने हमारी किसी भी बहिन का अपमान किया है, या उसके प्रति अन्याय किया है, सामाजिक बायकाट। हम सब बहिनें आपस में अपनी सभा के द्वारा यह निश्चय कर सकती हैं कि दुराचारी पुरुष हमारे घरों में घुसने नहीं पायेगा, और हमारे घर वाले उससे किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रखने पायेंगे। आवश्यक यही है कि हम बहिनों में शिक्षा हो, हम मिल कर काम करना सीखें और अपने निश्चयों को कार्यरूप में परिणत करने की शक्ति प्रदर्शित करें। सोचो तो अगर हम सब यह करने लगें तो क्या संसार में एक भी पुरुष ऐसा हो सकता है जो किसी भी स्त्री के साथ अन्याय, पाप या विश्वास घात कर सके। किन्तु इसके लिए हमको अपने दुर्गा और काली के रूप का स्मरण करना होगा, अपनी पवित्र शक्ति का प्रयोग करना होगा और इसके लिए समय की आवश्यकता है।

पुरुष-प्रकृति इस समय में बिगड़ी हुई है, सुधार धीरे धीरे ही होगा किन्तु हमको यह भूलना नहीं चाहिए कि हम स्त्रियां ही सभ्यता और संसार को ससस्त अच्छी बातों की रचयित्री, आविष्कर्त्री और जन्म-दात्री हैं, और जीव मात्र में हम से श्रेष्ठ सुधारक (reformer) कोई नहीं है। हम ही विशिष्टसभ्यता की प्रचारिका और (Soldiers) सैनिक हैं और सैनिकों की सबसे बड़ी विशेषता (enpurance) सहन शक्ति और (obedience) नियम और विधि का पालन है।

अपने बच्चों की भलाई के लिए इसलिए आवश्यक यह है कि स्त्रियाँ स्वयं चरित्र-भ्रष्टा न बनें वरन् अपने आदर्श-जीवन से पुरुषों को इस बात पर विवश करें कि वे अपनी हरजाई प्रकृति का सुधार करें।

मैंने तुम को किसी पत्र में लिखा था कि पुरुष अन्ततोगत्वा स्त्री का ही शिशु है। वह कितना ही बड़ा क्यों न हो जाय वास्तव में वह शिशु के ही समान होता है और अगर ठीक से रखा जाय, ठीक से चलाया जाय तो वह ठीक रास्ते पर रखा जा सकता है। "पुरुष स्वाभावत: बुरे नहीं होते, वे अपनी स्त्रियों के साथ अच्छा और न्याय ही का व्यवहार करना चाहते हैं, वह उनसे सहानु-भूति रखते हैं और उन पर दया भी दिखाना चाहते हैं, सुपति, सुपिता और सुपुत्र बनने की उनमें प्रवृत्ति जन्म से ही होती है, केवल आवश्यकता इसकी है कि एक चतुर स्त्री उनको चलाये, फिराये, उनसे काम कराये, और यह सब करते हुए उनका नेतृत्व स्वयं अपने हाथों में रखे।"

तुम बड़े बाप की बेटी हो, सती हो, सदा तुम को यह ध्यान रहता है कि कोई काम तुम से ऐसा न बन पड़े जिस से तुम्हारी माता की हंसी हो या उन का सर नीचा हो, तुमको इतना सब लिखने की तनिक भी जरूरत न थी किन्तु फिर भी मैंने यह सब लिख दिया इसलिए कि कभी यदि समाज में कोई स्त्री इस तरह के प्रश्न उठाये तो तुम उसकी बातों का पूर्ण रूप से खंडन कर सको, उसे उसकी भूल बतला कर मार्ग से भ्रष्ट होने से बचा लो और उसे समझा दो कि नियम प्रकृति का ठीक है, माता का पवित्र रहना सर्वथा जरूरी है, अगर पुरुष बिगड़े हैं, तो उनको सुधारना हमारा धर्म है न कि उन की बराबरी करने के नाम पर स्वयं भ्रष्ट होकर अपने आदर्श से पतित होना और अपने अस्तित्व को मिटाना। हम श्रेष्ठ हैं, हम अपने उच्च मंच पर

से नीचे क्यों लुढ़कें ? हमारा सिद्धान्त सदा यह होना चाहिए कि हम सुधारिकाएँ हैं, हम अश्रेष्ठ, नीचे पड़े हुए पुरुषों को उठा कर ऊपर लाने की चेष्टा करेंगी किन्तु उनके लिए हम अपने श्रेष्ठ पद का त्याग कभी नहीं करेंगी। याद रहे, कोई भी स्त्री अपने मार्ग से भ्रष्ट होकर न इस संसार में आदर प्राप्त कर सकती है और न अपने जीवन के उद्देश्य की ही सिद्धि कर सकती है।

शीला, आज मेरा वादा पूरा हो गया। एक नववधू को अपना, अपने पति, अपने बच्चों और अपने समाज के जीवन को सुखमय बनाने के लिए जिन बातों को जानना चाहिए प्रायः उन सब की ही चर्चा मैंने अपने पत्रों में, निस्सन्देह ही सूक्ष्मरूप में, कर दी है। मैं यह दावा नहीं करती कि कोई महत्वपूर्ण बात मुझ से छूटी नहीं, मैं पंडिता नहीं, साथ ही मानव हूँ, भूल का हो जाना सम्भव ही है, साथ ही पत्रों में संसार भर की समस्त बातों का समावेश हो भी नहीं सकता किन्तु मेरा दावा यह ज़रूर है कि जान में मैंने महत्वपूर्ण बातों को छोड़ा नहीं, साथ ही मेरी समझ में वैवाहिक जीवन को सफल बनाने के लिए जितनी बातें नितान्त रूप से आवश्यक हैं, प्रायः सब ही की चर्चा मैंने कर दी है, अब इस सम्बन्ध में केवल एक अन्तिम पत्र कल तुमको लिखकर मैं इस पत्र-माला को समाप्त करूंगी। इस अन्तिम पत्र को माला की सुमिरनी की भांति तुम महत्वपूर्ण समझना और उसकी बातों को सदा ध्यान में रखना।

तुम्हारी

शान्ति

आदिशक्ति

शान्ति कुटी
शिमला
५-६-२७

शीला,

मेरी पत्र-माला की यह अन्तिम गुरिया है। यूँ तो वैवाहिक-जीवन को सुखमय बनाने के लिए जितनी बातें आवश्यक हैं उनका जिक्र मैं तुमसे कर चुकी हूं किन्तु फिर भी जो कुछ मैं अब लिखने जा रही हूँ यदि यह न लिखती तो पत्र माला प्रायः अधूरी सी रहती, साथ ही पत्र-माला के उद्देश्य की सिद्धि भी न होती। जिन बातों को मैं अब लिखने जा रही हूँ वह किसी भी दृष्टि से कम महत्व की न होकर वास्तव में सबसे अधिक महत्व की हैं और मैं आशा करती हूं, जैसा कि मैं लिख भी चुकी हूं, कि पत्र-माला की सुमिरनी की ही भांति तुम भी इस पत्र को सब से अधिक महत्व प्रदान करोगी।

मैंने इस पत्र को "आदिशक्ति" के शीर्षक से विभूषित किया है, क्योंकि मैं तुम्हारे हृदय-पटल पर इस बात को नक्श कर देना चाहती हूं कि स्त्री, सृष्टि की आदिशक्ति का रूप ही नहीं वरन् स्वयं आदिशक्ति है। स्त्री आदिशक्ति है, स्त्री देव-दूतिका है, लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा, काली, उसी की एक एक कलाओं के विशिष्ट रूप का नाम है, तुम इस सत्य को कभी मत भूलना। तुम यह भी सदा ध्यान में रखना कि सृष्टि की ही नहीं, ईश्वर की भी, स्त्री प्रधान सेनानायिका, और दक्षिण भुजा है, स्त्री ही दैवी विश्वकर्मा है और उसके जीवन का एक महत्-उद्देश्य है।

संसार ने और मानव-समाज ने यह मान कर कि स्त्री पुरुष के लिए पैदा की गई है, बड़ी भूल की, और सच मानो, एक इसी भूल के कारण संसार सुख का स्थल न रह कर दुख, दारिद्रय, मार-काट और सहस्रों ही कष्टों का केन्द्र बन गया है। तुम को ही नहीं स्त्री-समाज और पुरुष-समाज के प्रत्येक व्यक्ति को यह जानना चाहिए कि पुरुष ने स्त्री को नहीं वरन् स्त्री ने पुरुष को जन्म दिया है, अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिए और यह कि जिस तरह से स्त्री-जीवन के उद्देश्य की पूर्ति के लिए पुरुष का होना नितान्त आवश्यक है ठीक उसी तरह से पुरुष-जीवन के उद्देश्य की सिद्धि के लिए स्त्री का जन्म अनिवार्य रूप से आवश्यक है। दोनों अपने जीवन की महत्ता को प्राप्त कर सकें, दोनों संसार में अधिक से अधिक सुख प्राप्त कर सकें इसीलिए दूसरे का जन्म हुआ। ऐसी दशा में यह समझना कि स्त्री दासी है, सेविका है, वह पुरुष की सेवा और उसके शारीरिक तथा मानसिक वासनाओं की तृप्ति के लिए पैदा की गई है, भारी भूल है।

स्त्री-जीवन का एक भिन्न उद्देश्य है, उसके अस्तित्व का एक भिन्न कारण है और प्रत्येक स्त्री को यह सब सदा ध्यान में रखना चाहिए। यही नहीं, प्रत्येक स्त्री का कर्तव्य है कि वह अपने जीवन के उद्देश्य को सदा अपने दृष्टि-पथ में रखे और उसकी सिद्धि के लिए निरत परिश्रम करती रहे।

एक स्त्री इसलिए विवाह नहीं करती और न केवल इसलिए किसी स्त्री को विवाह करना ही चाहिए कि रहने को घर मिल जाय, उदर की ज्वाला को शान्त करने को भोजन, तन ढकने को कपड़ा और इस प्रकार से उसकी इन्द्रियगत वासनाओं और आवश्यकताओं की तृप्ति होती रहे। स्त्री को विवाह करना चाहिए। संसार को अधिक से अधिक संतोष और सुख का स्थान बनाने के लिए, अपने व्यक्तित्व के अधिक से अधिक विकास के हेतु, अपने

बच्चों के लिए सर्व सुखों की देनेवाली माता बनने के लिए और अपने पति की सच्ची सहानुभूति-पूर्ण, मिश्री की डली के समान मधुर सहचरी बनने के लिए। ऐसा करने पर ही पति उसे एक अपने आराम की वस्तु नहीं समझेगा, वह उसे शारीरिक काम-नाओं की पूर्ति के लिए निर्जीव दुग्ध, मलाई, मक्खन या रबड़ी सी वस्तु नहीं समझेगा और वह उसके पास उसी तरह से आयेगा जैसे कि वह अपने बराबर वाले पुरुष-मित्रों के पास जाता है। हमको यह ध्यान में रखना चाहिए, जैसा कि मानव-विवाह के इतिहास में वेस्टरमार्क नामक पश्चिमीय विशेषज्ञ ने लिखा भी है :—

"मानव-विवाह का इतिहास, उस "सम्बन्ध" का इतिहास है जिसमें स्त्रियां पुरुष की स्वार्थपरता पूर्व-प्रवृत्ति, जोश और भावुकता पर धीरे धीरे सदा विजय प्राप्त करती रही हैं।"*

हमारी सभ्यता में, हमारे धर्म-ग्रन्थों में, स्त्री का कुछ आदर था, वह सदा सहधर्मिणी के नाम से पुकारी गई, किन्तु पुरुष के स्वार्थ ने, हमारी अयोग्यता और संसार के चक्र ने हमको भेड़, बकरी या एक सुख की सामग्री का रूप दे दिया और अपनी कमज़ोरी तथा कायरता, अपने जीवन के उद्देश्य को विसराने और अपने अस्त्रों को हाथों से रख देने से आज हम कहीं की भी नहीं रह गईं और इस हीन दशा को पहुँच गई हैं कि मालूम पड़ता है कि कवि ने हमारे लिए ही लिख दिया है—

---

*"The history of human marriage is the history of a relation in which woman have been gradually triumphing over the passion. The prejudices, and the selfish interests of man."

WESTERMARCK

"दिन कटा फ़रियाद में और रात ज़ारी में कटी।
उम्र कहने को कटी, पर क्या ही ख़्वारी में कटी॥

बहिन! आर्य-सभ्यता से ऊँचा, और अधिक आदर का स्थान हम ग़रीबों को किसी भी सभ्यता में नहीं मिला, फिर भी आज हमारी दशा यह है।

एक सभ्यता में स्त्रियाँ केवल काम-वासना की तृप्ति और इन्द्रिय-परायणता की साधन मात्र समझी गईं। यह सच है कि इसने स्त्रियों के शारीरिक सुख और समृद्धि के लिए उनको तरका और देन-मेहर दिलाया, यही नहीं इसने उनको जायदादों में भी हिस्सा दिया किन्तु हम स्त्रियों के व्यक्तित्व और आत्मा के विकास की इसने तनिक भी चिन्ता नहीं की। बड़ी विचित्रता की बात इसने यह की कि इसने पुरुषों को इच्छा होते ही पत्नी को तलाक़ दे देने का अधिकार दिया किन्तु स्त्रियों को भी पतियों को तलाक़ देने का इसने अधिकार नहीं दिया। इसने हुक्म उलटा यह जारी किया कि पति की आज्ञा से ही पत्नी तलाक़ दे सकती है। इसका अर्थ यह है कि पति पत्नी को जितना चाहे भूने वह कुछ नहीं कर सकती। साथ ही इसका अर्थ यह भी है कि पुरुष सब कुछ है, स्त्री कुछ भी नहीं। एक शायर के शब्दों में "आप ही सब कुछ हैं गोया दूसरा कुछ भी नहीं"। एक दूसरे धर्म ने हमारी और भी मिट्टी खराब की, इससे पुरुष के सुख की एक सामग्री के सिवा स्त्रियों के जीवन का कोई अर्थ ही नहीं समझा। भारतीय सभ्यता के समान स्त्रियों का कुछ मान, रोम, एथेन्स और कोरिन्थ की सभ्यता में था। रोमनकाल में सब से अधिक स्वतंत्रता का उपभोग हम ग़रीबों ने किया किन्तु फिर भी भारतीय सभ्यता के समान आदर का स्थान हमको इसमें भी नहीं था; हाँ, स्वतंत्रता अधिक जरूर थी जिसे हमने अपनी कमज़ोरी और सदा पुरुष को प्रसन्न रखने के फेर में रहने के कारण खो दिया। मानव-समाज के

एक अङ्ग के दूसरे आधे अङ्ग को गुलामी में रखने का जो दुःखदायी नतीजा हुआ वह संसार आज अनुभव कर रहा है और यह प्रसन्नता की बात है कि अब पुरुष-समाज, इङ्गलैण्ड के कवि "टेनीसन" के निम्नलिखित उपदेश को मानने लगा है—

*नारी का हित नर का हित है,
उन्नति अवनति उनकी साथ।
वामन से लघु, दीघ देव से,
बद्ध मुक्त भी हैं वे साथ॥
यदि अभागिनी तुच्छ प्रकृति की,
नारी होवें नीच कहीं।
कैसे पुरुष समुन्नत होगा ?
रहते जब वे प्रथक् नहीं॥

---

*"The woman's cause is man's, they rise or sink.
Together, dwarfed or God-like, bond or free.
If she be small, slight-natured, miserable,
How shall man grow ? But work no more alone.
Let man be more, of woman, she of man;
He gains in sweetness and in moral height.
Nor lose the wrestling thews that throw the world;
She mental breadth, nor fail in childward care.
Nor lose the child-like in the larger mind,
Till atlast she herself to Man.
Like perfact music unto noble words;
And so these twain, upon the skirts of time.
Sit side by side, full summed in all their powers,
Dispensing harvest, sowing to be."

होने दो नर को नारी से,
और नारि को नर सी भी।
पाकर सदाचार उत्तमता,
वह माधुर्य गुणों को भी।
खो न सकेगा विश्व विजयिनी,
रण बाँकुरी नसों को भी।
मन श्शक्ति विकसित पाकर वह,
निज गार्हस्थ्य न भूलेगी।
इस विकास में, बाल-सरलता,
कभी नहीं वह खोवेगी।
तब निदान वह पुरुष रूप में,
सब प्रकार मिल जावेगी।
दिव्य-काव्य में मधुर राग सी,
हो जावेगी पूर्ण विलीन।
यों नर नारी साथ युग्म हो,
समयासन पर हो आसीन।
केन्द्री-भूत शक्ति रख सारी,
सुख समृद्धि की करते वृष्टि।
करते हुए "रसाल" निरन्तर,
शुभ भविष्य की सुन्दर सृष्टि।

("रसाल")

यह प्रसन्नता की बात है कि आज कल हमारी पश्चिमीय संसार की बहिनें पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करने और अपने व्यक्तित्व पूर्ण विकास के लिए सचेष्ट हैं, हमारी पुराने जमाने की गुलामी और दासता की बेढ़ियाँ कटती जा रही हैं और यह आशा की जाती है कि अपने स्त्रीत्व और व्यक्तित्व के पूर्ण विकास और अभिवृद्धि का हमको अबसर मिलेगा।

इस नव-स्त्री-समाज के उपयुक्त ही एक नवपुरुष-समाज का भी जन्म हो गया है, यह पुरुष-समाज स्त्रियों को स्वतंत्र देखना चाहता है, यह स्त्रियों की पुरुषों की समानता को भी स्वीकार करता है और हर तरह से स्त्रियों को उनके जीवन के उद्देश्य की सिद्धि में सहायता देने को उत्सुक है। आधुनिक पुरुष का यह विश्वास है कि सृष्टि के सर्वोत्तम विकास के लिए यह आवश्यक है कि स्त्रियां पूर्णरूप से, केवल इन्द्रियोपासना की बातों को छोड़, जीवन के सब विभागों में उसी तरह से स्वतंत्र हों जैसे कि पुरुष।

हम अपनी बहिनों के प्रयत्न में योग दे सकें अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास प्राप्त कर सकें, हम अपने जीवन के उद्देश्य की सिद्धि कर सकें, इस लिए हमारा, तुम्हारा और हमारी तुम्हारी प्रत्येक बहिन का यह धर्म है कि हम सब इस अर्थ की सिद्धि के लिए प्रयत्न करें।

मैंने किसी पिछले पत्र में स्त्री-जीवन के उद्देश्य की चर्चा की थी। मैंने यह बतलाया था कि वह बड़े बड़े हर्फों में सेवा है, मैंने यह भी लिख था कि वह सेवा केवल पति की सहायिका, संरक्षिका, सुख पहुँचाने वाली सहचरी होना, या उसके लिए स्वर्गीय सुख का केन्द्र होना ही नहीं है वरन् वह सेवा है पुरुष को देवत्व की ओर ले जाना, वह सेवा है वर्तमान-स्त्री को विकास की सीढ़ियों पर ऊपर चढ़ाना और भावी पुरुष-समाज, अपनी आने वाली सन्तानों को अधिक उपयोगी, पूर्णरूप से सुखी और सच्चा सुखी बनाना*।

*"And the Lord God said" It is not good that the man should be alone; I will make him an help mate for him—

Genesis chap II

आज मैंने तुमको बतलाया है कि स्त्री, आदिशक्ति है, दैवी-विष्वकर्मा है सृष्टि ही की नहीं वरन् ईश्वर की वह प्रधान सेना-नायिका और दक्षिण-भुजा है तुम से छिपा नहीं कि स्त्री का सर्वश्रेष्ठ रूप माता है और सच मानो इससे मधुर, इससे सुखकर शब्द, इससे सुन्दर रूप, सृष्टि और संसार में कोई दूसरा नहीं। संसार का समस्त त्याग, संसार का समस्त प्रेम, संसार की सर्वश्रेष्ठ सेवा, संसार की सर्वश्रेष्ठ उदारता, एक माता शब्द में छिपी पड़ी है। तुम संसार में सच्ची माता बनो, तुम अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास कर सको और तुम अपने जीवन के उद्देश्य की सिद्धि कर सको यह मेरे ही नहीं तुम्हारे भी जीवन की सबसे मधुर कामना होनी चाहिए।

यह कैसे हो, इस संबन्ध में मैं बहुत कुछ लिख चुकी हूं और जो आवश्यक है उसकी पूर्ति अब मैं किये देती हूं। सब से पहिली बात यह है कि यह कभी मत भूलना कि तुम्हारा व्यक्तित्व पुरुषों से भिन्न है, तुम्हारे जीवन का उद्देश्य भी भिन्न है और इस सब की सिद्धि के लिए जिन विशेषताओं का मैं जिक्र पिछले पत्रों में कर चुकी हूं उनके सिवा कुछ और विशेषताओं की भी चरित्र में आवश्यकता है। तुम ईश्वर की सहायिका और दक्षिण भुजा हो, तुमको मानव-समाज को देवत्व की ओर ले जाना है, इस लिए तुम में देवियों के गुण होने चाहिएँ। माता में देवियों और देवताओं के समस्त गुण होते ही हैं किन्तु सर्वश्रेष्ठ जिस गुण की तुमको आवश्यकता होगी वह कृष्ण का यह गुण है :—

"सत्कृतो असत्कृतोवापि न क्रुध्येत् जनार्दन।
नालमेनवज्ञातुम् नावज्ञेयोहि केशवः"* ॥

"*युवतिश्च जित क्रोधा यथा शास्त्र प्रवर्तिनी
करोति वश्यं भर्तारं सहत्मीश्चाधि तिष्ठति"

महर्षि व्यास ने लिखा है कि कोई सत्कार करे या अनादर कृष्ण को क्रोध नहीं आता था, कोई उनकी अवहेलना नहीं कर सकता था और न कोई उनका अपमान ही कर सकता था।

एक स्त्री को, जो अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करना चाहती है और जो अपने जीवन के उद्देश्य की सिद्धि चाहती है, भगवान् कृष्ण के इस गुण की सर्वश्रेष्ठ आवश्यकता है किन्तु ईश्वर के लिए इसका अर्थ यह मत समझ लेना कि कृष्ण के हृदय न था, उनमें दुःख और दर्द न था, उनको चोट नहीं पहुँचती थी या बुरा व्यवहार होने पर वह उसे अनुभव नहीं करते थे। महर्षि व्यास के कहने का अर्थ इतना ही है कि वह क्रोधित नहीं होते थे, वह सहसा क्रोध प्रदर्शित नहीं करते थे, क्रोध उन पर हावी नहीं हो जाता था और यह कि अपने व्यक्तित्व को उन्होंने ऐसा बना लिया था कि कोई उनकी अवहेलना या अवज्ञा कर ही नहीं सकता था। चतुर, सफलता-लाभ करने की इच्छा रखने वाली स्त्री को इस लिए यह सदा ध्यान में रखना चाहिए कि क्रोध को वह कभी प्रकट न होने दे, साथ ही अपने को इस तरह से बनाये रहे कि उनकी कोई अवहेलना या अवज्ञा न कर सके; अवहेलना तथा अवज्ञा करने की इच्छा रखने वाला व्यक्ति अपना प्राण-पति ही क्यों न हो प्रत्येक स्त्री का धर्म यह भी है कि उसे स्त्री होने का अभिमान हो और प्रत्येक मिनट उसे स्त्री के पद को ऊँचा करने की फिक्र हो। तुमको पुरुषों को सिखलाना है कि वे स्त्रियों का आदर करना सीखें,❀ स्त्रियों को वे एक सुख की सामग्री, नाचीज़ और हेय न समझें, स्त्रियों को वे सदा आदर की दृष्टि से देखें, स्त्रियों के सम्बन्ध में अपमान जनक बातें मुँह से न निकालें और उनकी मौजूदगी में या उनकी अनुपस्थिति में उनके सम्बन्ध में फूहर हँसी न करें।

❀"हेम दान गज दान ते, बड़ो दान सम्मान"

एक बात और भी बताये देती हूं। एक स्त्री को बिना आपत्ति किये अन्याय या अन्य अनुचित बातों को सहन नहीं कर लेना चाहिए❀। जो स्त्रियां ऐसा करती हैं वे स्त्रियों के पद को नीचा करती हैं, उनको सस्ता बनाती हैं और दूसरी स्त्रियों के मार्ग को भी कठिन बनाती हैं इस बात को तुम वेद-वाक्य ही समझो कि सेवा का अर्थ दासता, गुलामी कभी और कहीं नहीं है।

संसार में ऐसे अनेक श्रेष्ठ मनुष्य हैं जिनकी सेवा, और अन्ध-आज्ञा-पालन भी बिना किसी संकोच के की जा सकती है, किन्तु यह मनुष्य वास्तव में श्रेष्ठ होते हैं और श्रेष्ठों के समान इनमें नम्रता का गुण होता है, स्त्री के आत्म-समर्पण को यह उसके सच्चे प्रेम का सुबूत, उसका बड़प्पन और उसके चरित्र की मधुरता समझते हैं। याद रखना एक आत्माभिमान-शून्य दासी स्त्री किसी श्रेणी के भी पति के प्रेम को बहुत दिनों वहन नहीं कर सकती। वह कुछ दिनों में पति के प्रेम से हाथ धो बैठती हो सो ही नहीं, वह अपने बच्चों का भी नाश सम्पादित करती है, वह उनको शोख, जवाब देने वाला शिष्टता—विहीन दूसरों का अनादर करने वाला बना देती है और घिलौने में स्त्री-समाज को बदनाम करती है। याद रहे, एक स्वाभिमानिनी, मनस्विनी, सच्ची सहचरी, बराबर की मित्र, और अपने बच्चों की माता ही पति के प्रेम और आदर की अनन्त-काल के लिए अधिकारणी बन सकती है। इस बात को भी सदा ध्यान में रखना कि पतिदेव तुम्हारा आदर तभी करेंगे जब वह देखेंगे कि तुम स्वयं अपना आदर करती हो और अपने को आदर की पात्री समझती हो।

❀"कबहुँ सिधाइहु ते बड़ दोषू"
"कहूँ कहूँ गुण दोष तें उपजत दुःख शरीर
मधुरी बानी बोल के, परत पोंजरें कीर"

किन्तु, बीबी रानी, इसके साथ ही, "वात्स्यायन," के इस उपदेश को भूल न जाना—"नायकापचारेषु किंचित कलुषिता नात्यर्थम् निर्वदेत्। साधिक्षेप वचनं मित्रजन मध्यस्थमेकाकिनं वाष्युपालभेत। न च मूलकारिका स्यात्॥

(कामसूत्र)

"नाधिक्षेपः कार्यः कलुषितया नायकाचारे।
मित्रजन मध्यवृत्तिं वूयादेकाकिनंचैव॥"

(कन्दर्प चूड़ामणि)

नायक के आचरण से दुखी और कुपति भी, भार्या दूसरों के सामने, या जब अन्य लोगों के साथ नायक बैठा हुआ है, उसका तिरस्कार न करे, और न जवाब ही दे, जब पति अकेला हो तभी जो कुछ पत्नी को सुनाना हो, पति को सुना दे। क्रोध के साथ नहीं, गम्भीरता के साथ। समझीं? नहीं तो बीबी रानी, घर बनने की अपेक्षा, बनने के पहिले ही ढह जायगा और स्त्री-जीवन के उद्देश्य और सर्वगुणों पर पानी फिर जायगा।

दूसरी बात जो तुम को ध्यान में रखनी चाहिए यह है कि स्त्री को नितान्त रूप से त्यागी और स्वार्थ-विहीन होकर, पतिदेव को किसी तरह का कष्ट न हो, इस ख्याल से, पतिदेव को निकम्मा स्वार्थी-पशु और सदा पत्नी को ही कष्ट देकर काम लेने वाला नहीं बना देना चाहिए। चतुर पति को भी यह सदा ध्यान में रखना चाहिए कि "सेवा तथा आज्ञा-पालन जो प्रेम विहीन है और जो केवल दासता के भाव से प्रेरित है, स्त्री की आत्मा को कुछ दिनों में आभा-हीन बना देता है, साथ ही प्रेम, जिसका एक मात्र अर्थ दीनता-पूर्ण आत्म-समर्पण है, स्त्री के मस्तिष्क और उसके प्रेम को चमत्कार-हीन और ज्योति-विहीन बना देता है।"

बीबी रानी, यह सदा याद रखना कि विवाह के विरुद्ध कितना कुछ क्यों न कहा जाय, उससे सुख प्राप्त करना कितना कठिन क्यों न हो, और संसार को हम माया का जीता-जागता रूप कितना ही क्यो न समझें, इस संसार में सुखी होना, और अधिक से अधिक सुख प्राप्त कर सकना संभव ही नहीं, निश्चित है, यदि हम इस बात को ध्यान में रखें कि सुख, चन्द्रमा या सूर्य के प्रकाश के समान आप से आप छप्पर फाड़ कर नहीं आ जाया करता, अगर हम इस बात को याद रखें कि सुख, सुखी होने और सुखी रहने का अधिकार प्राप्त करने से ही मिलता है और सुखी वही हो सकती है जो सुख को खरीद सके, और जो सुख की पात्री बनने के योग्य हो। सच पूछा जाय तो "जीवन न परियों की कथा है, न बसन्त का स्वप्न, न वह रेगिस्तानी यात्रा है, जिसे विवश हो, मन मार कर किसी तरह से पूरी करना ही है, न वह दुलहन की रंगीन ओढ़नी या रंगीन महकता हुआ वसन है और न वह विधवा की सादी, सफ़ेद, मोटी, दुखदर्द में सनी और भीनी, दुख की कथा कहने वाली चादर ही है।" सुख की चाह मानो-हृदय में इस मजबूती के साथ जमाई ही न गई होती अगर सुख का मन्दिर किसी सुदूर मंज़िल पर यात्री के समस्त कष्टों को मिनटों में हर लेने के लिए बना हुआ न होता।

लज्जा❀ एक दूसरी मनमोहक, लुभाने वाली स्त्री-चरित्र की मधुर विशेषता है। प्रत्येक स्त्री के चरित्र में इसका अच्छा सम्मिश्रण बहुत जरूरी है। इसका प्रभाव पुरुषों पर बहुत पड़ता है, और यह उनकी ही देन भी है। लाखों वर्षों से पुरुष ने स्त्री को

❀ "वह राजा मरता भला जिसमें न्याव न हो
मरी भली वह इस्तरी, लाज न राखे जो"
"बहू शरम की, बेटी करम की"

गुलाम बना कर रखा है। इष्ट-देव, कर्ता, प्रभु वह बना हुआ था। उसको प्रसन्न रखने के लिए, और इस लिए कि वह यही चाहता था स्त्री ने हर तरह से अपने को मिटाया, उसने अपनी इच्छाओं का सम्वरण किया, अपनी भावनओं और कामनाओं को उसने छिपाया, अपने को अपने सच्चे रूप में प्रकट न कर, उसने सदा अपना वह रूप प्रकट किया जो पुरुष को पसन्द था, नतीजा यह हुआ कि अपनी मनोकामनाओं, अपने भावों और जज़बात को वह छिपाने की आदी हो गई और धीरे धीरे वह केवल (Passive Vessel) निष्क्रिय-पात्र मात्र रह गई। चतुर स्त्री को इसलिए चाहिए कि ज़माने के साथ साथ वह अब अपने को अपने सच्चे रूप में प्रकट करने का प्रयत्न करे, वह लज्जा-हीना न हो किंतु इतनी सलज्जा भी न हो कि छुई मुई, सदा पति की वासनाओं का शिकार और एक ज़र ख़रीद केवल "जी हुजूर" कहने वाली दासी बनी रहे। शास्त्रों में स्त्रियों की प्रशंसा मानिनी और मनस्विनी शब्द से की गई है। निस्सन्देह ही स्त्री लज्जावती-लता हो किन्तु विनय-नम्र, मधुरभाषिणी को स्थिर-प्रतिज्ञ, दृढ़-संकल्प और मानिनी भी होना चाहिए। इसके साथ ही उसको इस बात पर भी सदा ध्यान रखना चाहिए कि वह निष्क्रय-पात्र मात्र नहीं है। पुरुष भी अब निष्क्रिय-पात्रता को पसन्द नहीं करता, साथ ही स्त्री के व्यक्तित्व के विकास के लिए यह आवश्यक है कि जीवन के सभी विभागों में वह क्रियाशील*होने की कोशिश करे।

स्त्री का धर्म यह भी है कि अपनी इच्छाओं, कामनाओं और भावों का वह आदर करे, पति को वह यह अनुभव कराये कि वह आत्मा-विहीन गुड़िया नहीं , उसके पास भी उसी तरह का

---

*active.

एक हृदय है जैसा कि पुरुष के पास होता है और जैसे पति अपने मस्तिष्क और हृदय से परिचालित होता है ठीक उसी तरह से पत्नी भी अपने मस्तिष्क और हृदय से ही परिचालित होती है। स्त्री को इसलिए चाहिए कि पतिदेव को वह अपने हृदय, अपनी भावनाओं और कामनाओं का आदर करना भी सिखलाये। पति की इच्छा ही सदा, सब बातों में सर्वोपरि न रहे, वरन् चतुर पत्नी का यह धर्म है कि जिस तरह से वह पति के भावों का सदा लिहाज़ और आदर करती है ठीक उसी तरह से वह देखे कि उसका पति भी उसके भावों का सदा आदर नहीं तो लिहाज़ तो रखता ही है। इन बातों के लिए यह आवश्यक है कि स्त्री अधिक(frank) स्पष्टवक्ता होना सीख ले। हजारों वर्षों से सदा "जी हुजूरी" अपने को छिपाते रहने के कारण स्त्री स्पष्टवक्ता स्वभाव से ही नहीं रह गई है। इसका एक और फल यह हुआ है कि पुरुष उसे समझ नहीं पाता, वह उसे अज्ञेय और (complex) पेचीदी प्रकृति की कहने लगा है; दूसरी ओर फल यह हुआ है कि स्त्री निश्चेष्ट हो गई है, और व्यक्तित्व को दबाते दबाते अपने जीवन के आदर्श ही को भूल गई है।

तीसरा गुण जो मैं तुममें देखना चाहती हूँ यह है कि तुम में अपने व्यक्तित्व के मान कराने और अपनी बातों को मनवाने की शक्ति हो। मैं यह स्वप्न में भी नहीं चाहती कि हमारी एक भी बहिन पवित्र न हो, सती न हो, पतिभक्ता न हो, आज्ञा-कारिणी न हो किन्तु जो कुछ मैं लिख रही हूँ उसका अर्थ इतना ही है कि इन सब गुणों के साथ ही साथ उसे पूर्णरूप से अपने व्यक्तित्व के मानसिक और आध्यात्मिक विकास के लिए भी प्रयत्न करना चाहिए। कवि "टेनीसन" के शब्दों में ही मैं फिर कहना चाहती हूँ कि—

उठने दो, नारी-सम, उसको।
करने दो, दुनियाँ के कार्य ॥
जिसमें वह कर सके सिद्ध सब।
अपने जीवन का आदर्श ॥
होने दो, स्वाधीन, नारि को।
जीने को, औ बढ़ने को, ॥
सिखने को वह सब दुनियाँ में।
जो न विनाशक उसका अर्थ ॥
क्योंकि, नारि है वह, अविकसित
पुरुष, नहीं है, वह तो, किन्तु ॥
है वह दैवी-आदिशक्ति ही।
सच है यह कुछ झूठ नहीं ॥
यदि, नर-सम, हम उसे बना दें।
मधुर-प्रेम मर जायेगा ॥
है जीवन-बन्धन यह उसका।
जीवन का है, मर्म यही ॥
समता और विषमता होवे।
जो, हिलमिल, हो जाये एक ॥*

(कृ० का० मा०)

---

*Let her make herself her own
To give or keep, to live ond learn and be
All that harms not distinctive womanhood,
For woman is not undeveloped man,
But divine : Could we make her as the man,
sweet love were slain : his dearest bond is this
Not like to like, but like in differences.

यह सब हो ही नहीं सकता यदि आवश्यक होने पर अपने व्यक्तित्व का हम आदर न करा सकें और अपनी बातों को दृढ़ता-पूर्वक कह कर हम मनवा न सकें।

रामायण में अयोध्या काण्ड को पढ़ो और उसमें वर्णित सीता के रूप को देखो, महाभारत में आदिपर्व और वन-पर्व को पढ़ो और समझो, स्त्रीत्व के विकासके चित्र इनमें चित्रित हैं। इनसे तुमको मालूम होगा कि स्त्री-जीवन का अदर्श केवल अपनी इच्छाओं और कामनाओं को पुरुष के अधीन कर देना और "जी हुजूर" कह देना नहीं हैं, स्त्री-जीवन का आदर्श है अपने विचारों को कार्य के रूप में परिणत करने की पूर्ण स्वतंत्रता की वाँछा, पति के साथ अपने स्थान पर मौजूद होने, उसके सुख दुख और उसके प्रत्येक कर्तव्य कर्म में हिस्सा बटाने की लालसा और मनुष्य को श्रेष्ठ मनुष्य बनाने की मधुर कामना।

वन-यात्रा के समय जब राम सीता को समझा बुझा कर घर पर ही छोड़ जाना चाहते थे, जब वह वन को भयङ्कर बता, उसके कष्टों का वर्णन कर, सीता को सहमा देना चाहते थे, सीता ने क्या कहा था ? याद है ? सुनो, कथा ही सुना देती हूँ—राम माताओं से बिदा हो सीता को वन-यात्रा की बात सुनाने गये। राम समझे थे सीता बात सुन कर विकल होंगी, वह सीता को उनके "उच्च पितृ-कुल के संयम सौर सर्वजन-प्रशंसित-चरित्र को स्मरण करा कर उनको आसन्न-परीक्षा के निमित्त उपयोगिनी बनाने की चेष्टा करने लगे, उनके वन जाने के बाद सीता गृह में किस तरह रहें इस सम्बन्ध में उन्होंने एक वक्तृता दे डाली, किन्तु सीता ने उनकी बातों का उपहास करते हुए कहा—"तुम्हारे वन जाने पर मैं तुमसे आगे कुशाच्छन्न और कंटाकीर्ण मार्ग में पैदल वन को जाऊँगी"। राम समझते थे, सीता रोएँगी", कैकेयी

को कोसेंगी, पिता दशरथ को कुछ कहेंगी, किन्तु वहां सीता ने दूसरा ही चित्र खींच दिया। वह वन की रम्यता और पति के साथ उसमें विचरण की मधुर-कल्पना को चित्रित करने लगीं। राम के पुनः समझाने बुझाने की चेष्टा करने पर, तुलसी के शब्दों में, सीता ने वन-यात्रा में अपनी उपयोगता सिद्ध करते हुए इस तरह दलील पेश की:—

"मोहिं मग चलत न होइहि हारी।
छिनु छिनु चरन सरोज निहारी॥
सबहि भाँति प्रिय सेवा करिहौं।
मारग जनित सकल स्रम हरिहौं॥
मैं सुकुमारि नाथ बन जोगू।
तुम्हहि उचित तप मोकहं भोगू॥

"वाल्मीकि" के शब्दों में सीता ने कहा था—"मेरे लिए इस सुरम्य अयोध्या की समृद्धि-सौधमाला की छाया की अपेक्षा प्रियतम स्वामी के श्री चरणों की छाया अधिक श्रेष्ठ है"। राम ने समझा यह कोरी कल्पना-मात्र है, अभी सीता ने वन के कष्टों को जाना नहीं; वह उसको उपवन या रम्य वाटिका समझ रही हैं, वन के कष्टों को जान कर वह सहम जाँयगी। उन्होंने वन की भीषणता के चित्र खींचने शुरू किये। मानिनी सीता, जिनका यह विचार था कि स्वामी को छोड़ साध्वी स्त्री रह नहीं सकती अपने को रोक न सकीं और बिगड़ कर बोली कि "तुमने क्या मुझको तुच्छ शय्यासंगिनी समझ रखा है ?

द्युमत्सेन सुतं वीरं सत्यवानमनुव्रता
सावित्रीमिव माम् विद्धि"

"मुझको द्युमत्सेन के पुत्र सत्यव्रत की अनुव्रता सावित्री समान जानो।" सीता ने यह भी कहा कि "मैं

ब्रह्मचर्य धारण कर तुम्हारे साथ वन में विचरूँगी, इन्द्रियासक्त ही प्रवास में कष्ट पाते हैं।" मगर राम ने फिर भी सीता को समझाने की ही चेष्टा की। सीता का पारा चढ़ गया और सीता ने तड़प कर कहा—"जिसे अपने पास अपनी स्त्री रखते डर लगे ऐसे नारी-रूप-पुरुष के हाथ में मेरे पिता ने मुझ को क्यों सौंप दिया।" इससे भी अधिक कटु बात सीता ने कही:—

"शैलूष इव मां राम परेभ्यो दातुमिच्छसि"

"राम! तुम शैलूश की भांति मुझ को औरों को देना चाहते हो?" इसी को मधु-मिश्रित कर देने के लिए सीता ने यह भी कहा था—"तुम्हारे साथ रहने से, तुम्हारा श्रीमुख देखने से मेरी सब ज्वाला दूर हो जायगी, पथ के कुशकंटकों को मैं राज-महल के बिछौनों से अधिक कोमल समझूंगी।" अशोक के नीचे कैद सीता के पास जिस समय हनूमान पहुँचे, हनूमान ने सीता से कहा—"माता आओ मैं जिस तरह से आया हूँ तुमको उसी तरह से यहां से लेताचलूँ;" किन्तु कैदी सीता ने जवाब दिया—"मैं तब ही, जाऊँगी, जब राम आकर राक्षसों सहित रावण का बध करें और मुझको स्वयं यहां से छुड़ा कर, अपनी शान के साथ, आदर सहित ले जायँ।*"

तुमसे यह भी छिपा न होना चाहिए कि अगर कुन्ती और द्रौपदी न होतीं तो कदाचित् युधिष्ठिर दो चार बिश्वा भूमि लेकर ही सन्तुष्ट हो जाते। अपने देश में सहस्रों ही ऐसी कथाएँ हैं। रोमन-इतिहास में भी ऐसा ही एक चित्र पत्नी ब्रूटस में हमको देखने को मिलता है। पति ब्रूटस एक राजनीतिक षड्यन्त्र रच

---

*"यदि रामो दशग्रीवमिह हत्वा सराक्षसम्।
मामितोगृह्य गच्छेत् तत्तस्य सदृशं भवेत्"

रहे थे। पत्नी को कुछ शक हो गया, उसने पूछा। ब्रूटस ने यह समझ कर कि यह कहीं प्रकट† न कर दे उससे बातें छिपानी चाही और उस पर उसने कहा:—

*स्वीकृत मुझे, कि मैं स्त्री हूँ,
किन्तु नाथ! हूँ वह नारी।
चुन कर, स्थिरमति, ब्रूटस ने
जिसे बनाया निज नारी।
स्वीकृत मुझे कि मैं स्त्री हूँ
किन्तु आर्य! कैसी नारी?
है जो लोकमान्य केटो की
अतिशय ही, कन्या, प्यारी॥
क्या समझे हो? हूं साधारन?
छुईमुई? अबला? नारी?
बड़े बाप की बेटी होकर
औ होकर ब्रूटस-नारी?

(कृ० का० मा०)

किन्तु संसार के समस्त इतिहास में स्वाभिमानिनी स्त्री किस ठाठ से बोलती है इसका सर्वोत्तम चित्र हमको शकुन्तला, जिस समय वह अपने पुत्र को लेकर दुष्यन्त के दरबार में जाती है, दिखाती है। नारी का महत्व, नारी की महिमा, स्त्री क्या है और

---

† "त्रिया सके नहिं बात पचाय" यह पुरानी कहावत भी है।

*"I grant I am a woman; but; withal
A woman that Lord Brutus took to wife
I grant I am a woman : but, withal
A woman well reputed : Cato's daughter.
Think you I am no stronger than my sex
Being so fathered and husbanded?"

उसका आदर किस प्रकार किया जाना चाहिए, महर्षि वेद-व्यास ने इसे शकुन्तला के मुख से कहला दिया है। सब से पहिले जिस समय शकुन्तला को दुष्यन्त पत्नी बनाना चाहते हैं, शकुन्तला, एक ऋषि के आश्रम में पली हुई कन्या, राजा के प्रेम में, या राजा के महान् पद से वशीभूत हो यूँही अपने को समर्पण नहीं कर देती, वह एक बराबर वाली की समान अपनी शर्तें पेश करती है और कहती है—"मेरे ही पुत्र को यदि राज्य का अधिकारी बनाने का वचन दो तब मैं विवाह करूँगी"। सुतवती होने की दशा में जिस समय वह दुष्यन्त के दर्बार में गई और दुष्यन्त ने उसकी अवहेलना की, शकुन्तला ने क्या नहीं कहा? सुनो मैं तुमको दुष्यन्त और शकुन्तला की कथा ही सुना देती हूं।

दुष्यंत :—

"तू नृपकन्या, सत्य, प्रकट यह, ऐसा ही है।*
हे कल्याणी! यथा कहै तू, वैसा ही है॥
हे सुश्रोणि! प्रिये! करूँ क्या सेवा तेरी।
करके चित्त प्रसन्न, बनो तुम भार्या मेरी॥
यों गंधर्व-विवाह साथ मेरे करने में।
सुन्दरि! क्यों यों लगी हुई हो तुम डरने में॥
हे रम्भोरु! श्रेष्ठ कह रहे इसे आर्य हैं"।
यों गंधर्व-विवाह क्षत्रियों को सुकार्य हैं"॥

शकुन्तला :—

"है यह यदि सद्धर्म्म, अगर तुम मम प्रेमी हो।
हे पुरु-कुल में श्रेष्ठ! आप यदि नय-नेमी हो॥
तब सुदान के समय सुनी संकल्प हमारा।
जो कहती एकान्त समय, वह है सच सारा॥

* [पद्यानुवाद, महाभारत, आदिपर्व अध्याय ७३, ७४]

हे प्रभु ! मेरे पुत्र आप से जो होवेगा।
बस वह ही युवराज सत्यतः तव होवेगा ।।
स्वीकृत् है यदि तुम्हें याचना इतनी मेरी ।
होगा तब संयोग, बनूँ मैं दासी तेरी" ।।
वैश० :—
शकुन्तला ने कहे वचन ऐसे बस ज्योंही।
कुछ नृपने तब सोच, कहा "स्वीकृत" त्योंही ।।
हुआ सौभ्य संयोग प्रेमियों का मन भाया।
ओजस्वी सुत शकुन्तला ने निज में पाया ।।
सर्वदमन हो सुवन, दमन का करने वाला।
बाल-प्रभाकर-सदृश, प्रभा का धरने वाला ।।
समय यौवराज्यार्थ कण्व ऋषि ने जब जाना।
उस कुमार का तेज पराक्रम बल अनुमाना ।।
शिष्यों से अरु शकुन्तला से बोले मुनिवर।
"जाओ भूपति-पास कमल लोचन सुत लेकर ।।
"जो आज्ञा", कह, चले शिष्य दोनों को लेकर।
गये भूप दुष्यंत निकट-वन विकट बिता कर ।।
कह कर ऋषि-संदेश, बालरवि सदृश सुवन को।
शकुन्तला को छोड़, शिष्य फिर आये बनको ।।
यों तो वे ऋषि-शिष्य तपाश्रम ओर पधारे।
शकुन्तला ने इधर न्याययुत बचन उचारे ।।
सादर उसने कहा—"पुत्र यह नाथ ! तुम्हारा।
तव सकाश से प्रकट हुआ मुझमें यह प्यारा ।।
देवोपम है इसे नाथ ! युवराज बनाओ ।
निज बचनों को सोच, आर्य ! मुझको अपनाओ ।।
मम सुयोग के पूर्व आपने बचन दिया था ।
कण्वाश्रम में कभी एक संकल्प किया था ।।

सोचो ! सोचो महाभाग !" सुन कर भूपति ने।
बहुत विचारा, किन्तु कहा कुछ भी न सुमति ने ॥
बोले वे तब—" मुझे स्मरण इसका न रंच है।
दुष्टे ! किसकी, कौन, रच रही क्यों प्रपंच है ॥
स्मरण नहीं, सम्बन्ध साथ तेरे है मेरा।
जा, अथवा रह यहाँ, यथा चाहे मन तेरा" ॥
यों सुनकर वह तपस्विनी अति दुःखित रोकर ॥
लज्जा से निश्चेष्ट रही निश्चल सी होकर ॥
ओष्ठसंपुट-स्फुरित ताम्रलोचन अमर्ष से।
लगी देखने वक्र कटाक्षों के प्रकर्ष से ॥
आया तप का तेज रोषमय देह हुई सब।

शकुन्तला :—

बोली—"हे नृप ! जान बूझ यों क्यों कहते अब ॥
प्राकृत जन बन, निडर कह रहे—"नहीं जानता।
दुष्टे ! तेरा कथन रंच भी नहीं मानता" ॥
सत्य अनृत अब एक जानता होगा तव मन।
कह, कर साक्षी उसे, अन्यथा मत अब यो बन ॥
आई हूं मैं स्वयं यहां, हूं प्रतिव्रता मैं।
अर्चनीय, मुनि-सुता सर्वथा धर्मरता मैं ॥
क्यों साधारण नारि सदृश मम करे अनादर।
मैं रोती हूं, सुनै न तू, क्यों ? बनता कादर ॥
भार्या में पति हो प्रविष्ट, सुत हो आता है।
जाया होती नारि, शास्त्र यों बतलाता है ॥
वह अपत्य हो पिता पूर्व पितरों को तारै।
वचन स्वयम्भू यही, नृपति ! तू तनिक बिचारै।

पुं १ कहलाता नर्क, वहाँ हैं जो पितु माता।
देता सुख जो उन्हें, वही है पुत्र कहाता ॥
नारी जो, गृह दक्ष, प्रजावति हो सो भार्या आर्या।
है भार्या नर-अर्ध त्रिफल२ की जड़ है भार्या ॥
श्रेष्ठ सखा है वही, सहचरी पति की भार्या।
भार्यावान, गृहस्थ, तथा श्रीवान उसी से।
क्रियावान हो मनुज तथा सुखवान उसी से ॥
मित्र, प्रियंवद, यही, समय पर सदा सहायक।
माता हो यह, धर्म-पितृ-कार्यों में नायक ॥
जग-वन के मग बीच यही विश्राम दिलाती।
दारा ही है सदा नरहिं विश्वास्य बनाती ॥
है इसमे ही परागती, पतिव्रत रत दारा।
भार्या को जो भरै वही भर्ता३ है प्यारा ॥
अति प्रिय जग में यही, विषम४ में यही सहायिनि।
प्रथम संस्थिता यही प्रतीक्षित है सुखदायिनि ॥

---

१ पुत्र—पुं = नर्क + त्र = त्राण या रक्षा करना, अर्थात् नर्क में अपने पितरों (माता पिता आदि) की रक्षा करने वाला पुत्र कहलाता है।

२ त्रिफल—धर्मार्थ, काम या धर्म, काम, मोक्ष या धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जीवन के इन चार फलों में से तीन फलों का समुदाय।

३ भर्ता—भरति पालपति वा भार्याम् यः सः भर्ता, अर्थात् स्त्री का भरण—पोषण करने वाला व्यक्ति या पुरुष भर्ता कहलाता है।

४ विषम—विषम समय या विपत्ति काल

मृत-पति की अनुचरी सदा हो यह जाती है।
जीवन-मरण सदैव सहचरी हो आती है॥
पाणिग्रहण कर सदा, साथ इसको नर रखते।
लोक तथा परलोक सब कहीं इसको लखते॥
आत्मात्मा५ हो पुत्र जनित, यों बुधजन लखते।
भार्या में नर अतः भाव माता का रखते॥
भार्या में उत्पन्न पुत्र-आदर्श देखकर।
पुण्यवान हो जनक मुग्ध सुख-स्वर्ग लेखकर॥
व्याधिव्यथित अरु दुःख-दग्ध नर नित सुनारि से।
पाते हैं सुख-शान्ति, यथा धर्मार्त वारि से॥
अप्रिय करै न पुरुष, मिले यदि वह अभिरामा।
धर्म-प्रीति-रतिकरी लखै उसको प्रिय वामा६॥

---

५ आत्माआत्मा—आत्म = अपनी + आत्मा = आत्मा—जो अपनी ही आत्मा या उसके ही समान हो, तथा अपनी आत्मा से उत्पन्न हो—"आत्मुवजायते पुत्र"—इति श्रुतेः—वेद का कथन है कि पुत्र आत्मा के ही या अपने ही समान उत्पन्न होता है।

६ वामा—वामे,—भागे तिष्टति वर्तते वा या सा वामा अर्थात् जो स्त्री अपने वाम भाग में रहे उसे वामा कहते हैं। अथवा जिसे अपना वाम भाग दिया जाये, या वहां स्थान दिया जावे उसे वामा कहते हैं। हमारे यहां विवाह होने पर स्त्री को पुरुष के वाम भाग में ही स्थान मिलता है और वह पुरुष के वाम भाग की अधिकारिणी होकर अर्धांगिनी कहलाती है। देखो—"राम-वाम-दिशि जानकी-लषण दाहिनी ओर"—तुलसीदास—श्रीशङ्कर जी ने वामांग में श्री पार्वती जी का होना सभी को ज्ञात है।

आत्मजन्म आराम सनातन क्षेत्र यही है।
आर्ष-शक्ति भी है अशक्त, यदि क्षेत्र नहीं है ॥"

दुष्यन्त :—

"कैसे हो विश्वास, अनृतवचना है नारी।
ध्यान न, मम यह पुत्र, न कुछ है याद तुम्हारी" ॥

शकु० :—

"राजन् ! सर्षप सदृश दोष पर के लखते हो।
बिल्व७ सदृश तुम किन्तु न निज त्रुटियाँ लखते हो ॥

दो०—दिव्य मेनका जननि मम, त्रिदश८-मान्य है जौन।
समता मेरे जन्म की कर तुम सम नर कौन ॥

छं०—भूचारी९ तुम नृपति ! मुझे नभचारिन१० लेखो।
भूधर-सर्षप११ सदृश आत्म-मम-अन्तर देखो।
सत्य सदा परब्रह्म, सत्य संकल्प सदा हो।
ममसाक्षी है सत्य तव साथ सदा हो।
यदि न स्वयं विश्वास, अनृत यदि यह प्रसंग है।
आत्माहत१२ जा रही, न मम तव कभी संग है।
रे नृप ! तेरे बाद, नगाधिप-भूषणशाली।
मम सुत से यह वसुन्धरा जावेगी पाली✽।

("रसाल")

---

७ बिल्व—बेल का फल।

८ त्रिदश—देवता।

९ भूचारी—मनुष्य पृथ्वी पर चलने वाला

१० नभचारी—देवी, आकाश में चलने वाली

११ सर्षप—सरसों

१२ आत्माहत—आत्मा में आहत हो या चोट खाई हुई।

✽सुहागरात के ही लिए अनुवादित।

बीबी रानी ! पत्नी का महत्व यह है, उसका ठाठ यह होना चाहिए और अपनी मर्यादा, शान और मान का ख्याल उसे इतना होना चाहिए, साथ ही उसमें दृढ़ संकल्प होना चाहिए और उसके चरित्र में इतना प्रखर तेज होना चाहिए ।

किन्तु, बीबी रानी, इन गुणों की वृद्धि करने का अर्थ यह नहीं है कि आए दिन पतिदेव से जंग जारी रहे, मेरा व्यक्तित्व, मेरे विचार, मेरी मानवी स्वतंत्रता की धुन लगी रहे। इन सभी गुणों की महत्ता के साथ ही साथ हमको यह सदा ध्यान में रखना चाहिए कि हम अपने जीवन का पूर्ण विकास तभी कर सकती हैं और आदर्श-जीवन हम तभी वहन कर सकती हैं जब हमारे और हमारे पति के जीवन में अधिक से अधिक स्वरैक्य, सादृश्य, (Harmony) साम्य हो, हमारी जीवन-यात्रा अधिक से अधिक प्रेममय, और कष्ट और कंटकविहीन हो। तुमको याद होगा कि वैवाहिक जीवन को स्वर्गीय बनाने की कलाओं की चर्चा करते हुए मैंने सब से अधिक इसी बात पर जोर दिया है कि पति और पत्नी के जीवन में अधिक से अधिक स्वरैक्य (Harmony) और समता रहे। शीला बहिन ! हजारों वर्ष की हमारी गुलामी और पुरुष की प्रभुता ने हमें कहीं का भी नहीं रखा है। पुरुष हमसे "न" सुनने का आदी ही नहीं है, वह अपनी इच्छा को ही सर्वश्रेष्ठ और कानून समझता है, हमारी हस्ती उसकी निगाह में नहीं के बराबर है, वह समझता है "मैं" रोटी कपड़ा देता हूं, अधिकार सब "मेरा" है, तुम चाहो रोकर जिन्दगी काट लो, या मन मसोस कर, या जंग कर, तेरे मरने पर तो बात ही क्या, तेरी जिन्दगी में ही तुझे जलाने और झुलसाने के लिए अभी चाहूँ तेरी एक दूसरी बहिन को घर में ले आऊँ। उसका कहना है—"किसकी मजाल जो मेरी बातों पर सर उठाए।" यह दशा सुधरते ही सुधरते सुधरेगी, समझा बुझा-

कर, पुचकार कर ही पुरुषों को हम लोगों को ठीक रास्ते पर लाना है साथ ही हमको यह सदा ध्यान में रखना है कि मन मुटाव और जंग जारी रखने से हम अपने उद्देश्य की सिद्धि कर सकती हैं और न वैवाहिक-जीवन को ही सुखमय बना सकती हैं। हमको इसलिए हर मिनट इसकी फिक्र रखनी होगी कि हमारे उद्देश्य की सिद्धि हो, पुरुष को हम सुधारती रहें, साथ ही वैवाहिक-जीवन को हम काटों का छपरखट न बना लें।

अब मुझ को कुछ कहना नहीं है, और मैं केवल तुमको तुम्हारे आदि-शक्ति और दैवी-विश्वकर्मा के रूप का स्मरण कर कर इस पत्र को समाप्त करती हूं। तुम यह सदा ध्यान में रखना कि "स्त्री, जैसा पुरुष है वैसा उसे पाकर निर्वाह करने को विवश है किन्तु उसका यह धर्म है कि बिना उसे सुधारे और विकास की सीढ़ियों पर ऊपर उठाये वह सन्तोष न प्राप्त करे। साथ ही अगर वह संसार में प्रेम, सुख और बच्चों को प्राप्त करना चाहती है तो उसे पुरुष से, जैसा कि उसने अपनी अहम्मन्यता और अपने को सृष्टि का सरताज समझने से शताब्दियों से बना रखा है, निर्वाह करना होगा। उसे यह ध्यान में रखना होगा कि निरन्तर की विजय ने पुरुष को अहम्मन्य, स्वार्थी, निर्दय और पशु बना दिया है, यद्यपि, वह ऐसा है, इसका ज्ञान भी उसे नहीं रहता"।

"चतुर सहृदय स्त्री को, जो पुरुषों के स्त्रियों और बच्चों के प्रति अन्याय को समझती है, इसलिए चाहिए कि वह हज़ार तरीकों से, समझा बुझा कर, स्नेह से, मधुमिश्रित बहस से, और अपने बहुमूल्य आसुओं की सहायता से पुरुषों को अपने आदर्श के सांचे में सुपति और सुपिता के रूप में ढालने का प्रयत्न करे। हममें से प्रत्येक स्त्री को यह ध्यान में रखना चाहिए, और अगर हमको सच्चा ज्ञान

होता हमको जानना चाहिए कि हमारे कर्तव्य की इति-श्री हमारे समय या वर्तमान युग से ही नहीं हो जाती वरन् हमारे कर्तव्य का सम्बन्ध सदा, सर्वदा और अनन्तकाल से संलग्न है।"

ह को यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि हम दैवी-विश्वकर्मा हो सकती हैं, केवल उसी समय जब हमारे आदर्श, पुरुषों के भावों में विलीन होकर सुन्दर भविष्य की सुनहली आभाओं और रश्मियों को रेखाङ्कित करने में फलीभूत हों।

हम लोगों को हताश और निराश नहीं होना है, न मंजिल पर बिना पहुंचे हम को थक कर बैठ जाना है। "पुरुष लड़ेगा भी, रूठेगा भी, हमारे साथ अन्याय भी करेगा किन्तु हम आदि शक्ति हैं, देवी हैं," और हम को यह याद रखना होगा कि "जिस तरह से ईश्वर के सम्बन्ध में ठीक उसी तरह से हमारे साथ भी पुरुष हम से प्रार्थना करेगा, हमारी सुनी अनुसनी करेगा, हमारी कामनाओं के विरुद्ध आचरण करेगा, हमारे प्रति अन्याय करेगा, पाप करेगा और फिर हमारी ही प्रार्थना करेगा। यही नहीं कितना ही पतित वह क्यों न हो जब वह कष्ट में होगा, जब उसे ज़रूरत होगी, वह हमारे चरणों में शरण लेगा, और हमारी ही गोद में सुख प्राप्त करने को लालायित होगा।"

इन बातों के साथ ही हम को यह भी याद रखना होगा कि दुर्गा और काली भी हमारा ही रूप हैं और "संघर्ष ही जीवन का नियम है;"। ईश्वर स्वयं सदा असुरों से लड़ा करते थे। सुधारक भी सदा जङ्ग ही जारी रखते हैं और इसलिए देवी और सुधारक की हैसियत से, अपनी स्वतंत्रता के लिए, इसलिए कि हम को अवसर मिले कि हम अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकें, अपने जीवन के उद्देश्य की सिद्धि कर सकें, संसार को अधिक सुख और समृद्धि का स्थल बना सकें और अपने बच्चों का जीवन अधिक सुखमय कर सकें, हम को

मद-माते, अहम्मन्य पुरुष-समाज से प्रेम के साथ सदा जङ्ग जारी रखनी होगी। हाँ, इतना ख़्याल जरूर रखना होगा कि 'सुधार धीरे ही धीरे होगा और सुधार का अर्थ वृक्षों की डालियों को काट-छाँट कर अपने अनुकूल रूप देना है न कि उन को जड़ों से ही खोद देना।"

मेरा विश्वास है कि पुरुष हम लोगों से यदि केवल धर्म-युद्ध करें, लड़ने वालों को सदा सत्य का आग्रह रहे और लड़ाई प्रेम से ही लड़ी जाय तो हम लोगों की आज नहीं तो कल विजय निश्चित है। मेरा यह भी विश्वास है कि आज के पुरुष-निर्मित-संसार से हम लोगों का बनाया हुआ संसार स्वर्ग के अति निकट और उसके समान ही होगा।

अन्त में तुम से इतना ही कहना है कि सनातन- रीति के अनुसार तुमको इतनी शिक्षा देने के कारण मैं तुम से गुरु-दक्षिणा पाने की अधिकारिणी हूँ और गुरु-दक्षिणा के नाम पर मैं तुम से इतना ही चाहती हूँ कि तुम मातृत्व, सतीत्व स्त्रीत्व के पूर्ण विकास के झंडे को सदा ऊँचा रखो और जीवन रहते तुम इस को पद-दलित या कलंकित न होने दो।

आज मैंने अपना वादा पूरा कर दिया और जीवन को सुख-मय बनाने की कलाएँ जितनी मुझे मालूम थीं मैंने तुमको बतला दीं। सुख, समृद्धि और अविद्या, दुःख और कलह के दोनों ही मार्ग अब तुम्हारे सामने हैं और मुझको केवल इतना ही कहना है—"यनेष्टं तेन गम्यताम्❋।"

तुम्हारी
शान्ति

❋जिस रास्ते पर इच्छा हो जाओ।

परिशिष्ट-भाग

हाय राम कब अइहैं ?*

कह दो हमारे हो जायं ।

१७ सितम्बर, १९२१

सम्पादक जी,

आज एक बहुत ही हृदय-विदारक, दिल दहलाने वाली घटना का हाल आपको लिखने बैठी हूं। मेरी कहानी मेरे दिमाग या हृदय की उपज नहीं है, यह एक सच्ची घटना है जो इस समय मेरी आंखों के समाने हो रही है, जिसको आज से नहीं, वरन वर्षों से मैं देख रही हूँ और कथा की "हिरोइन" मुख्य पात्री की सहचरी, सखी सहेली या मित्र होने के कारण उसके प्रत्येक रग और रेशे से मैं वाकिफ हूं। लिखने का कारण यह नहीं है कि संसार को मैं यह साबित करूं कि सच्ची घटना उपन्यास से भी अधिक विचित्र, रोचक और कुतूहल वर्द्धक हो सकती है। लिखने का अभिप्राय यह है कि घटना की सारी बातों को जान कर आप लोग बतलायें कि क्या करना चाहिए ? क्या करने से ऐसी घटना का होना असम्भव था ? क्या करने से हमारी अन्य बहिनें अपने ऊपर आने वाली इसी प्रकार की विपत्ति को टाल सकती हैं ? जिस दुखिया का हाल मैं लिखने बैठी हूँ वह पागल सी हो गई है और मालूम पड़ता है, अधिक दिन जीवित न रहेगी। ऐसे ही दुःखान्त दृश्य इस समय कितने ही गृहों में दिखाई देते होंगे, कितने ही सोने के गृह ऐसी ही घटनाओं के हो जाने से मिट्टी हो

---

*यह कथा अभ्युदय की १७ सितम्बर सन १९२१ की संख्या में प्रकाशित हो चुकी है।

रहे हैं, कितने ही गृहस्थों के गृह-स्वर्ग की हंसती हुई दीवारें स्मशान का दृश्य दिखा रही हैं, आशा है विद्वन्मण्डली इन नाटकों को सुखान्त बनाने का उपाय बतलायेगी, अगर यह नहीं तो कम से कम दीन हीन पद-दलित, पति के प्रेम की भिखारिनियों को कोई ऐसा उपाय बतलावेगी जिससे वे ऐसी दुःखमयी घटनाओं का होना असम्भव कर दें और नवीनता पर मुग्ध होने वाले, चञ्चल पुरुष के हृदय को बस में कर सकें। जिस घटना को मैं लिख रही हूं आप विश्वास करिए, अक्षरशः सत्य है। भाषा मेरी जरूर है, लिखने का क्रम मेरा है, किन्तु कथा भाग का एक-एक शब्द सत्य हैं। कथा का वर्णन मैंने ठीक वैसा ही किया है, सिर्फ़ कुटुम्ब तथा पत्नी का नाम मैंने छिपा दिया है।

कथा को मैं किसी द्वेष भाव से या किसी सज्जन के गृह का रहस्य खोलने के लिए नहीं लिख रही हूं, आशा है नाटक के पात्र मेरे हृदय के भावों को समझ कर मुझको संसार के सामने इस घटना को रखने के लिए क्षमा करेंगे।

दूसरे, लोग कठिनाई से इस दुःख को अनुभव कर सकते हैं, इस दुःख का अनुभव कुछ हम स्त्रियाँ ही कर सकती हैं। मैं अपनी दुखिया सखी के दारुण दुःख को सबसे अधिक समझ सकती हूं, क्योंकि दुखिया की सहचरी तथा विश्वसनीय मित्र होने के कारण मैं शुरू से आज तक की प्रेमियों के प्रेम की प्रायः सब बातों को जानती हूं। मैं जानती हूं कि आज चार वर्ष पहिले मेरी सखी किस सुख-कानन के झूले की उत्ताल पेंगों पर झूल रही थी और आज चारों ओर से दहकते हुए दावानल के बीच वह कैसी पड़ी हुई है।

(२)

कथा का आदि पर्व इस प्रकार है। एक सम्पत्ति-शाली सज्जन का, जिनकी उम्र प्रायः २० वर्ष की थी और जो एक अच्छी

आमदनी वाले सरकारी महकमें में नौकर थे, गौना हुआ और पत्नी घर आई। पति देवता, दैत्य या राक्षस अपनी पत्नी पर बेतरह रीझ गए। दफ़्तर के समय को छोड़ कर प्रत्येक मिनट वह अपनी पत्नी के पास रहते और उसके प्रेम में पगे रहते। प्रेम की देखने में कोई सीमा न दिखाई देती थी। दिनचर्या उनकी इस प्रकार थी:— सुबह उठने पर पति देवता हाथ मुंह धोते और पान खाते, पत्नी शौच से निवृत्त होने को नीचे जाती। पत्नी से आने पर वह जब मंजन करने बैठती तब पति देवता शौच से निवृत्त होने को नीचे जाते, आकर दतुवन करते, तब तक पत्नी मज्जन कर, हाथ मुंह धो, छुट्टी हो पान लगाने बैठ जाती। उस समय पति-देवता अपनी अर्धाङ्गिनी के साथ ही दुग्ध पान करते, जलेबी खाते या जल-पान करते। पान खाकर पति देवता अपनी देवी के बालों में तेल दबाते, कङ्घी करते या बाल संवारते। इसी समय मजदूरिन स्नान करने के लिये पानी लाकर रख देती और पतिदेवता अपनी देवी को स्नान कराते, साबुन लगाते, उबटन लगाते और क्या कहूं क्या क्या करते थे। आरम्भ में लज्जा-शीला होने के कारण देवी को इसमें कोई विशेष सुख न मिलता था, वह इसे पसन्द भी न करती थी किन्तु ज्यों ज्यों दिन बीते वह इसकी आदी हो गई और नतीजा यह हुआ कि बिना इन सब बातों के उसको चैन न मिलता। यदि किसी दुर्दैव से पतिदेवता की तबीयत अच्छी न होती, सर में दर्द होता या वह बीमार होते तो देवी जी स्नान बगैरह कुछ न कर सकतीं और दिन यों ही व्यतीत हो जाता, उनकी समझ में ही न आता कि कैसे काम हो? स्नान से निवृत्त होने पर पतिदेवता अपने हृदय की आराध्य देवी का शृङ्गार करते, टीका बिन्दी देते, फूल गूँधते, कङ्घी चोटी करते मिनट मिनट पर नूतन वस्त्रों को पहना कर दर्पण के सामने खड़ा कर देवी का पागलों की भांति मुख निहारते, प्रेमालिङ्गन या प्रेमा-

लाप करते। साढ़े नौ बजने के समय वह देवी सहित नीचे उतरते। माता पिता, भाई, भौजाई, बहिन और सभी घर वालों के सामने रसोई में पतिदेवता अपनी पत्नी सहित एक थाली में भोजन करते। पत्नी शुरू में इससे बहुत दु:खित होती किन्तु यह देखकर कि उसके न खाने से पति देवता भी भूखे ही उठ जाते, वह उनकी प्रसन्नता के लिए भोजन करने लगी। धीरे धीरे वह इसकी भी आदी हो गई और दैव-वशात् अगर किसी दिन पति देवता साथ न होते तो वह मुख में ग्रास भी नहीं रख सकती थी, ग्रास रखने पर बाहर निकला पड़ता हुआ उसे मालूम होता। भोजन करने के बाद प्रेमी फिर ऊपर कमरे में चले जाते। पति देवता ही बढ़िया सुन्दर पान देवी को बना कर खिलाते, प्रेमालाप करते हुए कपड़े पहिनते और दफतर जाते।

प्राय: पाँच बजे वे दफतर से आते थे, उनके दर्शन की प्रेम-वार्ता, प्रेमालाप की भूखी ललना कमरे की खिड़की पर खड़ी उनकी बाट जोहा करती। पति देवता बाजार से फल, मिष्ठान्न वगैरह लिए आते और सीधे कमरे में चले जाते। शौचादि से निवृत्त हो फिर प्रेमी प्रेम समुद्र में डूब जाते। फिर रङ्ग बिरङ्गी साड़ियों, जैकटों और सलूकों की परताल होती, फिर शृङ्गार शुरू होता, पतिदेवता कभी हारमोनियम ले देवी को प्रेम-गान सुनाते कभी देवी जी को कोई पुस्तक पढ़ाते और इन्हीं बातों में आठ बज जाते, मजदूरिन बिआरी लेकर ऊपर आती, प्रेम के पुजारी भोजन करते और विश्राम करते। दूसरे दिन से फिर यही सब लीला शुरू होती। कुछ अजब दृश्य था, कह नहीं सकती कि यह सब क्या था, प्रेम था, प्रेमोन्मत्तता थी या प्रखर कामवासना ?

(३)

मेरी सहेली भी साधारण सुन्दरी न थी। नख-शिख की उसकी शोभा देखने ही योग्य थी, बाल, पेशानी, चिबुक, आंख, कटि,

शरीर की गठन क्या कहूं क्या थी, अङ्ग प्रत्यङ्ग की लुनाई और सुन्दरापा का चित्र न खींच कर मैं उसकी एक मात्र नरगिसी आंखों का ही वर्णन काफी समझती हूं। आँख के लिए भी क्या कहूँ, एक उर्दू शायर के शब्दों में सच तो यह है :—

"जो उठे तो एक तमाशा है।
न उठे तो एक कहानी है ॥"

इस तरह प्रेम के पागलों का चार छः महीना कट गया। यही नहीं मालूम होता था कि दिन बीत रहे हैं। दुनिया की इनको खबर न थी, अपने ही रङ्ग में ये इतने चूर थे।

बड़े आनन्द में प्रेमियों का समय कट गया। कुछ दिनों बाद सहेली ने गर्भ धारण किया। प्रेमी और भी आनन्द उल्लास और मद में चूर हो गये।

(४)

कमाऊ पूत था, बड़ों को सब बातें बेहयायी की मालूम होती थीं; किन्तु कोई कुछ कहता न था। इसी समय में एक घटना हुई। एक दिन पतिदेवता पाँच बजे शाम को घर न पहुँचे। पत्नी खिड़की पर खड़ी राह निहार रही थी। आधा घंटा हो जाने पर उसके नेत्रों से अश्रु धारा बह निकली वह बेचैन हो गई, कभी खिड़की पर और कभी द्वार पर दौड़ने लगी; किन्तु फल कुछ न हुआ। प्राणाधार कहीं दिखाई न दिये। अधीर हो देवी अपनी ननँद के पैरों पर गिर कर रोने लगी। ननँद ने समझाया, कहा पागल हो गई हो, कुछ काम दफतर में लग गया होगा देर हो गई है, आते होंगे; किन्तु अधीरा दर्शन की प्यासी रोने बिलखने लगी। शाम भी हो आई थी, घण्टे भर से अधिक देर हो चुकी थी, आखिर में देवी ने अपने देवर की शरण ली और प्रार्थना कर दफतर की ओर रवाना किया। देवर जी दफतर की ओर गये और उनके जाने के कुछ ही मिनटों बाद दफतर के चपरासी ने

आकर खबर दी कि बाबू जी ने कहा है कि हम देर से आवेंगे। उसने यह भी कहा कि साहब से बाबू जी से कुछ झगड़ा हो गया है और साहब ने पुलीस बुलाया है चपरासी ने यह भी कहा कि बाबू जी ने कहा है कि घबराने की जरूरत नहीं है, हम जितनी जल्दी हो सकेगा आवेंगे। पुलीस और झगड़े की बात सुन कर पत्नी दु:ख से कातर हो उठी, अनिष्ट ही अनिष्ट उसे दिखाई देने लगा, वह रोते चीखते मूर्छित हो गई। घरवाले पत्नी की सेवा-सुश्रूषा में लगे और लोग हकीम वैद्य के घर दौड़ने लगे।

(५)

पति देवता घर पहुँचे, पत्नी की दशा बहुत खराब थी द्वार पर समाचार मालूम होते ही वह दौड़ कर पत्नी के पास पहुँचे। वह कुछ अचेत सी पड़ी थी। वैद्य जी कुछ दवा दे चुके थे। मुख पर पानी का छीटा दिया जा रहा था। रह रह कर वह कभी आंख खोल देती थी, कभी कराहते कराहते चिल्ला पड़ती थी—"हाय राम कब अइहैं ? अब हम न जीबै"। पति देवता ने पहुँचते ही अपनी गोद में इसका सर रख लिया, पानी की जगह उनकी अश्रुधारा से पत्नी का मुख-चन्द्र धोया जाने लगा। देवी की आँख खुली, उसने देखा, आंखों से मोतियों की लड़ी की भांति प्रेमाश्रुओं के बिन्दु टपक पड़े। पति देवता ने कहा, देखो मैं आ गया, तबीयत सम्भालो, कैसी तबीयत है ? कुछ समय बाद दुखिया की तबीयत ठहरी। उसने अपने को सम्हाला और पति देवता की बाहों के सहारे वह ऊपर कमरे में गई। पति देवता शौचादि से निवृत्ति हुए। दुखिया भी टनमन हो चुकी थी। पति देवता ने कहा क्यों तुमको यह क्या हो गया था ? पत्नी ने पूछा, आज इतनी देर क्यों हुई ? क्या तुमको नहीं मालूम कि तुम्हारी अनुपस्थिति में मेरी दशा कैसी रहती है ? तुमने मुझको किन किन बातों का कितना आदी बना दिया है इसका क्या तुमको ज्ञान नहीं ?

तुमने अपने प्रेम से अपने को मेरे जीवन का प्रधान-स्थल बना लिया है, तुम्हारे बिना एक मिनट जीवन धारण करना भार प्रतीत होता है। देखो, देर न किया करो, कोई काम हुआ करे तो यहां आकर, एक बार सामने खड़े होकर फिर चले जाया करो। पति देवता ने प्रेम से हृदय की देवी को चिमटा कर कहा, अब एक मिनट के लिए भी तुम्हारे पास से न जायँगे, अब कभी देर न होगी, अब बराबर तुम्हारे ही पास रहेंगे, दफ़्तर में हम इस्तीफ़ा दे आये हैं।

(६)

विधि की विडम्बना कहूँ, संसार की गति कहूँ, मानव प्रकृति की कमज़ोरी कहूँ, या यह कहूँ कि इतना प्रेम और सुख चिरस्थायी नहीं हो सकता। कुछ ही समय में यह सब स्थिति बदल गई। प्रेम के मतवालों के प्रेम की ग्रन्थि रूपी एक पुत्र-रत्न पैदा होने का दिन आया। सहेली के सुबह से ही उदर में पीड़ा शुरू हुई। देवी ने चीखना चिल्लाना शुरू किया। पतिदेवता आज काम पर नहीं गये। सब हुआ किन्तु पेट की पीड़ा न कम हुई, वह बढ़ती ही गई; दाई सेवा सुश्रूषा कर रही थी, पतिदेवता अपने कमरे में पड़े पड़े बुरी तरह से रो रहे थे। प्रायः चार बजे के करीब पुत्र-प्रसव हुआ। बधाई बजने लगी। पति देवता भी कमरे से उठे, हाथ मुँह धो कपड़ा पहिन बाहर जाने का उन्होंने निश्चय किया। नीचे आने पर अपनी भावज से उन्होंने सौर में जाने की इच्छा प्रकट की। भावज ने कहकहा लगाया। माता को भी मालूम हुआ। उन्होंने कुछ कहा भी, विवश हो मन मार कर पतिदेवता घूमने चले गये। बाहर कहीं मन स्थिर न हुआ, घूम घाम कर प्रायः सात बजे ही आकर खाना खाने बैठे और अपने कमरे में सोने के लिए चले गये। रात्रि में नींद न आई। हाथ पांव किसी वस्तु के आदी थे, वे किसी को ढूंढ़ रहे थे, दिमाग देवी के चरणों पर सिजदा कर रहा था! कोरी आंख सबेरा हो गया। पौफट होने ही को था

कि पतिदेवता नीचे उतर आये। सौर के द्वार से माता को बाहर जाते देख औरों की आंख बचा पतिदेवता सौर-गृह में घुस गये। सोती हुई देवी के पैरों के पास बैठ कर कोमलता से उस का पैर दबाने लगे। देवी सुख में और भी निद्रा में निमग्न हुई। यह देख पतिदेवता और भी प्रेम से धीरे धीरे शरीर दबाने लगे। इतने ही में माता ने सौर में प्रवेश किया। यह लीला देख उन्होंने ज़ोर से कहा, यहा क्या है ? माता को ज़ोर से बोलते सुन घर की अन्य स्त्रियों भी आ पहुँचीं, बालक की माता भी जग पड़ी; लज्जा से उसके नेत्र नीचे हो गये पतिदेवता बाहर निकल आये।

पतिदेवता किसी तरह वक्त काटना चाहते थे किन्तु उनसे दिन काटे न कटता, रात्रि में भी निद्रा न आती, किसी काम में उनका मन ही न लगता, विचित्र बेचैनी थी। देवी के दर्शन, देवी के स्पर्श और देवी के पैरों पर लोटने को वह पागल से हो रहे थे। देवी के मुखचन्द्र की ओर पागलों की भाँति निहारने को वह तरस रहे थे।

किन्तु हमारी सहेली सुख में थी, पतिदेवता का स्मरण उसे रोज़ होता था, किन्तु उसे कोई तकलीफ़ या बेचैनी न थी। वह अपने नवजात शिशु के खिले हुए गुलाब से छोटे से मुख को दिन रात निहारने में ही स्वर्ग-सुख अनुभव कर रही थी। पड़ोस की आई हुई स्त्रियों को अपने हृदय के टुकड़े को दिखा कर उसकी सुन्दरता की प्रशंसा सुनाने में वह मग्न रहती थी। अपने प्राणों से भी प्यारे बच्चे के तेल उबटन लगाने में, उसे वह आनन्द मिलता था जो इसके पहिले उसने कभी अनुभव ही नहीं किया था। बच्चे को दूध पिलाने में वह अनुभव करती थी कि उसे वही सुख होता है जो पति के सहवास में, सोते हुए बच्चे की ओर निहारने में, उसकी सुख-निद्रा में, उसको पङ्खा झलने में वह अपना जीवन सफल समझती थी। पतिदेवता की उसे सुधि आती थी, उनके

पास बैठ कर बच्चे को दिखाने को, खिलाने की उसे इच्छा होती थी, इससे अधिक कुछ नहीं। उसे बच्चा पतिदेवता से कहीं अधिक स्नेह का पात्र दिखाई देता था। पति के बिना वह कुछ समय रह सकने की कल्पना कर सकती थी क्योंकि पति की याद वह बच्चे को खिलाने में बिसरा सकती थी ; किन्तु पति के पास रहती हुई भी वह सोचती थी कि बच्चे को वह नहीं भूल सकेगी, उसे नहीं दूर रख सकेगी। पत्नी के सौर से निकलने पर प्रेमियों की दिनचर्या में कुछ अन्तर पड़ गया पत्नी-पुत्र के पालन-पोषण में सास, नन्द और देवरानियों के पास बैठने, टोले मोहल्ले की आने जाने वालियों को पुत्र का रूप दिखलाने में अपना सन्ध्या का समय काटती। सुबह को भी पुत्र के उपचार में ही पत्नी का समय कटता। पतिदेवता बैठे रहते या दफ़्तर के कागज़ात में दिमाग़ लड़ाते और सब बातें प्राय: पहिले ही की सी थीं।

वर्ष भर बाद एक दूसरा पुत्र फिर उत्पन्न हुआ। अब पति-देवता शाम को छ: सात बजे घर न आकर आठ नौ बजे घर आते, शौच आदि के लिए मित्रों के घर या कहीं बाग वगैरह में जाते। रात्रि को भी वह पुराना पहिले वर्ष का प्रेम न दिखाई देता। अब दफ़्तर जाते वक्त भोजन भी अलग कर कपड़ा पहन कर भाग जाते। पत्नी पर दो छोटे-छोटे बच्चों का भार था। वह अपना जीवन उनमें व्यतीत करती। कुछ दिनों बाद पतिदेवता बजाय आठ नौ बजे के दस बजे, ग्यारह बजे तक घूम कर आने लगे। पत्नी उनके लिए भोजन लिए बैठी रहती और देर से आने की शिकायत करती और कभी कभी रो देती।

तीसरा बच्चा भी पैदा हुआ और अब तीन बच्चों का भार पत्नी पर है। अब पतिदेवता दो और तीन बजे रात के पहिले कभी घर नहीं पहुँचते। सुबह भी शौचादि से निवृत्त होकर निकल जाते हैं और भोजन करने और दफ़्तर जाने के समय ही घर में दर्शन

देते हैं। स्त्री पागल सी हो गई है, वह पाँच बजे सन्ध्या से खिड़की पर खड़ी खड़ी देवता की राह निहारा करती है, चिल्ला पड़ती है—"हाय राम कब अइहैं," टोले मुहल्ले की स्त्रियों के पैरों पड़ रो रो कर कहा करती है—कह दो हमारे हो जायं।" दशा के वर्णन के लिए मुझमें न विद्या है, न बुद्धि, न मेरी कलम में शक्ति है, मैं इतना ही कह सकती हूँ कि संसार में यदि दया और प्रेम का कोई पात्र है तो वह दुखिया है, दिन रात रोती रहती है, अपने बच्चों को कोसा करती है, कहा करती है, इन लोगों ने हमारा सर्वस्व छीन लिया, हमारा नाश कर दिया, हम कैसे जियें ? पति-देवता के दर्शन मात्र से उसकी मुर्दा आखों में ज्योति का संचार हो जाता है। दुखिया की दशा इस समय यह है कि वह खाट से लग गई है, शरीर बिलकुल क्षीण हो गया है और आशा नहीं कि दुखिया इस संसार के दुख को अधिक दिनों भोगे। पतिदेवता हकीम, डाक्टरों के लिए रुपया खर्च करते हैं, घन्टे आध घन्टे रोगी के पास बैठते भी हैं किन्तु पत्नी विक्षिप्त सी हो गई मालूम होती है। पाँच बजते ही रोगी के कमरे से आवाज़ यही गूँजती है—"हाय राम कब अइहैं ?" कोई कह दो—"हमारे हो जायँ"। स्त्री के पास सुश्रूषा के लिए एक दाई नौकर है, जो दवा वगरह देती है और पास रहती है। सास और ननँद-देवरानियाँ, भी कोई बात उठा नहीं रखतीं किन्तु रुग्णा की सदा यही है—"कह दो हमारे हो जायँ, अब हम न जीबै"। पति अब दफ़्तर से सीधे घर आते हैं, शौच से निवृत्त हो रोगी के पास जाते हैं और कुछ देर बैठ कर फिर बियारी कर रात्रि भर के लिए बाहर चले जाते हैं और सुबह आते हैं। उनके पास रहने पर शैय्या पर पड़ी हुई दुखिया कभी उनकी ओर निहारा करती है, कुछ बोलती नहीं, कभी हँस दिया करती है और अधिक तर आँसुओं की धार बहाया करती है। मैंने अपने पति से कई बार उनको समझाने को कहा,

उन्होंने कहा सुना भी किन्तु पतिदेवता का जवाब है, समस्त सम्पति मेरी खर्च हो जाने से यह अच्छी हो जाय तो भी मैं तैयार हूं ; दवादारू, सेवा सुश्रूषा में कोई कमी नहीं है, इससे ज्यादा मैं क्या कर सकता हूं ? हृदय पर मेरा बस नहीं । मैं सब कुछ समझता हूं किन्तु करूँ क्या लाचार हूं ? मेरे जीवन के लिए, इसलिए कि इसकी सेवा सुश्रूषा पूर्ण रूप से हो, मेरी तबियत न खराब हो, मेरा स्वास्थ्य बना रहे, मैं प्रसन्न रह सकूं, मेरा बाहर जाना जरूरी है । आप लोग कृपा कर बतलाइए कि दुखिया कैसे बचे और उसे सुख कैसे हो ? पति का वह प्रेम कहाँ गया और यह कि क्या करने से ऐसी घटना का न होना सम्भव था ?

❀ ❀ ❀

"कह दो हमारे हो जायँ"—यही चिल्लाते हुए १७ जुलाई को देवी ने प्रायः आधी रात के समय संसार छोड़ दिया। पतिदेवता घर पर नहीं थे। मृत्यु की रात्रि की घटना की खबर अब जो मालूम हुई है वह इस प्रकार है। नित्य की भांति पतिदेवता सन्ध्या समय बीमार के कमरे में गये। उस दिन वह रोज से अधिक चेत में थी, उसने कहा—"आओ तनिक बैठ जाओ, रोज तुम अपने मन से जाते थे, आज मेरे मन से जाना, ज्यादा नहीं रोकूंगी, तुमको दुःख नहीं दूंगी। तुम तकलीफ नहीं देख सकते, बीमार के पास बैठ कर सभी मर्दों का जी घबराता है, मगर मालूम नहीं आज क्यों तुमसे कुछ कहने को जी ललक रहा है, न कहूं तो मालूम नहीं कल कहने को रहूं या न रहूं........ देखो तुम मेरे बाद विवाह जरूर करना, बच्चे हैं यह समझ कर विवाह से मुँह न मोड़ना, विवाह न करोगे तो पछताओगे और जीवन में बहुत कष्ट उठाओगे। बच्चे मेरे हैं उनको कष्ट होगा तो राम उनकी रक्षा करेगा, मगर तुम विवाह कर लेना, यह गृहस्थी खिल उठेगी नहीं तो याद रखना इसका ठिकाना न रहेगा...........

यही मेरी—किसी समय की तुम्हारी..............प्रार्थना है, इसे भूल न जाना। आज तुम्हारी नजरों में मैं वही नहीं हूं। मगर वास्तव में मैं वही हूं "तुम कहते हो कि मैं सर्दमेहर हूं। मुझमें वह जोश, वलवले या गर्मी नहीं रही, मैं शान्त हो गई हूँ—मगर मैं तो चार दिन पहिले जब हर सिंगार के फूलों की सेज पर लेटती थी तो फूल मेरे शबाब से, गर्म जिस्म से मिलते ही मुर्झा जाते थे, उनकी डंडियां सौन्दर्य और रूप की ज्वाला की गर्मी से लाल अङ्गारा होकर दहकने लगती थीं...तुम कहते हो कि मेरी आँखों से प्रेम की आग के वे शोले ठंढे हो गये जिनकी आंचों और लपटों से तुम्हारी मोहब्बत अपने दिल की ठंढी चोटें सेकती थीं, तो अच्छा जब मैं तुम्हारी तरफ प्रेम भरी नजरों से देखती हूं तो असीम आनन्द के मद से तुम्हारा चेहरा क्यों तमतमा उठता है, तुम्हारी गोरी गोरी पेशानी पर पसीना क्यों आ जाता है? तुम्हारे जोशेतबस्सुम से तर होठों और सुरूरे हुस्न से भीगी रसीलो आंखों से एक गैर मामूली सा धुआँ क्यों उठने लगता है? जैसे दोपहर चढ़े सूर्य की तेज धूप में पानी से भीगे, गीले कपड़े से उठने लगता है—तुम्हारे जजबात शोक में शर्मिन्दगी, बेचैनी की गर्म जोशियाँ क्यों जीवन प्राप्त करती हैं—तुम दिल ही दिल में एक ग़म की, गहरी सी सांस लेकर चुप क्यों हो जाते हो? ....तुम कहते हो मेरे हुस्न के आईने में अब वह जिला नहीं रही जिसमें तुम्हारे प्रेम की दीवानगियाँ, तुम्हारे इश्क की बेखुदियाँ घंटों अपना मुँह देख के आश्चर्य-युक्त मोह में लीन रहती थीं......अच्छा, तो फिर तुम रोज जब नहा धो के बनते सँवरते हो तो तुम्हारी खुद आराइयाँ रह रह कर मेरे मुँह को क्यों देखती जाती है, जब घर से पहिन ओढ़ के खैर से बाहर निकलते हो तो तुम्हारी खुशनुमाइयां पहिले मेरे सामने आकर क्यों अपनी जेबाइशेहुस्न

का सर्टिफिकेट चाहती हैं, तुम जब तक मेरी आँखों में अपना मुँह नहीं देख लेते तुमको अपनी जामाज़ेबियों का यकीन क्यों नहीं आता······हां शायद तुमको, अपनी हुसूले मकसद के फातेहाना नाज़ ने मेरे नाकाम सोज़ से आसूदये तमन्ना कर दिया है। तुम समझने लगे हो कि तुम्हारी चेरी हूं, तनिक हंस बोल कर तुम जो चाहे हमसे करा सकते हो, मुझमें नवीनता नहीं, आकर्षण की शक्ति नहीं लेकिन वास्तव में यह सब ठीक नहीं हैं। असल में बात यह है कि तुम्हारे अरमान निकल गये हैं और तुमको तृप्ति हो चुकी है, वरना मैं वही हूँ, मुझमें कोई अन्तर नहीं है' अगर अन्तर है तो तुम्हारी आंखों में।···········

ऐ निर्दयी ! कली कली का रस लेने वाले भँवरे ! उन फूलों का वास्ता जिनकी खुशबू तेरे थरथराने वाले बाजुओं की मशकूर है···· उन कलियों का सदका जिनके बंद होठों की मिठास का मज़ा सिर्फ तुझी को मालूम·········ऐ जालिम भँवरे ! वसन्तोद्यान में आई हुई बहार की सौगन्द जो तेरे जी भर लेते ही, तृप्ति प्राप्त करते हो अपने सिंगार को बिगाड़ देती है, ऐ मस्त उड़ने वाले, चंचल हृदय, निर्दयी·· कहीं एक जगह तो जम के बैठ, कहीं तो तुझे शान्ति मिले कि पतझड़ में गिरी हुई सूखी पत्तियां भी तुझसे अपने दिल का दर्द कह सकें।···"

अच्छा अब जाओ, तुम्हारा जी बहुत घबरा गया होगा। ज़रा बाहर बैठो, भोजन करो और घूम फिर आओ।"❀

❀यह कथा 'अभ्युदय' में प्रकाशित हुई थी, इसका जवाब भी 'अभ्युदय' से उद्धृत कर दिया गया है किन्तु जवाब को पढ़ने से पहिले, स्वयम् आप अपने हृदय से इसका उत्तर पूछिये। दुखिया ने क्या गलती की यह सोचिये और यह तय करिए कि क्या करने से दुखिया अपने पति को अपना बनाए रह सकती थी ? एक बात और है यदि ऐसी बातों को जानने और पढ़ने की इच्छा है तो आज ही १०।) भेज 'अभ्युदय' के ग्राहकों में अपना नाम लिखा लीजिये।

पति को सदा हाथ में रखने के उपाय।

"हाय राम कब अइहैं?" का जवाब।

रजिया के समस्या के उत्तर में हमने लिखा था "कुछ ही दिनों बाद, जोश, बलबलों और पहिले उफान के बाद ही, ये एक दूसरे से ऊब जाते........... कुछ ही दिनों में सब कुछ होते हुए भी दिन रात इश्क और प्रेम की लहर में थपेड़े खाने से यह घबरा जाते और आदर्श दम्पति न होते। इतना ही नहीं यह असम्भव नहीं कि रजिया का जीवन कुछ ही दिनों में वैसा ही दुखमय हो जाता जैसा कि इस कथा की नायिका का। हमारी समझ में जो दुःख दुखिया को भोगना पड़ा उसका उत्तर-दायित्व दुःखिया पर ही है। सिर्फ़ एक दृष्टि से दुखिया दोषी नहीं ठहराई जा सकती और उसका अगर दोष हो सकता है तो इतना ही है कि वह प्रेम के पुजारियों और वास्तविकता और तथ्य के विरोधियों की भांति यह भूल ही गई कि—*यह हृदय चंचल है और बहुत दिनों लगातार एक व्यक्ति से प्रेम कर ही नहीं सकता।

दुखिया का जीवन क्या था? अधिक न कह कर हम इतना ही कहेंगे कि वह सांसारिक जीवन के बिलकुल अयोग्य थी। अगर कभी अपने भावों के विश्लेषण की उसमें शक्ति होती, अगर कभी दिल नहीं, दिमाग उसका बोलना, अपनी दशा पर

---

*"I blame thee not this heart. I know
To be long loved was never framed,
For some thing in its depth doth glow,
Too strong, too restless, too untamed"

विचार करता तो हमको सन्देह नहीं कि ग़ालिब के शब्दों में वह चीख उठती—

'इश्क ने ग़ालिब निकम्मा कर दिया।
वरना हम भी आदमी थे काम के ॥'

दुखिया की कथा में कोई विशेषता नहीं है। साधारणतया ऐसे नाटकों का अभिनय साधारण रीति से सभी कुटुम्बों में नित्य प्रति हुआ करता है। अगर कोई फर्क होता है तो इतना ही कि कोई सखी उसकी ओर ध्यान नहीं आकृष्ट करती और अन्त इतना भीषण और दिल दहलानेवाला नहीं होता। दुखिया की कथा को लक्ष्य में न रख कर भी इसलिए समस्या का जवाब सहज में ही दिया जा सकता है। दुखिया की कथा में असाधारणता इतनी ही है कि दुखिया आरम्भ से ही रसकेलि में डूब गई थी, कन्दर्प के मन्दिर की वह पुजारिन इस प्रकार थी कि वह संसार के अस्तित्व को ही भूल गई थी। उसमें लज्जा इतनी भी नहीं शेष थी कि वह यह भी कह सकती—

"अपने ही हाथ से देत महावर,
आपुहि बार सँवारत नीके।
आपन ही पहिरावत आनि के,
हार संवारि कै मौलसिरी के ॥
हौं सखी लाजन जात मरी,
मतिराम स्वभाव कहा कहिये पिय के ॥
लोग लुगाई घर घेर कहें,
अब ही ते ये चेरे भये दुलही के ॥"

दुखिया के भीषण अन्त का एक कारण उसका इस तरह से संसार को भूल जाना था। अगर उसकी कन्दर्प-पूजा नियमित होती, संसार की तथ्य बातों पर उसकी दृष्टि होती, उसने संसार

की फ़िक्र की होती तो उसका संसार ताश के गृह के समान एक विपरीत हवा के झोंके से ही यूँ नष्ट भ्रष्ट न हो जाता।

दुखिया वयस-प्राप्त होती हुई भी ज्ञान की दृष्टि से निरी बालिका थी, पति जी भी यौवन के मद में मत्त थे, कुटुम्ब के गुरुजन जो कन्दर्प की पूजा की अति को रोक सकते थे, जो सहज ही में यह व्यवस्था कर सकते थे कि पूजा में बालिका पागल न हो जाय, चुप थे, ऐसी दशा में ऐसे भीषण अन्त के न होने ही में आश्चर्य था। हम यह मानने को तैयार नहीं कि दुखिया ने कोई ऐसी बात की थी जिससे पति जी रूठ जाते, हम तो यही समझते हैं कि पति जी बिलग हो गये, क्योंकि कन्दर्प की पूजा के लिए वही सामग्री, वही आकर्षण, वही स्वतन्त्रता नहीं रही। निरन्तर बच्चों के पैदा होने ने, उनकी सेवा-सुश्रूषा ने और यौवन-श्री की मलिनता ने पूर्ण स्वतंत्रता और मौज में बाधाएँ उपस्थित कीं। दुखिया दुखिया हुई, क्योंकि वह इस "मनोभ्येति नवम् नवम्" नवीनता पर मुग्ध होने वाले मनुष्य के चंचल हृदय को नाशवान रूप और सौन्दर्य के कच्चे धागे से ही बाँधना चाहती थी, वह अपना महल उस दीवार के सहारे खड़ा करना चाहती थी जो स्वयं टिकाऊ न थी। ऐसी दशा में यदि दुखिया का सुख-भवन गिर पड़ा तो आश्चर्य ही क्या ? सच देखा जाय तो दुखिया एक निकृष्ट गणिका या रूप बेचने वाली का जीवन व्यतीत कर रही थी। एक श्रेष्ठ गणिका की भी बुद्धि उसमें होती तो इस नाशवान रूप और सौंदर्य का मूल्य भी वह अधिक दिनों तक वसूल कर सकती थी, किन्तु बेचारी बालिका थी उसे समझ ही कितनी थी ?

रज़िया की कथा की शिक्षा की ओर भी दुखिया का ध्यान रहता तो उसका अन्त इतना दुखमय न होता। रज़िया की समस्या के उत्तर में हमने लिखा था "रज़िया

की शिक्षा और बहुमूल्य शिक्षा यह भी है कि शरीर की, मुख की वाह्य सुन्दरता एक पुरुष हृदय को केवल अपनी ओर ज़ोर से आकृष्ट कर सकती है, उसे निकट घसीट पैरों पर गिरा सकती है, कुछ समय तक उससे वह अपने पैर भी दबवा सकती है, किन्तु पुरुष के हृदय को सदा वश में किये रहना इसकी शक्ति से बाहर है। पास रहते रहते, हर वक्त देखते देखते कुछ ही दिनों बाद उसी रूप में उसी पुरुष के लिए वही आकर्षण नहीं रह जाता। ऐसी दशा में यह असम्भव नहीं कि पुरुष-हृदय रूपी पक्षी पैरों पर से उड़ कर कुछ मिन्टों के लिए ही वनों, और वाटिकाओं के वृक्षों पर भी बैठने की इच्छा करने लगे, साथ ही वह आकर्षण के जादू का शिकार भी हो। यदि कोई प्रयोग ऐसे समय न किया जाय, बन्दर, अफयून का आदी न बनाया जाय तो यह असम्भव नहीं कि कुछ ही दिनों बाद वह चलता बने। देश की ललनाओं को इसलिए केवल रूप और सेवा-सुश्रूषा या भोजन दे देने के भरोसे ही न रह जाना चाहिए। वाह्य सुन्दरता के प्रभाव को कायम रखने के लिए और इसलिए कि क़ब्ज़ा कहीं से ढीला न पड़ने पाये, उसे हृदय मस्तिष्क और जबान से काम लेना चाहिए। रूप के बाद किन्तु रूप से किसी तरह कम नहीं स्त्रियों का दूसरा अस्त्र या जादू जबान की बात चीत है……। पति देव के दुःख सुख में शरीक होकर उनके कार्य, उनकी झंझटों में दिलचस्पी लेकर, तनिक बुद्धिभरी मीठी बातों से, तनिक मानलज्जा और हावभाव से स्त्री सदा पति को काबू में रख सकती है।"

दुखिया को वैवाहिक रहस्य के यह प्राथमिक सिद्धान्त नहीं मालूम थे। वह प्रखर काम-वासना या प्रेम की तृप्ति में लीन थी; तत्वहीन प्रेम के पुजारियों का गलत सिद्धान्त ही उसे याद था, वह समझती थी कि प्रेम ही में सब शक्ति है, और प्रेम ही जीवन को सुखमय बनाये रहेगा। वह यह नहीं समझती थी कि संसार

माया नहीं तथ्य है और तथ्य बातों के ही सहारे वह चल सकता है।

हम कह चुके हैं कि दुखिया गणिका-जीवन व्यतीत कर रही थी, किन्तु यह करते हुए भी श्रेष्ठ गणिकाओं की उसमें बुद्धि न थी। उसे यह विदित न था कि मनुष्य सदा अमृत पीते पीते भी उकता जाता है, उसे यह ख्याल नहीं था कि आकर्षण कायम रखने के लिए यह जरूरी है कि पति के पास ही वह सदा न बैठी रहे, उसे यह मालूम न था कि प्रेम का जादू कायम रखने के लिए यह परमावश्यक है कि चितचोर, चोर की भाँति ही अङ्ग प्रत्यङ्ग की लुनाई और सुन्दरापा देख सके, उसे इतना भी विदित न था कि नवीनता के पुजारी के लिए अङ्ग प्रत्यङ्ग को दिन रात निहारने से नवीनता न रह जायगी, उसे इतना भी विवेक न था कि अङ्ग पर वस्त्र घूँघट, परदा, अङ्ग को ढके रहना यह सब अङ्ग प्रत्यङ्ग की लुनाई और मोहनी शक्ति को बढ़ा देता है। बेचारी बालिका तो थी ही उसका कुसूर ही क्या? वस्त्रों की महिमा तो बड़ी बड़ी वयस-प्राप्त स्त्रियां क्या हमारे पंडित पुरुष भाई भी नहीं जानते। हमको यह नहीं मालूम कि जंगली जातियों में, जो बिलकुल नग्न रहती हैं, पुरुष तथा स्त्रियों पर कामदेव का प्रभाव इतना नहीं पड़ता जितना कि वस्त्र पहिनने वालों पर रहता है। बालिकायें जब पुरुष-हृदय को आकृष्ट करना चाहती हैं, जब वे किसी के गले बंधना चाहती हैं तब वे अपने अङ्ग को वृक्षों की डालियों या पत्तों से ढकती हैं। वस्त्र तथा परदे में आकर्षण शक्ति बहुत है। जो चीज जितनी ही छिपी रहती है उतना ही उसे देखने की लालसा होती है। अगर दुखिया कुछ भी इस मर्म को समझती तो वह कदापि हर घड़ी पति ही के पास न रहती और न वह उनको सारियों और जैकटों की परिताल ही करने देती। पति देवता ही साबुन लगाते थे, उपटन लगाते थे, स्नान कराते थे,

फिर भला यह कैसे संभव था कि दो चार वर्ष बाद भी पति जी के सर का जादू उतर न जाता ? कभी ऐसी बातों का हो जाना पाप नहीं किन्तु हम समझते हैं कि कोई चतुर स्त्री ऐसा सहसा नित्यप्रति, महीनों, वर्षों न होने देगी। अङ्ग-प्रत्यङ्ग को पुरुष की नजरों से अधिकाधिक छिपाये रहना पत्नी के लिए सदा लाभ-कर है।

दूसरी भूल दुखिया की यह थी कि सर्वथा तथ्य संसार से अलग रहकर उसने अपने को अकर्मण्य यहां तक बना लिया था कि अगर एक दिन पति जी के सर में दर्द होता, वे सहायता न करते तो दुखिया जी स्नान भी नहीं कर सकती थीं। जहां पति पर सदा कब्जा चाहने वाली स्त्री का कर्तव्य यह होना चाहिए कि पति को वह इतना अपना आश्रित बना ले कि बिना उसके, उसकी सहायता के पति जी कुछ कर ही न सकें वहाँ दुखिया जी स्वयं अकर्मण्य हो गईं। ऐसी दशा में पति के दूर होते ही मृत्यु का दौर-दौरा स्वभाविक ही था।

तीसरी भूल दुखिया की यह थी कि वह यह भूल ही गई थी कि वह सहधर्मिणी, अर्द्धाङ्गिनी या संसार की नैया की बराबर की खेवैया है। यह अन्धेर ही था कि उसने समझ लिया कि पति की कामवासना की तृप्ति ही उसका कर्तव्य है। दुखिया नारी जीवन का उद्देश्य भूल गई थी। उसे अपने कर्तव्य का ज्ञान ही न था। यदि दुखिया ने पति की पाशविकता को शान्त करने के अलावा अपने अन्य कर्तव्यों की ओर कुछ भी शुरू से ध्यान दिया होता तो उसका अन्त जैसा हुआ वैसा भीषण न होता।

चौथी भूल दुखिया की यह थी कि बच्चे के प्रेम में उसने पति को भी शरीक नहीं कर लिया। पति जी भी अगर बच्चे से कुछ भी प्रेम करने लगते, वे भी लालन पालन में शरीक हो जाते तो दु:ख के बादल इतने शीघ्र न फट पड़ते। दुखिया ने, हम

समझते हैं, यह भी भूल की थी, कि माता होने पर उसने समझ लिया था कि वह स्त्री या पत्नी नहीं रही। दिन भर के बाद शयनागार में जाने पर भी शायद जो गणिका-जीवन व्यतीत कर चुकी थी वह मनमोहक रूप में, स्वच्छ वस्त्रों में, सौन्दर्य को बनाए हुए नहीं जाती थी। बहुत सी देश की ललनाएँ यह भीषण भूल किया करती हैं और अपनी तनिक सी इस असावधानी के कारण उनको जीवन में बहुत बड़ा मूल्य देना पड़ता है।

नख सिख शृङ्गार की हर समय जरूरत नहीं रहती, न कीमती कपड़ों ही की प्रत्येक मिनट आवश्यकता होती है केवल साफ़ कुर्ती, साफ़ धोती, एक माथे की बिन्दी ही की महिमा बहुत है, पहिनने वाली में तनिक बुद्धि होनी चाहिए।

देश की ललनाओं को यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि वैवाहिक जीवन में पूर्ण सफलता प्राप्त करने का अपने रूप को सुन्दर बनाए रखना एक प्रधान रहस्य है। उनको यह ध्यान में रखना चहिए कि स्वभावतः पुरुष जिस स्त्री को देखता है मन ही मन उसके रूप की वह आलोचना जरूर करता है, आलोचना करते समय अनजान ही में अपनी स्त्री के रूप से भी वह उसकी तुलना कर बैठता है। यह पुरुष की प्रकृति है, इसलिए गृह-लक्ष्मियों को सदा अपने बाह्य रूप के सम्बन्ध में सावधान रहना चाहिए। साधारण रूपवती स्त्री अपने ही हित के लिए यह सब सहज में कर सकती है । सहस्रों ही उदाहरण ऐसे पुरुषों के देश में है। जिनकी स्त्रियां परम सुन्दरियां हैं, किन्तु वे दूसरी साधारण स्त्रियों के दास हैं, जो गृह-लक्ष्मियों की तुलना में एक मिनट भी नहीं ठहर सकतीं। वास्तव में स्त्री के लिए साधारण रूप, उससे अधिक बुद्धि, गृह-कार्य में दक्ष होना, पति की सहायिका होना और अपने रूप की सदा चिन्ता रखना सब से आवश्यक बातें हैं। संसार का ख्याल है कि सुतवती होने से रूप

में या बाह्य सुन्दरता में कमी आ जाती है। हमारा कहना यह है कि सुतवती होने से सौन्दर्य निखर जाता है, रूप की कली खिल जाती है और सौन्दर्य कम नहीं होता। हम देश की ललनाओं को यह भी बतला देना चाहते हैं कि सौन्दर्य कायम भी रखा जा सकता है। तनिक तनिक सी बातों पर ध्यान रखने से बाह्य सौन्दर्य में कमी नहीं आ सकती। उदाहरणार्थ अधिकतर देश की ललनाएँ लेट कर बच्चों को दूध पिलाती हैं। लेटी हुई हैं, बच्चा रोया चुप करने के लिए दूध पिलाने लगीं, यह माता के शरीर और बच्चे के स्वास्थ्य दोनों ही के लिए जहर है। बच्चों को दुग्ध बैठ कर पिलाना चाहिए, साथ ही समय भी निश्चित होना चाहिए। दिन में चार बार, छः बार, आठ बार या दस बार, जितनी बार पिलाना हो रोज निश्चित रूप से उसी समय पर पिलाना चाहिए। कहने की बात नहीं, विषय इतना नाजुक है कि तनिक में गाली खाने का डर है फिर भी इस समस्या के पाठक अ र पठिकाओं को हम यह बतला देना चाहते हैं कि आजकल पश्चिमीय संसार में, सुतवती सौंदर्य को कैसे कायम रख सकती है इस संबंध में अच्छी जाँच हो रही है। स्त्रियाँ लेख लिख रही हैं ("I have kept my beauty despite motherhood. How I bore two children yet kept my girlish figure.") "सुतवती होते हुए भी मैंने अपना सौंदर्य कैसे कायम रखा, दो बच्चों की माता हो कर भी मैंने अपना बालिका-रूप कैसे बना रखा"। सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी माताओं को बड़े-बड़े पारितोषिक मिलते हैं। एक ऐसी ही पारितोषिक-प्राप्त माता ने एक आश्चर्य जनक बात कही है। सुतवती होने पर बच्चे को दुग्ध पिलाने से स्तन-वृद्धि अवश्यम्भावी है, शरीर के गठन या काठी पर इसनें सन्देह नहीं वह बहुत कुछ निर्भर है किन्तु इस सुतवती का दावा यह है कि तनिक चेष्टा और समुचित क्रिया से

स्तन पूर्ववत हो जाते हैं। हमने एक चार बच्चों की माता का ऐसा चित्र देखा है जिसमें अङ्ग प्रत्यङ्ग नग्न से दिखाई देते हैं। इन पंक्तियों को लिखते समय हमने दो मित्रों को इस चित्र को दिखला कर पूँछा कि यह चित्र कुमारी का है या विवाहिता का ? मित्रों का कहना है कि सवाल कठिन है, हम यह कह नहीं सकते। उसके सुतवती होने का तो यह स्वप्न भी नहीं देखते। हम उन देश की ललनाओं से, जो पश्चिमीय शिक्षा या धन होने से पुरानी बातों को छोड़ बैठी हैं, यह कह देना चाहते हैं कि सौंदर्य कायम रखने के लिए इस पारितोषिक-प्राप्त माता ने चार रहस्य बतलाये हैं। इनमें एक भी ऐसा नहीं जो साधारण से साधारण स्त्री न कर सकती हो। इन रहस्यों में सर्व प्रथम रहस्य इसने घर में रोज सुबह झाड़ू देना और घर क बुहारना बतलाया है। इस प्रसङ्ग को हम अधिक बढ़ाना नहीं चाहते। हमने केवल इसीलिए इन बातों का जिक्र कर दिया है जिनमें देश की ललनाएँ साथ ही पति देवतागण भी यह समझ लें कि बुद्धि को काम में लाने से स्त्री का सौंदर्य बना रह सकता है और स्त्रियां भी यह समझ लें कि कमल-पत्र पर पड़े हुए ओस बूँद के समान सौंदर्य के सहारे भी नवीनता का भूखा पुरुष-हृदय बांधा जा सकता है। मामूली रूप बेचने वाली क्या सुतवती होती ही नहीं यह भी सोचने की बात है।

पांचवीं भूल जो दुखिया ने की, वह प्रत्येक वर्ष बच्चों का पैदा करना था। धार्मिक, नैतिक या आर्थिक किसी दृष्टि से भी अधिक संख्या में बच्चों का पैदा करना, जिनकी समुचित देख-रेख, शिक्षा, चरित्र-गठन का हम उचित प्रबन्ध नहीं कर सकते, भीषण दण्ड-योग्य कार्य है। बच्चों का पैदा करना जितना आसान है, उनके प्रति कर्तव्य उससे करोड़ों गुना अधिक कठिन है। भारत की गुलामी की दशा में, गुरुवर स्वर्गवासी पं० बाल-

कृष्ण जी भट्ट के शब्दों में, अधिक बच्चों का पैदा करना जघन्य पाप है। कुछ ही दिन बीते म० गांधी जी ने भी देशवासियों से बच्चों को न पैदा करने की प्रार्थना की थी। हमारी कितनी ही देश की ललनाओं की, अधिक संख्या में संतान पैदा करने से, इह-लीला देखते देखते समाप्त हो जाती है। जाँच कर देखा जाय तो प्रसूत और क्षयी रोग का एक प्रधान कारण बालिकाओं का अधिक संख्या में बच्चों को पैदा करना और कम उम्र में माता बन जाना है। बच्चों की मिट्टी ख़राब होती है, माता जान से जाती है और गृह-स्वर्ग की दीवारें स्मशान का रूप धारण कर लेती हैं। अन्धेर है कि ग्यारह, बारह, पन्द्रह, और सोलह वर्ष की बालिकाएँ, जिनको सांसारिक ज्ञान का अ, आ, इ, ई, भी नहीं मालूम माता हो जाती हैं। ऐसी बालिकाएँ मातृत्व के उत्तर-दायित्व को भला किस प्रकार वहन कर सकती हैं ? दुखिया ने प्रत्येक वर्ष बच्चा पैदा कर पाप किया। प्रथम बच्चा पैदा होने के बाद उसे उसी बच्चे का उचित लालन पालन करना था और बच्चे के हृष्टपुष्ट और बड़े होने पर ही उसे दूसरे सुत की कामना करनी चाहिए थी। आज वह संसार में नहीं है, अब उसके बच्चों की देखरेख कौन करेगा ? पति हाथ से गये, बच्चों का सुख देखने को न मिला, क्या हाथ आया ? अधिक संख्या में जल्दी जल्दी पैदा होने से बच्चे प्रायः हीन और कमज़ोर होते हैं और बड़े होने पर जीवन-संग्राम की लड़ाइयाँ लड़ने के योग्य भी नहीं होते।

हमारा यह विश्वास है कि अगर दुखिया ने इतने बच्चों को इतनी जल्दी जन्म न दिया होता तो भी उसका सुख-कानन इतनी जल्दी नष्ट न होता। लोग कहेंगे कि क्या यह उसके हाथ की बात थी ? कहनेवाले यह भी कह देंगे कि क्या दुखिया और उसके पति बच्चा पैदा होने के बाद पूर्ण ब्रह्मचर्य धारण कर लेते ? हमारे समान कुछ लोग यह भी कह बैठेंगे कि पूर्ण ब्रह्मचर्य धारण

करने से दोनों के स्वास्थ्य को हानि पहुँचने की सम्भावना थी। तार्किक कहेंगे कि अगर पूर्ण ब्रह्मचर्य न होता और किन्हीं भी नियमों के अनुसार चलने की आज्ञा दी जाती तो कोई अन्तर न होता, क्योंकि वर्ष में एक दिन में भी गर्भाधान हो जाने की सम्भावना थी। हम अपने ऐसे प्रश्न और ऐसी शङ्काओं को उपस्थित करने वालों से यह कह देना चाहते हैं कि मनुष्य ने प्रकृति पर जो बड़ी बड़ी विजय प्राप्त की हैं उनका उनको पता नहीं है। गर्भाधान न हो, गर्भ की स्थिति न हो और साधारण रीति से पति-पत्नी वैवाहिक जीवन भी वहन करते रहें यह तो कोई बड़ी बात ही नहीं है। आज तो जानकार इसी बात की गारन्टी कर सकते हैं कि जब हम चाहें, जिस मास में चाहें अपनी इच्छानुसार पुत्र या कन्या को जन्म दे सकते हैं। अब यह केवल सिद्धांत की या किताब की कोरी बात ही नहीं रही है। अनुसन्धान, जांच और कार्यरूप में सिद्धांत को परिणत कर उपाय की सत्यता बहुत कुछ सिद्ध कर दी गई है। हिन्दी-संसार में इन बातों की चर्चा करना ही पाप है। जितनी स्वतंत्रता इस कथा में हमने ले ली है उसी के लिए हमारे धर्मभीरु भाई और वे लोग, जिनको किसी की निन्दा करने में आनन्द मिलता है, नाक भौं चढ़ायेंगे। इस सम्बन्ध में बहुत अधिक लिखने की जरूरत भी नहीं और इसलिए हम इतना ही कह कर संतोष करेंगे कि वैवाहिक सुख के लिए, कुटुम्ब के सुख के लिए, अपने स्वास्थ्य के लिए, पति को अपने पास रखने के लिए, देश की दरिद्रता दूर करने के लिए, संसार में भारतवासियों का सर ऊँचा होने देने के लिए, भारतीय महिलाओं! एक या दो बच्चों को पैदाकर ही उनको सिंह बना दो। अधिक बच्चों से तुम्हारा संसार, तुम्हारा सुख और तुम्हारा देश रसातल को चला जायगा। अधिक बच्चों को पैदा करने का अधिकार सिर्फ उनको है जो

सब की समुचित देख-रेख शिक्षा आदि का पूर्ण रूप से प्रबन्ध कर सकती हैं और जो उनको इस योग्य बना सकती है कि वे संसार-समुद्र की विपरीत और दुखमय उत्ताल तरङ्गों के बीच चट्टान से खड़े रहें।

हम समझते हैं कि थोड़े शब्दों में, बिना अधिक विस्तार के, हमने यह बतला दिया है कि दुखिया को क्या करना चाहिए था और भविष्य में क्या करने से ऐसी घटनाओं का घटना असम्भव किया जा सकता है। अन्त में हम इतना ही कह देना चाहते हैं कि हमारी समझ में वैवाहिक जीवन को सुखमय बनाने के मूलमन्त्र थोड़े में इस प्रकार हैं:—

(१) जीवन लेन-देन और समझौते का एक सामुदायिक समूह है। जीवन तथ्य और व्यावहारिक है। उचित मात्रा में भावुकता जीवन को ऊँचे उठाती है, किन्तु विवेक और जीवन की तथ्यता अपनी अवहेलना सहन नहीं कर सकती इसलिये समझना कि केवल प्रेम ही सब कुछ है और प्रेम करने से ही सब सुख मिल जायगा भ्रममात्र है।

(२) पुरुष-हृदय स्वार्थी, जल्दी ऊब जाने वाला, सदा सुख ढूंढनेवाला, नवीनता तथा परिवर्तन का पुजारी है। इसे काबू में रखने के लिए स्त्री में चातुरी और विद्या की आवश्यकता है।

(३) स्त्री को यह ध्यान में रखना चाहिए कि केवल बच्चों को पैदा करने के लिए ही उसकी सृष्टि नहीं हुई है। बच्चा पैदा कर सकने के सिवाय स्त्री में स्त्रीत्व का होना वास्तव में सृष्टि के विकास को पीछे ढकेल देना है। स्त्री में गृह के प्रबन्ध की, बच्चों के पालन-पोषण की और पति के कामों में दिलचस्पी लेने की पूरी योग्यता होनी चाहिए।

(४) सदा पति की दृष्टि में स्त्री को सुघर और सुन्दर

दिखाई देना चाहिए। शारीरिक सौन्दर्य को बनाये रखने के लिए भी उसे सदा प्रयत्न करना चाहिए।

(५) मित्र, सहयात्री अर्द्धाङ्गिनी बन कर स्त्री को पति के हृदय में स्नेह और आदर प्राप्त करना चाहिए। स्त्री गृह-कार्य में, पति के कामों में और पति के अवकाश के समय में पति के हितैषी मित्र की भाँति काम आकर पति के हृदय में स्नेह और आदर के आसन पर बैठ सकती है। ऐसा करने पर पति का तत्व-हीन पाशविक प्रेम रहे या जाय, किन्तु हृदय में प्राप्त किया हुआ आदर और स्नेह का स्थान सदा बना रहेगा और पति हाथ से बाहर न हो सकेगा।

(६) बच्चा पैदा होने पर पत्नी को और भी सावधान होना चाहिए। उसे यह न भूलना चाहिए कि माता होते हुए भी वह स्त्री और पत्नी रहती है। अक्सर पत्नी बच्चे की सेवा-सुश्रूषा में लीन हो जाती है और पति को अपने पुरुष मित्रों का, समय काटने के लिए, सहारा लेना पड़ता है। कभी कभी उसे अपने मनोरञ्जन की फ़िक्र में बेताब रहना पड़ता है। इसी समय में कितना ही भेद-भाव पैदा हो जाता है। बहुत बच्चों का होना दुःख और दरिद्रता का पेशखेमा है। पति को ऐसे मनोरञ्जनों की फ़िक्र करने देना जिनका पत्नी को पता नहीं लग सकता या जिसमें पत्नी स्वयं योग नहीं दे सकती भयावह है। बच्चे एक दो बहुत हैं, दूसरा भी जब होना चाहिए जब पहिला पुष्ट हो जाय और माता के शरीर में दूसरे बच्चे को पैदा करने की शक्ति आ जाय। साथ ही जब प्रथम बच्चा इस लायक हो जाय कि पति उसकी देखरेख सहज में कर सके।

(७) पति में नरश्रेष्ठ की खोज मत करो। पति से उसकी विशेषताओं के लिए नहीं, मानव-पूर्णता के लिए नहीं वरन् उसकी कमज़ोरियों, त्रुटियों और हीनताओं के लिए प्रेम करो।

(८) लैला मजनू के आदर्श की दीवानी मत बनो, संसार तथ्य है, तथ्य बातों पर नजर रखो, भावुकता के प्रवाह से व्यवहारिक विद्रोह के बांध को मत बहा दो, पति से अत्यधिक आशा न करो और ईश्वर को जो कुछ हो, उसके लिए ही धन्यवाद दो। जिनसे इतना भी न हो सके, उनसे हम सुखमय वैवाहिक जीवन का रहस्य सूत्ररूप में इस प्रकार कह देना चाहते हैं :—

पत्नी के कर्म क्षेत्र के प्रत्येक विभाग और कार्य में सुघराई और अपनी खास अदा या विशेषता प्रदर्शित करो, तुम पति की दृष्टि में सदा सुन्दरी बनी रहो, तुम उसे उसकी शारीरिक और मानसिक आवश्कताओं की पूर्ति करने वाली और उसके निवृत मार्ग की नेत्री दिखाई दो, तुम उसके काम-काज से अनजान न रहो और सदा सहयात्री, मित्र और सहचरी बनने का पूर्ण उद्योग करो। तुम यह सदा ध्यान में रखो कि पति पत्नी की जिस विशेषता की सबसे अधिक कदर करता है वह पत्नी का पति की सहायिका होना हो सकता है।

पति को मुग्ध रखने का मन्त्र यही है किन्तु इस मन्त्र का बीज यह है कि यह सब करते रहने पर भी पति यह न समझने पाये कि उसे प्रसन्न करने के लिए ही तुम यह सब कर रही हो। उसके ऊपर प्रभाव ऐसा पड़ना चाहिए मानो यह सब करना तुम्हारी प्रकृति ही है और तुम प्रयत्न से जान बूझ कर विशेष रूप से कुछ नहीं कर रही हो। पति को यह ज्ञान होने देना कि उसे प्रसन्न करने के लिए ही सब कुछ हो रहा है जहर है।

पतिव्रता-चरित्र

अथवा

भार्या-कर्तव्य

[वात्स्यायन के "कामसूत्र" से उद्धृत]

(१) पतिव्रता स्त्री को चाहिए कि पति को देवता-समान जाने और उसकी इच्छा के अनुकूल रीति से ही जीवन वहन करे।

(२) उसकी सम्मति प्राप्त कर उसकी मर्जी के अनुसार कुटु-म्बीजनों की हितचिन्ता में लीन हो और गृहस्थी का प्रबन्ध करे।

(३) घर को पवित्र और साफ़ सुथरा बनाए रहे और उसमें विविध प्रकार के फूलों के पेड़ों को लगाए। सुन्दर, रम्य दर्शनीय स्थल पर बेदी बनाए, तीनों काल में विधि से बलि करे और देव-ताओं का पूजन करे।

(४)गृहस्थों के हृदय पर असर करने के लिए घर को साफ़ सुथरा और रम्य बनाए रहने से बढ़कर और कोई दूसरी चीज़ नहीं है, यह गोनर्दीयाचार्य का मत है।

(५) बड़ों, दास-दासियों, ननद और नन्दोई का उनके पद के अनुसार उचित आदर करे।

(६) साफ़ किए हुए उपयुक्त स्थल पर साग तथा हरी तर-कारी के पेड़ों को लगाए, ईख बोये, जीरा, सरसों, अजवायन,

शतपुष्पा तथा अन्य सुन्दर फूलों और फलों के पेड़ों को लगाये।❀

(७) रौस, पट्टे, और दूब के लान्स सहित एक सुन्दर नजर बाग बनाए, कुब्जक, आमलक, मल्लिका, चमेली, कुन्द, निवारी, जसमत, तगर, सुगन्धबाला और इसी प्रकार के अन्य फूलों के वृक्ष लगाए।

(८) बीच में कुआँ, बावली, या तड़ाग खुदवाए।

(९) भिक्षा मांगने वाली, शकुन बताने वाली, कपटचारिणी, पुँश्चली, सन्यासिनी आदि स्त्रियों का संसर्ग सदा बचाए, इनके साथ कभी न उठे बैठे।

(१०) भोजन के पदार्थों में इस बात को सदा ध्यान में रखे कि पति तथा कुटुम्बीजन को क्या रुचिकर है क्या नहीं, क्या पथ्य है क्या अपथ्य।

(११) बाहर से पति आ रहा है यह जान कर आङ्गन में उसके बैठने के लिए बिस्तर ठीक कर खड़ी रहे, और उसके भीतर आने पर उससे कुशल समाचार पूछे और क्या आज्ञा है, क्या आदेश है यह सब कहे।

(१२) पैर धोने के लिये आई हुई दासी को हटा कर स्वयं पति के चरणों को धोये।

(१३) पति जब अकेला बैठा हो तो अलंकार और श्रृङ्गार-विहीन अवस्था में उसके सामने कभी न जाय।

(१४) अगर पति फ़जूल खर्च हो, अच्छी बातों में न खर्च करता हो तो इन बातों के लिये उसे अकेले में ही समझावे दूसरों के सामने नहीं।

❀इससे यह स्पष्ट है कि प्राचीन काल में कुमारियों को बागवानी की कुछ शिक्षा दी जाती थी।

(१५) पति की आज्ञा प्राप्त कर ही वह विवाह, यज्ञ, मेले तमाशों, देवोत्सवों और सामाजिक सम्मेलनों* (Social-gatherings) में जाए।

(१६) सब खेलों, शौकों और दिल बहलाव की बातों में उसकी प्रवृत्ति पति की अनुकूलता प्राप्त कर ही होनी चाहिए।

(१७) पीछे सोए, पहिले उठे और सोते हुए पति को बिना विशेष कारण के न जगाए।

(१८) रसोई का गृह आने जाने वालों की दृष्टि से दूर हो, साथ ही साफ़ सुथरा और देखने लायक हो।

(१९) किसी समय यदि पति के व्यवहार से नाराज हो जाय तो उसी समय उसके लिए उसे हाय हाय नहीं करनी चाहिए।

(२०) अगर पति मित्रों के बीच में बैठा हो तो पत्नी कुछ न कहे, जब वह अकेले में हों तो पत्नी तीखी बातें भी कह सकती है किन्तु उसे पति को वश में रखने के लिये टोना, मंतर-जंतर की फ़िक्र कभी नहीं करनी चाहिए।

(२१) वशीकरण, टोना; मंत्र जंत्र के करने से वह पति का विश्वास सदा के लिये खो बैठेगी।

(२२) पत्नी को यह सब भूल कर नहीं करना चाहिए:—कटु या तीखे वचन पति से बोलना, उसकी ओर प्रेमविहीन, शुष्क या घृणा की दृष्टि से देखना, (Cold looks) द्वारपर झांकना, द्वार पर खड़ी होना या गलियारे में किसी से कुछ सलाह

---

*"पेरिस" के "काम-सूत्र" के संस्करण में पाठान्तर है, यह टीका उसी के अनुसार की गई है।

†"यह मेरी शिक्षा मान सहेली,
पर नर संग न बैठ अकेली"

या गुप्त बात करना, बाग में किसी से अलग अकेली खड़ी बातें करना या वहाँ देर तक ठहरना।

(२३) उसे यह भी जानना चाहिए कि मलिनता, दुर्गन्ध, पसीने की हो या दातों की या शरीर के पति के विराग की कारण होती है।

(२४) बहुत से आभूषण, विविध प्रकार के सुगन्धमय पुष्प, मधुर सुगन्ध वाले इत्र और सेन्ट्स, सुगन्धमय वस्त्र साधारणतया धारण करे; थोड़े रेशमी वस्त्र, थोड़े से आभूषण, कुछ, अधिक नहीं, इत्र, सफ़ेद थोड़े से पुष्प यह स्त्री का वैहारिक वेष है।*

(२५) जो व्रत या उपवास पति रखे उसे पत्नी भी रखे, पति मना भी करे तो इस सम्बन्ध में उसकी बातों को न माने।

(२६) मिट्टी, काठ, चमड़े, और लोहे के बर्तनों को समय समय पर खरीदती रहे।

(२७) इसी तरह से समय समय पर नमक (सेंधा), तेल, घी, गन्ध द्रव्य जैसे केशर, कस्तूरी, इलायची, इत्र, औषधियों और रसादिक का गुप्त संग्रह करती रहे, ये किसी समय में लाभ देते हैं।

---

*"रतिरहस्य" में लिखा हुआ है:—

"सित परिमित वेषं केलि बिहार हेतोः।
प्रचुर मरुणमाहुः प्रेयसो रंजनाय॥

अर्थात् खेलने कूदने, बाहर आने जाने के लिए सफ़ेद वसन धारण करे, पति को प्रसन्न करने के लिए लाल, गुलाबी आदि। मेरी समझ में बाहर के लिए सौम्य, तड़क भड़क और चमकीला नहीं, सादा ही होना चाहिए, पति के लिए, जो रंग अपने उपयुक्त हो तथा जो अपने को और पति को भी पसन्द हो, वही पहिनना चाहिए।

(२८) मूली, पालक (साग), दमना, बैगन, शूरण, कोहड़ा, अरुई, आदि का बीज समय पर संग्रह करे और समय से इनको बोती रहे* ।

पति की सलाह, उसकी गुप्त बातों, रहस्यों, किस उद्देश्य से वह क्या कर रहा है और क्या करने वाला है यह सब तथा इसी तरह से अपनी बातों को भी दूसरों पर कभी न प्रकट करे।†

अपने बराबर वाली सभी स्त्रियों से विद्या में, बुद्धि में, सफ़ाई और पवित्रता में, अच्छा भोजन बनाने में और शृङ्गार और वेष-भूषा में सदा श्रेष्ठ रहे।

---

*हमारे अभाग्य से शासन-प्रबन्ध देश का हमारे हाथ में नहीं है नहीं तो म्युनिसिपैलटियां और इम्प्रूवमेन्ट ट्रस्ट (Garden Houses) वाटिका-गृहों की रचना करा सकते हैं और प्रत्येक गृहणी अपने घर के चहार दीवारी के भीतर सहज में ही एक छोटा नंबर बाग बना सकती है। वह उसमें एक आम, एक संतरा एक अमरूद, एक केला, एक नीबू का पेड़ तो लगा ही सकती है, साथ ही लौकी, रामनिनुआ, पालक, कोहड़ा, भिंडी, सेम, टमाटो आदि को नित्य की तरकारी के लिए घर ही में पैदा कर सकती है। दो चार दस फूलों के वृक्षों को भी वह लगा सकती है।

†"पेरिस" के तथा कदाचित १८३४ के संस्करण में जो लंदन के "इंडिया आफिस" में हैं कहीं कहीं पर पाठान्तर भी है। "पेरिस" के एक "कामसूत्र" के टीकाकार ने इसका अनुवाद इस तरह से अङ्गरेजी भाषा में किया है :—

"She should excel the women of her rank and birth in cleverness and the knowledge of the 64 kalas (arts) appearence art of cooking, noblencess and the service of her husband."

※साल भर की अपनी आय को देखे और उसी के अनुरूप घर का खर्च बाँधे, यह नहीं कि आय कम, खर्च ज्यादे हो रहा है, या आमदनी और खर्च बराबर है।

भोजन के काम से अधिक जो दूध बचे उससे मक्खन, गन्ने से गुड़ और तिल तथा सरसों से तैल निकाला करे।

रुई से सूत काता करे और सूत से कपड़ा तैयार किया करे।

सिकहर, रस्सी, मवेशियों के लिए गेराई बन्वाती रहे, कूटने पीसने वालियों पर निगाह रखे, धान कड़ाते समय भूसी कनी, वगैरह को बेकार न जाने दे, उनको भी किसी काम में लाये। दास-दासियों के वेतन को ध्यान में रखे और समय पर बांटती रहे। "वेतन भरण" के स्थान पर "पेरिस" के संस्करण में "चेतन भरण" है, जिसका अर्थ यह हो सकता है कि दास दासियों के सुख दुःख पर भी ध्यान रखे। कृषि, पशु-पालन, और वाहनों के बनाने का ज्ञान रखे और वाहनों पर निगाह रखे। भेड़, बकरी, कुक्कुट, लावक, तोता, कोयल, मैना, मोर बन्दर, हिरन आदि पाले, तथा आमदनी और खर्च पर सदा निगाह रखे।

अपने तथा पति के पहिने हुए पुराने कपड़ों को ठीक और साफ़ करा कर दास-दासियों को जो ईमानदारी से अपने कर्तव्य का पालन करते हों इनाम के तौर पर, या, उनके मान के लिए, दे, या किसी अन्य उपयुक्त पात्र को दे या और ही किसी तरह से उनको काम में लाये।

"कन्दर्पचूड़ामणि" में लिखा है "आय व्यय प्रगण-नमपि कुर्यात् पक्षमासवर्षादेः (पन्द्रह दिन, महीने और वर्ष पर आय-व्यय का हिसाब किया करे)

※"यह तू शिक्षा साथ को, निहचैचित मेला भेद न अपने जीउ का औरों को बतला" या "यह भी मेरी बात तू जीव बीच धर ले गजारे गज बालका, परजीव भेद मत दे"

पति के मित्रों का इत्र, पान से समुचित आदर करे, सास श्वसुर की सेवा करे, उनकी आज्ञा में रहे और उनकी परतंत्रता में रहे, उनकी बातों का जवाब न दे, मधुर और मिष्ट-भाषण करे और ज़ोर से हँसे भी नहीं। पति के मित्रों को मित्र और उसके शत्रुओं को अपना शत्रु समझे। लक्ष्मी तथा अपने श्रेष्ठपद का गर्व न करे, दास-दासियों से भी मनुष्यता का ही व्यवहार करे, पति की सम्मति बिना किसी को कुछ भी न दे, दास दासियों को उनके कर्तव्यों में लगाये रहे और महोत्सवों पर उनको कुछ इनाम भी देती रहे। अपने पति के साथ रहती हुई पतिव्रता स्त्री के यह सब कर्तव्य हैं।

पति के विदेश में होने पर

पति के विदेश में होने के समय वह केवल सधवा स्त्री के साधारण माङ्गलिक श्रृङ्गार को ही करे, देव तिथियों को उपवासादि करे और पति के आदेशानुसार गृह का प्रबन्ध और उसकी देख भाल करती रहे।

इस समय में वह अपना बिस्तर घर की बड़ी बूढ़ी स्त्रियों सास, ननद या जेठानी के पास ही रखे और उनके पास सोये और उनकी अनुमति के अनुसार ही कामों को करे। पति के प्रिय सामानों को भी इस समय में खरीदती रहे और जो घर में मौजूद हो उसकी देख भाल करती रहे कि वह खराब नहीं हो रहा है।

नित्य और नैमित्तिक कामों में उपयुक्त खर्च करती रहे और पति के आरंभ किये हुए कामों की पूर्ति का भी इस तरह से प्रयत्न करती रहे कि पति के आने तक काम समाप्त हो जाय।

जाति बिरादरी में यहाँ तक कि अपने पिता के गृह में भी न जाये और यदि जाये भी तो पति के परिजनों के साथ और उनकी अध्यक्षता में, केवल विशेष कारण से जैसे शादी गमी

या किसी महोत्सव के उपस्थित होने पर। वहाँ देर तक ठहरे नहीं और न पति के विदेश में होने के कारण जो वस्त्राभूषण वह पहिनती है उसमें किसी तरह का भी परिवर्तन ही करे।

गुरूजनों की आज्ञा से क्रय-विक्रय कर, ईमानदार सेवकों के द्वारा सस्ता माल खरीद और बेच कर; अपनी चतुराई से घर का खर्च कम कर, घर की लक्ष्मी की वृद्धि करे।

पति के आने पर प्रथम वह अपने पति के विदेश गमनवेश में ही उसका दर्शन करे और फिर देवताओं का पूजनादि करे।

एक विवाहिता, पतिव्रता, पतिरता स्त्री, एक पुनर्भू (विधवा जिसने दूसरा विवाह कर लिया है), और एक वेश्या भी जो एक पुरुष में ही आसक्त है उपर्युक्त रीति से आचरण कर इस संसार में धर्म अर्थ और काम तीनों की ही सिद्ध कर सकती है।

"कन्दर्प चूड़ामणि" में यह भी लिखा हुआ है:—

"बाह्या न च प्रवेश्या अन्तः पुरके कदाप्यविज्ञाता।
धर्मेष्व वधृतशौचाः संजोज्या योग्यताम् ज्ञात्वा" ॥

जिनका आचरण ज्ञात नहीं है, ऐसी बाहरी स्त्रियों को घर में न आने दे, धर्मशील स्त्रियों को उनकी योग्यता जान कर ही घर में आने दे।

कक्कोक अथवा कोकने "रतिरहस्य" में लिखा है:—

अनुमति भूपलभ्याधिष्टतान्यत्र याया—
च्छ्रपन मनुविदध्याद्भर्त्तुरुत्थानमग्रे
शयिनपि न मुञ्चेन्नास्य मंत्रं विभिन्द्याद्
व्रत नियमविधानम् स्वेनचास्यानुगच्छेत् ॥

बिना पति की अनुमति प्राप्त किए हुए वह कहीं न जाय और कहीं जाय तो ननद के साथ। सोये बाद को, उठे पति के पहिले वह सोता हो तब भी उसका साथ न छोड़े………। (यह टीका "रतिरहस्य" के एक जर्मन टीकाकार ने अङ्गरेजी में की है)

सौन्दर्य-वृद्धि का नुस्ख़ा

अथवा

व्यायाम-शिक्षा

अधिक से अधिक पवित्र वायु और सूर्य के प्रकाश का सेवन, सुबह सर ऊँचा रख और कमर और पीठ को तनी और सीधी रख कर, दो-तीन मील पैदल टहल आना, दरिया में तैर लेना, घोड़े की सवारी कर लेना, घंटे आध घंटे टेनिस खेल लेना शरीर और मस्तिष्क दोनों ही के लिए बहुत श्रेयस्कर है, किन्तु यह सब ही हम लोगों के भाग्य में नहीं। डंबल, मुग्दर आदि हम लोगों को रुचिकर नहीं हो सकता, और हो भी तो वर्तमान स्थिति में हम लोगों को अपने घरों में यह सब करना, हमको किसी तरह रुचिकर भी हो तो, हमारी बड़ी बूढ़ियों को पसन्द न आयेगा और रोज़ टुन्न फुन्न लगा रहेगा। इसीलिए मैं अपने ही हाथ पैर के सहारे, बिना किसी अन्य वस्तु की सहायता के, अपने हाथ पैर ही को लयानुगत-क्रम से हिलाना डुलाना और स्वास की कसरत कर लेना सब से अच्छा समझती हूं। हम इससे शरीर के प्रत्येक अङ्ग को अधिक से अधिक सुन्दर, सुडौल और लावण्यमय बना सकती हैं। जो कसरतें मैंने चुनी हैं, उनसे प्रत्येक स्त्री शरीर को स्वस्थ और सुन्दर बना सकती है, इससे उसका सौन्दर्य उतार पर नहीं आ सकेगा, साथ ही उसे प्रसव-काल की वेदना कभी नहीं हो सकेगी या नहीं के बराबर होगी। इन कसरतों के लिए न पैसे के ख़र्च की ज़रूरत है, न इनके लिए किसी विशेष आयोजन की

का त्याग करे। अत्यन्त कठोर शब्द न सुने, हँसे न तथा बहुत बोलने का त्याग करे (मितभाषी बने) परिश्रम न करे, भूमि न खोदे और वायु सेवन न करे।" (इसमें रजस्वला को अपवित्र समझने के लिए कोई गुञ्जायश नहीं है। नियमों का अर्थ केवल यह है कि वह ब्रह्मचर्य से रहे जिसमें सुसन्तान पैदा करने में वह समर्थ हो सके।)

"अज्ञान से या प्रमाद से या दुर्भाग्य से जो रजोवती स्त्री निषिद्ध कार्य करती है उसके गर्भ में दोष उत्पन्न होता है। स्राव-काल में स्त्री के रोने से गर्भस्थ बालक विकृतलोचन वाला, नख काटने से कुनखी, अभ्यंग करने से कुष्ठी, अनुलेपन और स्नान से दुख शील, अञ्जन लगाने से आँख रहित, दिन के सोने से खूब सोने वाला, दौड़ने से चंचल, और अत्यन्त उच्च शब्द सुनने से बधिर होता है। हँसने से गर्भस्थ बच्चे का दाँत, तालु ओष्ठ जिह्वा काले होते हैं, अत्यन्त बक बक करने से बच्चा प्रलापी परिश्रम करने से, उन्मत्त प्रकृति का तथा वायु सेवन से भी उन्मत्त होता है। ऐसा आयुर्वेद का मत है।"

लक्ष्मी किन स्त्रियों के पास निवास करती हैं?

भगवान कृष्ण के पास बैठी हुई रुक्मिणी के पूछने पर लक्ष्मी ने कहा था—"मैं स्वधर्म में निष्ठा रखने वाली, धर्मज्ञ, वृद्धों की सेवा करने वाली, कृतात्मा, क्षमा-शील, सत्यशील सरल, देवताओं की पूजा करने वाली स्त्रियों के पास रहती हूं। जिसके गृह की सामग्री इधर उधर बिखरी रहती है, जो बिना विचारे कार्य किया करती है, सदा पति के विषय में प्रतिकूलवादिनी हुआ करती हैं, जो पराये गृह में वास करने में प्रसन्न रहती हैं, और लज्जाहीना होती हैं मैं उस स्त्री का परित्याग किया करती हूं। पतिव्रता, प्रियदर्शना, गुणमयी स्त्री के पास सदा निवास करती हूं और कलहकारिणी, दयाहीना, अपवित्र, आलसी, सदा सोने वाली स्त्री से सदा दूर भागती हूं।

(अनुशासन पर्व)

रजस्वला के नियम

"जिस दिन से रजस्राव आरम्भ हो उसी दिन से अहिंसाव्रत धारण करे, ब्रह्मचर्य से रहे, कुश की चटाई पर सोए, अपने पति का भी दर्शन न करे, हाथ में, मिट्टी के बर्तन में या पत्तल पर तीन दिनों तक हविष्य (खीर) खाय। आँखों से आँसू न गिरावे, नाखून न काटे, अभ्यंग (तैल मर्दन) और अनुलेपन न करे। नेत्र में अञ्जन न लगावे, स्नान न करे, दिन में सोने और प्रधावन

जरूरत है। हवादार कमरे में, बराण्डे में, नीचे की छत पर, तिम-हले पर नहीं जहाँ दुनिया देख सके, यह सब अधिक से अधिक पन्द्रह मिनट में की जा सकती हैं, और इस तरह से नित्य केवल पन्द्रह मिनट खर्च कर हम अपने जीवन को हंसता बोलता, स्वस्थ जीवन बना सकतीं है। शुरू शुरू में यह जरूरी नहीं कि हम उन्नीसों कसरतें करने लगें। इसके लिए अभ्यास की जरूरत होगी, साथ ही अन्तिम दो चार कठिन भी हैं, और उनके लिए शुरू में किसी की सहायता की जरूरत होगी। इसलिए धीरे धीरे जितनी हम कर सकें, करती रहें और दूसरों के करने की कोशिश भी करती रहें। शुरू की पाँच एक दम सरल हैं और यदि उनको ही ठीक तरह से हम सदा करती रहें तब भी हम स्वस्थ रह सकती हैं। ५, ६, से बारह तक की संख्या वाली कसरतें भी सहज ही हैं। (बेण्ड) झुकने की आगे की कसरतें सब कठिन हैं और इनके लिए महीनों के अभ्यास* की आवश्यकता है, किन्तु प्रसव-वेदना को कम करने के लिए, यौवन-श्री की वृद्धि के लिए, साथ ही शरीर को एक दम साँचे में ढला हुआ सा, माता हो जाने पर भी, बनाये रखने के लिए ये नितान्त आवश्यक हैं। तस्वीरें मि० मूलर के "माई सिस्टम फ़ार लेडीज" और अमरीका के डा० बर-नर मेकफेडन की "फिज़ीकल कलचर मेगजीन" की विविध संख्याओं से ले ली गई हैं और इनके लिए मैं उपर्युक्त स्वास्थ्य के विशेषज्ञों की कृतज्ञ हूं।

---

*"अभ्यास सारिणी विद्या"

(१)

(२)

(३)

(४)

(५)

(६)

(७)

(८)

(१) सीधे खड़ी हो जाओ, अङ्ग प्रत्यङ्ग तने हुए, खिंचे और सीधे हों।

(२) तस्वीर में जिस तरह है उसी तरह पहिली, इसी तरह से तीसरी और चौथी में।

(३) पहली सूरत से दूसरी सूरत में हो जाओ और फिर

(४) इसी तरह से दोनों हाथों को सीधे उनकी पूरी सिधाई में सामने की ओर मिला दो, पांच, दस बार यह सब करना चाहिए। यह याद रहे कि झुकने में स्वास को निकालती रहो, और अंगों को ऊपर करती समय स्वास भरती रहो इतनी लंबी स्वास भरो कि छाती और पेट हवा से उभर आयें। स्वास निकालते समय धीरे धीरे ही निकालनी चाहिए। कंधे सदा ऊँचे रहें, सर तना हुआ रहे और कमर से एक लकीर में हो।

(५) पहिली तस्वीर की स्थिति से स्वास को भरती हुई धीरे धीरे उठती हुई पंजे के बल खड़ी हो जाओ और फिर धीरे धीरे स्वास को निकालती हुई हाथों को नीचे लाकर कमर के पास नीचे स्वाभाविक रीति से लटका दो। पैर की एड़ियां फिर ज़मीन पर हो जांय। अङ्ग सब तने रहें और ढीले न हो। यह सब क्रम से दो चार, दस पन्द्रस बार करना चाहिए।

(६) पांचवी स्थिति से हाथों को ज़मीन पर रख देने की कोशिश करो किन्तु पैर और पीठ बिलकुल तनी रहे।

(७) पैर कहीं से झुकें नहीं, हाथों को तस्वीर में जैसे हैं वैसे रखने की कोशिश करो। इससे पैर बिलकुल सांचे में ढले से सुन्दर हो जाते हैं।

(८) ज़मीन पर इस तरह से बैठ, कमर को सीधी रख, हाथों से पैरों के पंजों को छूने की कोशिश करो। इस से पेट के कष्ट नहीं होने पाते, साथ ही पेट की नाड़ियां मज़बूत हो जाती हैं।

(९)

(१०)

(११)

(१२)

बेंड़ की कसरतें
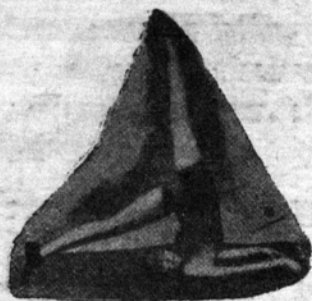
(१३)　　　　(१४)

(१५)　　　　(१६)

माता हो जाने पर भी इन कसरतों की सहायता से सौन्दर्य कायम रखा जा सकता है।

(९) यह साधारण डंड है, तस्वीर की सूरत में हो जाओ, तब हाथ की कुहनियों को झुकाती हुई छाती को ज़मीन की तरफ ले जाओ, ध्यान रहे पीठ सीधी रहे, और गरदन और सर ऊँचा रहे। नीचे जाती समय स्वास धीरे धीरे निकालो, ऊपर उठती समय स्वास को भरो।

(१०) बैठक है; सब से सरल किन्तु शरीर, विशेष कर रानों और पिंडलियों, को सुडौल बनाने में सर्व-श्रेष्ठ। इसी तरह धीरे धीरे उठो, बैठो, दस, पन्द्रह बार। खड़ी होती समय पैर ज़मीन पर आ जाँय, बैठती समय धीरे धीरे पंजे के बल हो जाओ।

(११) एक पैर पर बैठना। शुरू में यह जल्दी नहीं बनेगा किन्तु अभ्यास से यह सरल हो जायगा, इससे रानें, पिंडलियाँ और नितम्ब सुडौल हो जाते हैं।

(१२) ज़मीन पर लेट कर, पैर तस्वीर की भाँति धीरे धीरे उठाओ और नीचा करो। पैर तने रहें।

(१३) यह कठिन है, किन्तु धीरे धीरे अभ्यास करती रहने से यह होने लगेगा। यौवन-श्री की वृद्धि के लिए, साथ ही इसलिए कि चोली खंड, अङ्गिया पहिनने की ज़रूरत ही न पड़े और रगों और पठ्ठों की चोली आप ही तैयार हो जाय, यह कसरत सर्व-श्रेष्ठ है।

(१४) यह भी अभ्यास करने से ही हो सकती है यह बहुत लाभ-कर है।

(१५) इसी को बेण्ड कहते हैं, सर ज़मीन के पास न होकर, ऊँचा रहे, हाथ सीधे और पीठ तनी रहे। स्त्रियों के लिए यह बहुत ही हितकर है। माता हो जाने पर भी इसको करती रहने से यौवन-श्री में कमी नहीं आने पाती।

(१६) यह भी अच्छी कसरत है, किन्तु करते ही करते होगी।

सौन्दर्य-वृद्धि और प्रसव-वेदना को कम करने में

यह सब रामबाण हैं

(१७)

(१८)

(१६)
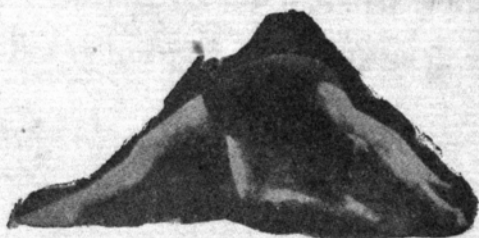
(१७) यह और भी कठिन है, किन्तु अभ्यास से क्या नहीं हो सकता, प्रसव-वेदना को कम करने के लिए तो यह रामबाण है ।

(१८), (१६) दोनों ही के लिए बहुत अभ्यास की आवश्यकता है और शुरू शुरू में किसी की सहायता नितान्त आवश्यक है

रानी कलावती को सुहागरात की कथा

[पद्यानुवाद, "स्कन्द पुराण" से]

[ले०:—श्री० रामशंकर जी शुक्ल 'रसाल', एम० ए०;डी० लिट०]

सज्जन यह इतिहास पुरातन यों कहते हैं।
जो सुनते हैं इसे मोद मंगल लहते हैं॥
यदु-श्रेष्ठ दाशार्ह नाम राजा बलशाली।
उत्साही, मतिमान, प्रजा मथुरा की पाली॥
विविध गुणों से युक्त, नीत नय में नागर थे।
रणविजयी, गंभीर, धीर, विद्या-सागर थे॥
यौवनरूप अनूपयुक्त वे अति वदान्य थे।
सकल शास्त्र-सम्पन्न, रथी वे विश्वमान्य थे॥
काशिराज की सुता, सुन्दरी गुणवाली को॥
कलावती को प्राप्त किया शोभाशाली को॥
संगम-सुख के लिए रात को उसे बुलाया।
लाकर अपने यहां सेज पर उसे बिठाया॥
नृपति-प्रार्थिता सती बुलाई भी जाने पर।
नहिं आई, तब नृपति उठे बरबस लाने पर॥
"हूं व्रत में स्थित, नृपति! आप मत छूवें मुझको।
जान सुधर्माधर्म, न सहसा खीचें मुझको॥
दम्पति का सस्नेह-योग ही प्रीति बढ़ाता।
सज्जन कहते, सरुचि सुसंगम मोद मढ़ाता॥
मुदित जभी मैं, तभी सुखद संगम भी होगा।
क्या सुख? क्या सुस्नेह? भोग यदि बल से होगा॥

धृतव्रत, रोगी, रजस्वला अरु प्रीति-विहीना।
नर-हित दुखप्रद नारि सबल-अपहृत अरु दीना॥
सदय हृदय से पाल पोष कर प्रीति लगाकर।
उचित युवति में रमै मंजु, मृदु, मोद जगा कर॥
*कुसुमित रमणी साथ रमण होता सुखकारी।"
सुन कर यह भी, गई न नृप-मनेच्छा भारी॥
बस सहसा ही उसे नृपति ने अंक लगाया।
तप्त कनक सा उसे जलाता निज को पाया॥
जल कर हो भयभीत, छोड़ उसको नृप न्यारी।
बोले "है आश्चर्य मुझे यह लखकर भारी॥
कैसे कोमल कुसुम सदृश यह गात तुम्हारा।
बस सहसा ही हुआ अनल का ज्यों अंगारा"॥
लखि नृप को भयभीत, चकित महिषी मुसुकाई।
हँसकर उसने विनययुक्त यह गिरा सुनाई॥
"दुर्वासा को मुझे देख कुछ करुणा आई।
शैवी पंचाक्षरी सुविद्या मुझे सिखाई॥
इसी मंत्र की दिव्य शक्ति से मेरे तन को।
कलुषित, पापी पुरुष न छू सकता है तन को†।

---

*कुसुमित के अर्थ दो होने चाहिए। जिसे रजोधर्म होना आरम्भ हुआ हो ऐसी स्त्री का सहवास निषिद्ध है, साथ ही यह भी कि स्त्री कुसुमवत् होती है और उसके साथ वैसे ही मृदुल व्यवहार भी करने चाहिए। जिस तरह बल-प्रयोग और उनका समुचित मान न करने से फूल नष्ट, मृतप्राय और सुगन्धहीन हो जाते हैं उसी तरह स्त्री भी कोमल होती है और बल प्रयोग से हतश्री हो जाती है। "कुसुम सधर्माणो हि योषितः सुकुमारोपक्रमाः" इति "कामसूत्रे"।

†तनिक भी।

२०

राजन ! तुमसे सदा प्रकृति-कुलटा गणिकायें ।
सेयी जातीं सुरासेवनी ही बालायें ॥
करते हो न स्नान, न पूजा कर शुचि रहते ॥
मन्त्र न जपते कभी, मुझे तब कैसे गहते ?

देव-यजन या भजन आदि में मन न लगाओ ।
हो जब यों अपवित्र, मुझे तब क्यों छू पावो ?"
बोले यों तब नृपति "प्रिय मुझको अपनाओ ॥
शैवी पंचाक्षरी-मन्त्र-विधि मुझे सिखाओ ॥

हूं विद्या-विध्वस्त, पाप में नित्य लीन हूं ।
तव रति हित हे प्रिये ! पुनीते ! तदपि दीन हूं ॥"
दे सकती उपदेश न मैं, मम गुरु तुम जब हो ।
नाथ ! चलो तुम गर्ग-निकट सिधि कारज सब हो" ॥

यों कर निश्चय, गये गर्ग के आश्रम दोनों ।
गुरु-पद पर रख शीश विनय से बोले दोनों ॥
प्रीति दिखा, निज किया नृपति ने गुरु को अपना ।
सविनय फिर यों किया प्रगट सुमनोरथ अपना ॥

" हे गुरुवर करुणार्द्र ! कृपा अब मुझ पर करके ।
राज-प्रमदवश किये अघों को मेरे हर के ॥
शैवी पंचाक्षरी सुविद्या मुझे सिखाओ ।
हे विद्वद्वर मुने ! मुझे कृतकृत्य बनाओ ॥"

प्रार्थित हो मुनि गर्ग विप्र-पुङ्गव प्रसन्न हो ।
राजा को ले साथ कलिन्दी-तटासन्न हो ।
शुभ तरु-तल फिर बैठ, तीर्थ-जल से नहला कर ।
शिव-पद पावन पूज, पूर्व की ओर बिठा कर ॥
नृप-शिर पर कर फेर शिवात्मक मंत्र दान दे ।
सविधि कियां उपदेश, शुभाशिष दिया ध्यान दे ॥

गुरु-कर के सम्पर्क तथा उस मंत्र-शक्ति से ।
निकल गये शत कोटि काग उस नृपति-व्यक्ति से ॥
गिरे भूम पर किन्तु, जल गये थे पर उनके ।
कोस रहे थे, क्योंकि जल गये थे तन उनके ॥
वायस कुल का दाह देख यों, अरु मर जाना ।
नृप-महिषी ने बहुत हृदय में अचरज माना ।
पूछा यों "क्यों मुने ! हुई यह बात आनोखी ।
कैसे वायस कढ़े देह से मानव-पोषी ।
विस्मय है क्यों गिरा काग-कुल यां जल जल कर ।
क्या है नाथ ! रहस्य, क्यों न ये उड़े निकल कर ॥"
बोले यों मुनि, "सुनो नृपति मैं भेद बताऊँ ।
जो है सत्य रहस्य उसे मैं तुम्हें सुनाऊँ ।

क०—पापन सों पापी योनि मिलति है पाप भरी,
पुन्य-पाप समता सों होत हैं सुनर ये ।
पुन्यन सो पुन्य योनि, पाई निज पुन्यन सों,
तैने नर देह,-पाये सुन्दर सुघर ये ॥
रे नृप ! हजार भव योनि में भ्रमत तव,
संचित भये ते पाप पूरन निकर* ये ।
भाषत "रसाल" पाय शैबी-मंत्र, तेरे अघ,
काक रूप जरि, गये मन ते निकर ये ॥

दो०—निकरि जरे अघतव सकल, लखि पंचाच्छर मंत्र ।
अब या शुचि रानी सहित, राजा रनहु स्वतंत्र ॥
होकर विस्मित चित्त, लौट दोनों घर आये ।
गुरु सुकृपा से सभी मनोरथ निज भर पाये ॥

---

*समूह ।

राजा ने हो मुदित रानि को अङ्क लगाया।
　　मंजुल मृदुल शरीर मलय सा शीतल पाया॥
हुआ पूर्ण संतोष, दोष सब हट जाने पर।
　　तब मन पावन हुए कलुषता मिट जाने पर॥
वेद-पुराण सुशास्त्र-मान्य यह मन्त्र मनोहर।
　　पावन चित के लिए सुखद है सदा पापहर॥

छं०—उत्तम रमणी अपने पति के।
　　　　सब दोषों को इसी प्रकार।
　　करके दूर चतुरता से निज
　　　　कर सकती है पूर्ण सुधार॥
　　हीन-चरित्र पवित्र बना कर,
　　　　कर सकती सुखमय जीवन।
　　इसीलिए सज्जन कहते हैं,
　　　　गृहणी को सर्वोत्तम धन॥
　　पाकर उसके दिव्य गुणों की,
　　　　कान्ति तथा उसका सत्सङ्ग॥
　　विमल मनोहर हो जाता है
　　　　कलुषित नर का दूषित अङ्ग॥
　　आशा है उपरोक्त कथा से
　　　　बहनें लेकर के उपदेश॥
　　कर सुखमय दम्पति-जीवन को
　　　　सदा सुधारेंगी निजदेश❀॥

❀"सुहागरात" के ही लिए अनुवादित।

स्त्रियों के नाश के कारण

"पितृ सदन निवासः सङ्गतिः पुंश्चलीभिः !
प्रवसनमथ रोगो वार्द्धकं चापि पत्युः ॥
वसतिं परपुंभिः दुष्टशीलैरवश्यं
क्षतिरपि निजवृत्तेर्योषितां नाश हेतुः ॥"*

(अनङ्ग रङ्ग)

---

†स्वातन्त्र्यं पितृमन्दिरे निवसतिर्यात्रोत्सवे सङ्गति-
र्गोष्ठी पूरुषसन्निधावनियमो वासो विदेशे तथा ॥
संसर्गः सह पुंश्चलीभिरसकृद्वृत्तेर्निजाया क्षतिः ।
पत्युर्वार्द्धकमीर्षितं प्रवसनं नाशस्य हेतुः स्त्रियाः ॥

(रति-रहस्ये)

---

*पिता के गृह में निवास, पुँश्चली (दुश्चरित्रा) की संगति, प्रवास, रोग, पति की वृद्धावस्था, पर पुरुष का साथ, दुष्टों का साथ, परवशता और जीविका का नाश यह सब स्त्रियों के नाश के कारण कहे गए हैं।

†पिता के घर में स्वतंत्रता, यात्रा और उत्सव आदि के समय औरों का साथ, पुरुषों के समीप गोष्ठी, विदेश में अनियमित वास, कुटनियों का निरंतर संसर्ग और बहुत दिनों तक पति से अलग रहना, ये सब बातें स्त्री के विनाश के हेतु हैं।

*अतिगोष्ठह्यङ्कुश विगमौ, व्यभिचारो वा तथास्य कान्तस्य
निर्यन्त्रणं च पुरुषैस्तद्वद्वासी विदेशेषु ॥
वृत्तेस्तथोपघातः स्वीयायाः स्वैरिणीषुसंसर्गः ।
ताहि स्वभावयोजनमेतद्यात्राचरंत्येव ॥

(कन्दर्प चूड़ामणि)

गर्भ में लड़का है या लड़की ?

"सव्यांगचेष्टा पुरुषार्थिनी स्त्री स्त्री स्वप्न पानाशनशील चेष्टा ।
सव्यांग गर्भानच वृत्तगर्भासव्य प्रदुग्धा स्त्रियमेवसूते ॥
पुत्रन्त्वतोलिङ्गविपर्ययेण व्यामिश्रलिङ्गा प्रकृतिं तृतीयाम् ।
गर्भोपपत्तौ तु मनः स्त्रियायंजन्तुं व्रजेत्तत्सदृशं प्रसूते ॥'

(सुश्रुत)

गर्भाधारण हो जाने के अनन्तर जो स्त्री वामअङ्ग से अधिक काम करे, जिसका वाम अङ्ग अधिक भारी हो या जो वाम अंग का अधिक उपयोग करे, जिसको पुरुष संग की इच्छा होती हो, खाने पीने की इच्छा होती हो, जिसको निद्रा अधिक आती हो, जिसके वाम भाग में गर्भ का लक्षण हो, और गर्भ लम्बा सा प्रतीत होता हो, वाम स्तन में प्रथम दूध का संचार हो उस स्त्री के गर्भ से कन्या उत्पन्न होगी, इसके विपरीत जिसका

---

*बहुत बातचीत, किसी तरह का अंकुश न रहना अर्थात् किसी का यम न रहना, पति का अत्यंत व्यभिचार अथवा पति की ओर से अधिक नियंत्रण या उदासीनता, पर पुरुषों का सहवास, विदेश में वास, जीविका-रहित हो जाना स्वेच्छाचारिणी स्त्रियों के साथ संसर्ग आदि सब बातें पतिव्रता स्त्री के भी व्यभिचारिणी होने में कारण हो जाते हैं।

दाहिना अंग भारी हो, जिसके दाहिने स्तन में दूध का पहिले संचार हो, दाहिने भाग में गर्भ प्रतीत हो उसके गर्भ से पुत्र ही उत्पन्न होगा।

(सुश्रुत)

कुछ प्रवीण लोग गर्भवती स्त्री के सामने से निकल जाने पर केवल उसे देख कर, यह बतला देते हैं कि उसके गर्भ से पुत्र या पुत्री होगी, कुछ लोग इसी तरह से गर्भवती के पद-चिन्हों को देख कर यह बतला देते हैं कि गर्भवती के लड़का होगा या लड़की।

पति का चुनाव

["कामसूत्र" से]

(१) 'कन्या को चाहिए कि वह उस पुरुष से विवाह करे जिसको वह अपने सुख का आश्रय, अनुकूल और वशीभूत समझे।'

(२) 'अपने कुटुम्ब का पालन कर सकने योग्य, कलाओं के ज्ञान से शून्य दरिद्र पति भी अच्छा है यदि वह अपने वश में हो। किन्तु कला ज्ञानवाला भी धनी पति अच्छा नहीं यदि उसके अन्य स्त्री हो।'

(३) 'प्राय: करके धनियों के बहुत सी स्वच्छंदचारिणी स्त्रियाँ होती हैं। बाहर के उपभोगों के होते हुए भी आंतरिक सुख उनको उपलब्ध नहीं होते।'

(४) 'नीचकुल में जिसका जन्म हो, जो वृद्ध हो और जो सर्वदा विदेशों में घूमता रहता हो, उससे कदापि विवाह न करे।'

(५) 'जो स्वेच्छाभियुक्त हो, जो दम्भी और जुआरी हो, जो सपत्नीक हो अथवा जो संतानवाला हो उससे भी विवाह न करे।'

(६) 'यदि वरण करने वाले समान गुणशील युक्त हों, तो उनमें से जिसमें अधिक प्रेम हो उससे विवाह करे।'

शील समस्त ऐश्वर्यों का मूल है

[ले०—गो० नैनाराचार्यु लु० मैसूर]

पूर्व काल में एक बार प्रह्लाद तीन लोकों को जीत कर महा विभव से प्रभुता करता था। उसे देख डाह कर इन्द्र, ब्राह्मण वेषधारी हो, प्रह्लाद के पास जा कर उनकी सेवा करने लगा। एक दिन जब ब्राह्मण वेषधारी इन्द्र की सेवा से प्रह्लाद प्रसन्न हुआ तब उस ब्राह्मण ने पूछा कि ऐ राक्षसाधीश्वर, कहो कि तुमने विभूतियों को किस बल से फतह किया। प्रह्लाद ने कहा कि हे पूज्य, शील की महिमा से ऐसी ताकत हुई। तब ब्राह्मण ने पूछा कि शील कैसा होता है। प्रह्लाद ने कहा कि समस्त प्राणियों को दया की दृष्टि से देखना, तन मन वाक् में एकता होना, सुयश कमाने के लिये कोशिश करना, नम्रता सहिष्णुता और दूसरों का भला करना इन गुणों को शील कहते हैं। ब्राह्मण ये सब बातें सुन कर कहने लगा कि हे दैत्यपति, आप धर्म के जानने वाले प्रेम तथा विश्वास के पात्र हैं। इतने दिनों से आप की सेवा करता हूँ। शरणागत का भला करना बड़ों को स्वाभाविक है। मैं गरीब ब्राह्मण हूँ। प्रार्थना करता हूं कि आप अपना शील मुझे देवें। उन्होंने महादाता होने से अपना शील उस ब्राह्मण को दान दिया। ब्राह्मण वेषधारी इन्द्र बड़ा खुश होकर चला गया। उसके बाद

कुछ देर में प्रह्लाद के बदन से बहुत ही तेजवान एक पुरुष निकल आया। प्रह्लाद ने पूछा तुम कौन हो ? उस पुरुष ने कहा कि मैं तुममें बसा हुआ शील हूं। तुमने जिस ब्राह्मण को मुझे दान दिया है उसके पास जाता हूं। इस प्रकार कह कर वह चला गया। उसके बाद और एक तेज रूप उसके देह से निकला। प्रह्लाद ने उससे भी पूछा कि तुम कौन हो ? वह बोला कि मैं धर्म हूं जिधर शील जाता है उधर जाऊँगा इस तरह कह कर वह भी चला गया। उसी तरह सत्य, व्रत और बल भी एक दूसरे के पीछे होकर सब के सब निकल गये। उसके बाद उनके बदन से और दिशाओं से छबीली एक स्त्री निकल आई। प्रह्लाद ने पूछा कि माता तुम कौन हो ? उस स्त्री ने कहा कि मैं लक्ष्मी हूं। जहाँ बल गया वहाँ जाऊँगी। तब प्रह्लाद ने कहा कि माता, क्यों जाती हो मैंने क्या अपराध किया है ? लक्ष्मी कहने लगीं कि हे प्रह्लाद, जिसने तुम से शील को माँगा है वह इन्द्र है। तुमने अपना शील दान दे दिया। जहाँ शील है वहाँ धर्म है, जहाँ धर्म है वहाँ सत्य है, जहाँ सत्य है वहाँ व्रत है, जहां, व्रत है वहां बल है। जहां बल है वहां मैं बसूंगी। शील को छोड़ने से सब ने तुमको छोड़ा दिया इस प्रकार कह कर लक्ष्मी गायब हो गईं।

(हिन्दी-प्रचारक)

दाम्पत्य जीवन का आदर्श।

(ले०—स्वामी चिदात्मानन्द)

किसी देश में धार्मिक और प्रजा-रक्षक एक राजा था। उसके राज्य में सब प्रजा सुखी थी और राजा को पिता के समान मानती थी। यद्यपि गद्दी पर बैठे उसे कई वर्ष बीत गये, परन्तु

उसने विवाह करने की इच्छा नहीं प्रकट की। प्रजा को चिन्ता थी कि यदि राजा ने विवाह नहीं किया, तो उसके पीछे राज्य का अधिकारी कौन होगा ? इसलिए सब ने राजा से साग्रह प्रार्थना की कि महाराज आप शीघ्र विवाह कीजिये और पुत्र-रत्न उत्पन्न कर हमारी चिन्ता दूर कीजिये। राजा ने कहा "तुम्हारे आदेशानुसार मैं विवाह करने को तैयार हूँ, यदि तुम लोग मुझे अपनी इच्छानुकूल रानी पसन्द करने दो।" उस देश में यह रिवाज था कि सामाजिक रीति के विरुद्ध कोई अपनी इच्छा से विवाह आदि कदापि न करे। राजा भी इस बन्धन को नहीं तोड़ सकता था। किसी अभीष्ट कन्या को अपनी धर्मपत्नी बनाने की उसकी इच्छा थी। किसी दूसरी को वह नहीं चाहता था, परन्तु ऐसा करना देश-प्रथा के विरुद्ध था। प्रजा ने जब राजा की यह बात सुनी, तो उसने विचारा कि यदि हम लोगों ने राजा को इस काम में स्वतंत्रता न दी तो वह विवाह ही न करेगा। यह सोचकर सब ने राजा की बात मान ली। अपनी प्रजा की सम्मति लेकर राजा ने आज्ञा दी कि विवाहोत्सव के लिए तैयारी की जाय। इस पर बड़े धूमधाम से तैयारी होने लगी। सेना सुसज्जित की गई और देश के बड़े बड़े आदमी मन्त्री और मान्य कर्मचारी लोग बहुमूल्य वस्त्र भूषणों से सज कर तैयार हो गये। रत्नादि से अलंकृत राजा भी इस जलूस के बीच में हाथी पर सवार होकर चले। महाराज की आज्ञानुसार सब को राजपथ छोड़ जङ्गलों और बनों में जाना पड़ा बहुत दूर जाने पर सब लोग कहने लगे "क्या राजा वृक्षों या पत्थरों से विवाह करेगा, जो इधर जा रहा है ?" चलते चलते एक बन में एक कुटिया दिखाई दी, जिसके निकट एक वृक्ष और लताओं से सुशोभित मनोहर जलाशय था उस सुन्दर प्राकृतिक वाटिका की एक वृक्ष की डाल में एक झूला लटक रहा था और उसमें एक वृद्ध पुरुष

लेटा हुआ था। एक बड़ी रूपवती कन्या उस झूले को झुला रही थी।

गद्दी पर बैठने के पहले कई बार राजा ने इसी बन में इस कन्या को इस वृद्ध की सेवा करते देखा था। अपने पिता की सेवा के लिए सब प्रकार के सुखों की सामग्री वह तैयार कर देती थी और सेवा का सब कार्य करते हुए भी वह सदा प्रसन्न रहती थी। वह बुलबुल की भांति मनोहर स्वर से गाती थी। इस कन्या का यह भाव देख राजा ने अपने हृदय में निश्चय कर लिया था कि यदि कभी विवाह करूंगा तो इसी कन्या से। जब यह बारात कुटिया की ओर आ रही थी, तो कन्या ने अपने वृद्ध पिता से पूछा कि यह सेना कहां जा रही है? तब बूढ़े ने कहा कि कोई राजा किसी राज-कन्या को वरने के लिए किसी दूर देश को जा रहा है। इतने में ही राजा के आज्ञानुसार जलूस कुटिया के सामने ठहराया गया। राजा हाथी से उतर कर बूढ़े के पास गया और उसके चरणों में प्रणाम कर ज़मीन पर बैठ गया।

बूढ़े ने पूछा "बेटा यहां कैसे आना हुआ और मुझ से क्या चाहते हो?" राजा ने विनय पूर्वक कहा "पिता जी! आप मुझे अपना जामाता बनने का सौभाग्य दीजिये।" बूढ़े का हृदय आनन्द से उछलने लगा, परन्तु ठीक निश्चय करने के अभिप्राय से उसने राजा से कहा "बेटा, तुम्हें शायद यह नहीं मालूम कि हम लोग बहुत दरिद्र हैं। वन के फल मूल खाकर अपना जीवन बिताते हैं और जाति के भी हीन हैं।" राजा ने कहा "महाराज मुझे धन-सम्पति की आकांक्षा नहीं है मैं तो इस कन्या रत्न को ही चाहता हूं।" बूढ़े ने कहा "यदि तुम यही चाहते हो, तो मैं अपनी कन्या को तुम्हें देता हूं। राजा ने यह बात सुन कर उस बालिका को बहुमूल्य वस्त्र तथा रत्न पहनने को दिये। वस्त्रा-भूषण पहन कर उसने अपने पुराने फटे वस्त्रों को खाली पिटारी

में रख दिया। राजा ने बूढ़े के सेवार्थ एक सेवक वहाँ छोड़ दिया और सब लोग राजधानी को लौट आये। नगर में पहुँच, राजा ने अपनी रानी समेत राजभवन में प्रवेश किया और दोनों पति-पत्नी आनन्द से रहने लगे।

पहिले तो मन्त्री आदि ने एक निम्न श्रेणी की कन्या का महारानी होना पसन्द नहीं किया, क्योंकि वह लोग चाहते थे कि राजा किसी बड़े मन्त्री की कन्या का पाणि-ग्रहण करता वा किसी राज-कन्या से विवाह करता, परन्तु उस रानी ने थोड़े ही दिनों में अपने सरल स्वभाव, निष्कपट और प्रेममयी हृदय के प्रभाव से सब को मोहित कर लिया। धीरे धीरे सब लोग उससे प्रेम करने लगे। वह सदा शान्त चित्त रहती, किसी संकट के समय भी चित्त को उद्विग्न नहीं करती थी। एक वर्ष पीछे उसे एक कन्या पैदा हुई, जो बड़ी सुन्दरी थी। उसके जन्म से राजा और रानी बड़े प्रसन्न थे। तीन-चार वर्ष बीत जाने पर राजा ने रानी से कहा "प्रजा में बड़ी हलचल मच रही है, सम्भव है राज्य में उपद्रव हो जाय।" रानी ने जब इसका कारण पूछा तो राजा ने कहा "जब से मैंने तुम्हें अपनी रानी बनाया है, तभी से मन्त्रीगण ईर्षा करते हैं, वे चाहते हैं कि मैं किसी उच्च कुलोत्पन्न राज-कन्या या किसी बड़े मंत्री की कन्या से विवाह करूं। इसी कारण से वे लोग बड़े असन्तुष्ट हैं। दशा भयङ्कर होती जा रही है। मैं इसी चिन्ता में रहता हूं कि क्या उपाय करूं जिससे उपद्रव न बढ़े। बहुत सोचने पर मैंने यही निश्चय किया है कि इस कन्या का बध करा दिया जाय, क्योंकि असन्तोष का कारण यही है कि राज्य का अधिकारी कोई नीच कुलत्पन्न सन्तान न हो।" रानी ने कहा "महाराज आप जानते हैं कि जब से मैं यहां आई हूं, मुझे आप के साथ राज्य भोगने की कभी इच्छा नहीं हुई। मैंने तो अपनी इच्छा और मनोवृत्ति सब को आपकी इच्छाओं में लीन कर दिया

है, मेरा व्यक्तित्व आपके व्यक्तित्व में लीन हो चुका है। यदि आपको यह आशा है कि इस कन्या के बध से प्रजा सन्तुष्ट होगी, तो इसमें भी मुझे कुछ आपत्ति नहीं है, मैंने कभी इस कन्या को अपनी करके नहीं माना।" रानी के इन पातिव्रत धर्म से भरे हुए वचनों को सुनकर राजा मुग्ध हो गया, परन्तु राज्य के भले के वास्ते उसने उस कन्या को ले जाकर बधिक को दे दिया। इस घटना से भी रानी को कुछ शोक न हुआ, वह नित्य की तरह शान्त रही, मानो कुछ हुआ ही न हो।

एक वर्ष पीछे राजा को एक पुत्र पैदा हुआ। इस बालक को सब प्यार करते थे, परन्तु यह भी जब तीन चार वर्ष का हुआ तो पहिले ही जैसा कोलाहल मचने लगा, राजा ने फिर यही निश्चय किया कि इस बालक को भी मरवा देना ही उचित होगा। जिससे देश में शान्ति बनी रहे। रानी से फिर इस कार्य के लिए सम्मति मांगी गई, तो उसने फिर बड़े प्रसन्नता से कहा "मेरी आत्मा देश की आत्मा में अन्तर्हित है, मेरा अपना कुछ भी नहीं है। मैं सूर्य-देव की भांति देना ही जानती हूं। हम दोनों का कर्तव्य सूर्य भगवान की तरह कुछ ग्रहण न करते हुए भी प्रदान करना ही होना चाहिए। जब हमारे मनों में किसी वस्तु के प्रति आसक्ति न होगी, तो हमारे वास्तविक आनन्द को कोई नहीं छीन सकता।" तदुपरान्त कुछ काल पीछे तीसरा पुत्र उत्पन्न हुआ और वह भी पहले की तरह बधिक को सौंप दिया गया। रानी के सदा प्रसन्न रहने का रहस्य उसकी नित्य की मननशीलता ही थी। जब से वह राज महल में आई थी, नित्य प्रति एक एकान्त घर में जाकर अपने बहुमूल्य वस्त्राभूषण उतार पिता के घर से लाए हुए फटे पुराने वस्त्र पहन कर विचारा करती थी कि बाहर का कोई आडम्बर मेरी आत्मा को तो स्पर्श नहीं कर गया। शरीर पर मूल्यवान वस्त्राभूषण धारण करना या फटे पुराने वस्त्र पहनना

दोनों बराबर हैं। मुझको हानि-लाभ कुछ नहीं, उस राज-भवन में कैदी की भांति रहने की अपेक्षा वह बन की स्वतन्त्रता को ज्यादा पसन्द करती थी। जहां वह कोयल की तरह गाती उछलती कूदती फिरती थी। इस प्रकार उसने राज्य सम्पत्ति से सदा अपनी आत्मा को निर्लिप्त बनाए रखा। यही उसके सदैव प्रसन्न रहने का कारण था।

एक दिन राजा रानी के पास जाकर कहने लगा "इस प्रकार अपने बच्चों को नष्ट कराते जाना उचित नहीं और मेरी इच्छा किसी उच्च कुलोत्पन्न बालक को गोद लेने की भी नहीं है, परन्तु प्रजा के हितार्थ राज्य का उत्तराधिकारी पुत्र अवश्य होना चाहिए, इस हेतु मैंने यही निश्चय किया है कि किसी राज-कन्या से विवाह कर लूँ, तो उससे जो सन्तान उत्पन्न होगी, उससे सब प्रसन्न होंगे और देश में शान्ति स्थापित हो जायगी।" रानी ने प्रसन्नता पूर्वक राजा को दूसरा विवाह करने की सम्मति दे दी। राजा बोला "यदि तुम इस देश में रहीं, तो संभव है कि फिर उपद्रव मचे। इससे यही भला है कि तुम अपने पिता के घर चली जाओ।" रानी आनन्द पूर्वक जाने को सहमत हो गई और राजा के दिये हुए गहने कपड़े उतार अपने पुराने कपड़े पहन बन में चली गई और राजा से कह गई कि महाराज यदि कभी इस दासी को सेवा की जरूरत पड़े तो बिना संकोच मुझे बुला लेना*। पिता के घर पहुँच कर उसने सेवक

---

*पत्नी का धर्म ऐसा ही है किन्तु पति का भी धर्म इसी तरह से पत्नी के लिए त्याग करना है। इस कथा का मर्म यह है कि पत्नी पति के हृदय को जानती थी और उसे यह विश्वास था कि राजा उसी से प्रेम करते हैं, किसी दूसरी स्त्री को नहीं जानते किन्तु राजा के प्रजानुरंजन धर्म से विवश हैं जैसे राम सीता का त्याग करने को विवश हुए थे।

को राजा के पास वापस भेज दिया और पहले की तरह फिर स्वयं पिता की सेवा करने लगी।

एक दिन राजा अपनी महारानी की दशा देखने बन में गया, तो उसने देखा कि वह पूर्ववत् अपने पिता की सेवा में लगी हुई है। राजा ने उससे पूछा "प्रिये, क्या तुम नई रानी का स्वागत करने राज-भवन में चलोगी ?" वह तैयार हो गई और राजा के साथ महल में आ गई। यहाँ पहुँच कर उसने, नई बधू के स्वागत का प्रबन्ध ऐसी सुन्दरता से किया कि सब मुग्ध हो गये। नयी रानी बड़े ठाठबाट से सेना सहित नगर में आई अपने साथ बहुत भारी दहेज लायी थी। महारानी ने अपने महल में न[illegible] का स्वागत बड़ी प्रसन्नता और सुन्दरता से किया और माता की तरह उसका मुह चूम कर आलिङ्गन किया। महल में आई हुई सब महिलायें नयी रानी की सुन्दरता देख बड़ी प्रसन्न थीं, परन्तु वे महारानी की आत्मिक सुन्दरता से और भी अधिक चकित थीं। नई रानी अपने साथ अपने दो भाइयों को भी लाई थी। लोग महारानी के अद्भुत गुण स्वभाव को देख कर बड़ा पश्चात्ताप करने और रोने लगे। सभी कह रहे थे "अहो हमने महारानी के अपूर्व गुण न देख कर इतना पाप किया, हमारी मूर्खता पर धिक्कार है !" तत्पश्चात् नयी रानी के स्वागत का सब कार्य जब समाप्त हो गया, तो महारानी ने वहाँ एकत्रित मन्त्रीगण तथा प्रजावर्ग से अपने पिता के घर जाने की आज्ञा मांगी। महारानी ने राजा से कहा "महाराज, मैं सदा आपकी दासी हूं, जब कभी फिर मेरी सेवा की जरूरत हो याद कर लीजियेगा।" लोगों का प्रेम महारानी से इतना बढ़ गया था कि सब फूट फूट कर रोने लगे और कहने लगे "महारानी तुम दरिद्र की पुत्री नहीं हो तुम तो साक्षात् स्वर्गीय देवी हो, हमारे घोर अपराधों को क्षमा करो।" नववधू को जब यह मालूम हुआ कि

महारानी के दो पुत्र और एक कन्या मरवा दिये गये हैं तो उसे महान दुःख हुआ। जब सब लोग पश्चाताप करते हुए दुःख सागर में निमग्न थे, तो राजा ने सब को सम्बोधन करके कहा "देखो! तुम सब लोग रो रहे हो, केवल महारानी ही शान्त है। मैं भी रो रहा हूं, मेरे हृदय में दुःख भी है और आनन्द भी! मैं तुम्हें कुछ दोष नहीं देता, तुम मेरे पुत्र हो। मेरी आंख आंसुओं से भर रही है, परन्तु यह दुःख के विन्दु नहीं, आनन्द का जल उमड़ रहा है। राजा ने महारानी से कहा कि "प्रिये, इस देश में तुम ही केवल प्रसन्न और सुखी हो, क्योंकि तुम्हारा चित्त प्रत्येक दशा में एक रस रह कर विचलित नहीं होता। मैं एक हर्ष सम्वाद तुम सबसे कहना चाहता हूं। यह कन्या जिसे तुम मेरी रानी बनाने के लिए लाये हो, मेरी और महारानी की पुत्री है और इसके दोनों भाई हमारे पुत्र हैं। जब यह तीनों वध करने के हेतु वधिक को दिये गये थे, तो वह इनको बिना मारे दया करके देश की सीमा के बाहर ले जाकर छोड़ आया था। प्रारब्ध वश ये हमारे निकटवर्त्ती राजा के पास किसी तरह पहुँच गये। सन्तानहीन होने के कारण राजा ने इन्हें अपनी सन्तान बना लिया। इन बच्चों के रूप लावण्य को देखकर उन्होंने निश्चय कर लिया था कि ये किसी अच्छे घराने के हैं। तुम लोग किसी राज्य कन्या से मेरा विवाह कराना चाहते थे और तुम लोग भी ढूंढ़ कर इस कन्या को मेरी रानी बनाने के लिए लाए, परन्तु विधाता को मेरी सन्तान से मुझे फिर मिलाना था, इसीलिए ऐसी घटना स्वयं हो गयी। यह सब बातें मैंने तुम्हें बता दी, अब तुम्हारी जो इच्छा हो करो।"

महाराज की यह बात सुन सब उपस्थित लोगों को बड़ा आनन्द हुआ। उन लोगों ने हाथ जोड़ कर महाराज और महारानी से प्रार्थना की कि अज्ञानता वश हम लोगों से बहुत बड़ी

भूल हुई; अब हमारे अपराधों को क्षमा कीजिये। महारानी माता समान हमारा पालन करें। इन्हीं की सन्तान राजगद्दी की अधिकारी होगी, आप जैसे प्रजापालक राजा और साक्षात जगन्माता महारानी को पाकर हम लोग धन्य हैं।

दाम्पत्य जीवन का यही आदर्श है। इसी को पातिव्रत और पत्नीव्रत धर्म कहते हैं। पति और पत्नी दोनों एक दूसरे में साक्षात् ईश्वरीय शक्ति का अनुभव करते हैं। 'एक जान दो कालिब' (देह) की कहावत इसी आदर्श में घटती है। पति पत्नी अपने अपने व्यक्तित्व को एक दूसरे में लीन कर, जब अभेद हो जाते हैं, तब अनुपम स्वर्गीय सुख और शांति का अनुभव करते हैं। यही विश्वप्रेम की सीढ़ी है। विश्वप्रेम से ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति होती है। जीवन का अन्तिम आदर्श यही ब्रह्म का साक्षात्कार है। दाम्पत्य जीवन में धैर्य, सहिष्णुता, स्वार्थ रहित प्रेम और त्याग की परम आवश्यकता है, बिना इन गुणों को अपने जीवन में दृढ़ीभूत किये इस आदर्श पर पहुँचना असम्भव है। इन गुणों को दृढ़ता से अपने जीवन में धारण करना बिना भली भांति ब्रह्मचर्य पालन किये कठिन ही नहीं असंभव है। परन्तु खेद है कि वर्तमान अवस्था में ब्रह्मचर्य पालन तो रहा ही नहीं। यही कारण है कि सूखी जड़ वाले वृक्ष की तरह कोई आश्रम फलदायक नहीं होता। ब्रह्मचर्य पालन से ही मनोनिग्रह की शक्ति होती है, बिना आत्मनिग्रह के गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना लगाम के बिना मुहज़ोर घोड़े पर सवार होना है। ब्रह्मचर्याश्रम के इन्द्रिय निग्रह वाले कामों को पूरा करना गृहस्थाश्रम का अभिप्राय है। गृहस्थाश्रम में विषयों को नियमित रूप से भोग कर ने से उनके असली तत्व का बोध हो जाता है और मनुष्य भली भांति समझ जाता है कि इन्द्रिय-वन्हि में विषयों की आहुति देना विषय लोलुपता को प्रज्वलित करना है।

तब मन में विषय-वासना से अरुचि होकर शान्ति और आनंद प्राप्त होता है। आजकल के युवकों की तरह जीवन बिताना पवित्र गृहस्थाश्रम को कलंकित करना है। विषय-लम्पटता शरीर, मन और बुद्धि को निर्मल बना आत्मा को दूषित कर देती है। इसी से सुख शान्ति लुप्त हो जाती है। नवयुवकों का कर्तव्य है कि अपने और देश के उपकारार्थ सँयत जीवन बिताना सीखें। पाश्चात्य सभ्यता में शान्ति की खोज करना असंम्भव है। इस कुटिल मनोवृत्ति ने पश्चिम के देशों को संसार के लिए भयानक बना दिया है। भारत सद्परायण रहा है। जब तक यह देश पवित्र सत्य धर्म पर आरूढ़ था तब तक इस पुण्य-भूमि में बलवीर्य था, पुरुषार्थ था, शान्ति थी। ज्ञान की जगत् पावनी गंगा यहीं से बह कर संसार को आनन्दमय और पवित्र बनाती थी। आज यही भारतभूमि अनेक दुखों की खान बन रही है। अशान्ति ने यहाँ डेरा ही जमा लिया है। आलस्य और पुरु-षार्थ-हीनता से देश मृतक की तरह पड़ा है। जो चाहता है ठोकरें मार देता है। भारत माता की सन्तान, यदि जननी की इस शोचनीय दशा को सुधारने की कुछ भी चिन्ता हो, तो उठो अपने जीवन को धर्म-परायण बना, माता की सेवा कर, इस मनष्य जीवन का फल लाभ करो।

(समन्वय)

—:※:—

बेटी को दहेज और सीख

धनञ्जय ने विशाखा का विवाह श्रावस्ती के जैत मिगार सेठ के पुत्र पुण्यवर्धन के साथ किया। अपने राज्य में नए आए हुए महाजन को सम्मानित करने के लिए कोसलराज स्वयं बरात में गए। मिगार ने धनञ्जय से पहले ही पुछवाया "राजा और उनकी सेना बरात में आने वाली है। आप इनका सेवा-सत्कार तो कर सकेंगे न ?" धनञ्जय ने चटपट जवाब दिया, एक नहीं दस राजाओं को बुलाते आइयेगा। श्रावस्ती में चौकीदारी के लिए जितने आदमियों की जरूरत थी उतने को छोड़ कर श्रावस्ती के सब आदमियों को बरात में मिगार भी लेते आए। इस महाजन मण्डली को एक जगह जमा करानेवाली तो विसाखा थी। धनञ्जय ने बरात को चार महीने रोक रखा।

दहेज में धनञ्जय ने ५०० गाड़ी सोना, ५०० गाड़ी सोने की चीजें; ५०० गाड़ी चांदी के बरतन; ५०० गाड़ी तांबे के बरतन, ५०० गाड़ी खादी, ५०० गाड़ी घी, ५०० गाड़ी चावल और ५०० गाड़ी हल, कुदाली वगैरह हथियार दिए। ५०० रथ और १५०० दासियाँ दीं।

अब धनञ्जय के मन में हुआ कि लड़की को गायें दूँ। अपने आदमियों से उन्होंने कहा, जाओ छोटा व्रज (गोशाला) खोल दो। एक एक गाँव के अन्तर पर तीन नगारे लेकर खड़े रहो। १४० हाथ की जगह बीच में छोड़ कर दोनों किनारे खड़े रहो। इससे आगे गायों को मत जाने देना। जब तुम लोग ठीक खड़े हो जाओ तब नगारे बजाना। आदमियों ने ऐसा ही किया। चौड़ाई में १४० हाथ से अधिक नहीं फैलने दिया। यों लम्बाई

में तीन गाँव और चौड़ाई में १४० हाथ के मैदान में एक दूसरी से देह रगड़ती हुई गायें ठसाठस भर गयीं। धनञ्जय ने कहा मेरी बेटी के लिए इतनी गायें बहुत हैं। अब दरवाज़ा बन्द कर दो। यह कहकर सेठ ने दरवाज़ा बन्द करा दिया। कथाकार लिखते हैं कि दरवाज़ा बन्द करते करते भी दूसरी ६०००० और गायें, ६०७७० और बैल और ६०००० और बछड़े निकल पड़े*।

विशेष में इस धन के दहेज के अलावा सेठ ने अधिक महत्व-पूर्ण दहेज के रूप में लड़की को दस सिखावन दिए:—"देख बेटी, ससुराल की होकर अपने अन्दर की अग्नि बाहर मत निकालना (ससुराल वालों का दोष दिखाई दे तो दूसरों के आगे उसकी बात मत चलाना) बाहर की आग भीतर मत लाना (पड़ोसी अगर ससुरालवालों को उल्टी सीधी कहें तो घर आकर यह न कहना कि फलां तो आपके बारे में यह कहता था) जो दे उसी को देना (कोई कुछ माँगने आवे तो तभी देना जब वह फिर लौटा जाय) जो न दे उसे न देना (मँगनी की चीज़ जो न लौटावे उसे न देना (सगे सम्बन्धी फिर कर लौटावें या न लौटा सकें, मगर तौ भी उन्हें देना) ठिकाने से बैठना (सास ससुर को देखकर उठने के मौके पर बैठना) ठिकाने से खाना (बड़ों के खा लेने के बाद खाना) ठिकाने से सोना (बड़ों के सोने के बाद सोना) अग्नि की परिचर्या करना (बड़ों की सेवा करना) गृहदेवता को प्रणाम करना (बड़ों को देवता के समान समझना।)

किसी दिन मिगार सेठ भोजन कर रहे थे। बिशाखा ने उसी समय कहा:—

---

*जिस भारत में एक महाजन इतना सहज में दान कर देता था आज उसी देश के निवासियों को भोजन नसीब नहीं होता।

'बाबूजी, आप रोज रोज बासी खाना क्योंकर खाते होंगे ?

'इसे बासी कौन कहेगा बहू ? यह तो तुम मुझे गर्मा-गर्म रोटी के फुल्के बना बना देती हो। यह बासी कैसे हुआ ?

देखिए बाबूजी; पूर्वजन्म के पुण्यफल से इस जन्म में आप सुखी हैं मगर इस जन्म में आप कोई दान-पुण्य नहीं करते। इसलिए मैं कहती हूँ कि आप पुराना ही पुण्य भोग रहे हैं।

(हिन्दी-नवजीन)

—